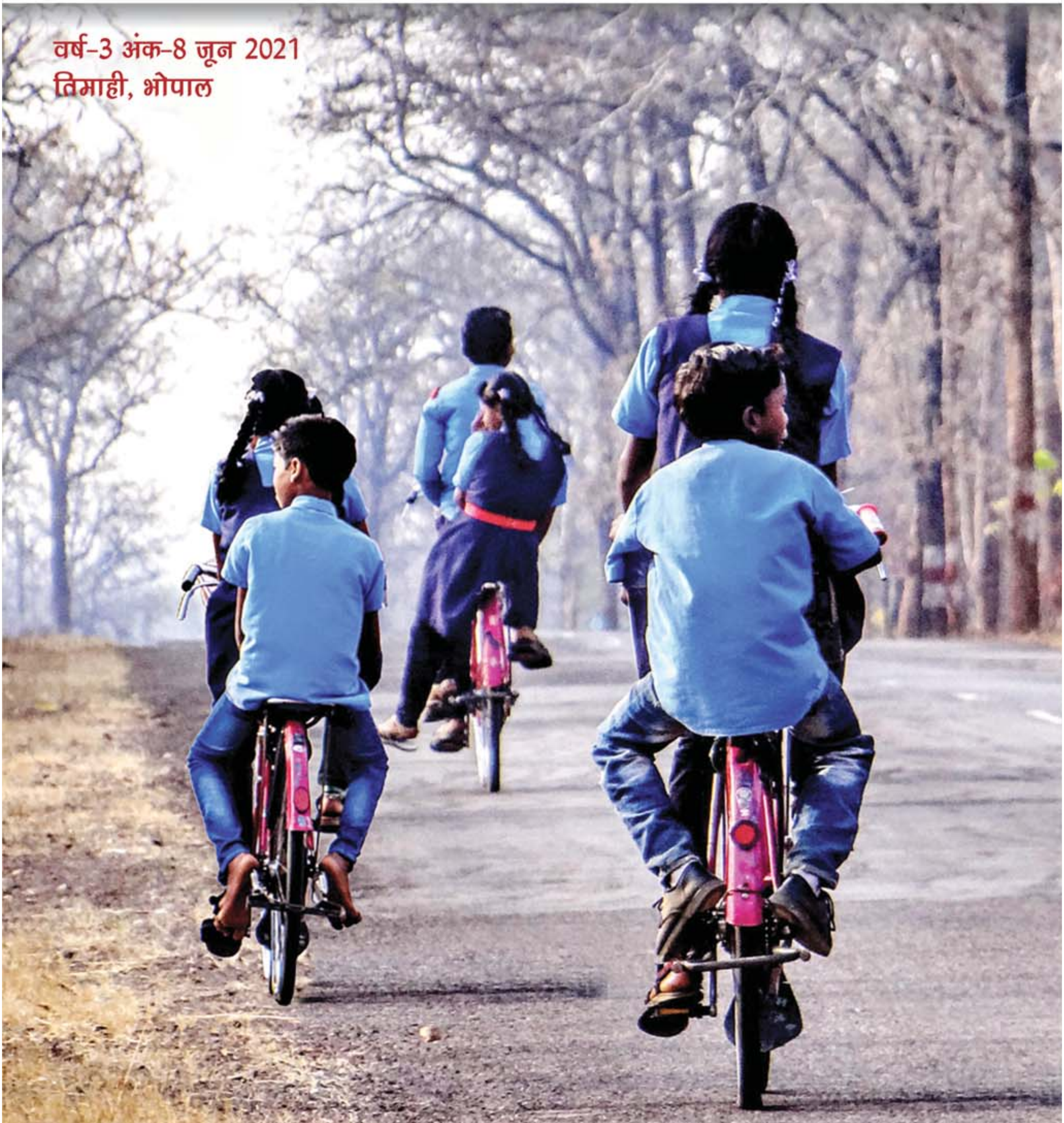
RNI No.: MPHIN/2018/77137
ISSN 2582-483X

पाठशाला
भीतर और बाहर

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

वर्ष-3 अंक-8 जून 2021
त्रिमाही, भोपाल



पाठशाला भीतर और बाहर

जून, 2021 (वर्ष 3, अंक 8)

प्रकाशक

Azim Premji University

- **अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय**
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
  सरजापुरा, बैंगलूरु 562125 कर्नाटक
  Web: www.azimpremjiuniversity.edu.in

सम्पादकीय कार्यालय

- **सम्पादक**
  पाठशाला भीतर और बाहर
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव
  सोसायटी, ई-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा,
  भोपाल, म.प्र. 462039 फोन-0755-4074060
  pathshala@apu.edu.in
  gurbachan.singh@azimpremjifoundation.org
  मो. 8226005057

डिज़ाइन एवं प्रिंट

- **गणेश ग्राफिक्स,**
  26-बी, देशबंधु परिसर,
  प्रेस काम्प्लेक्स,
  एम.पी.नगर, जोन-1
  भोपाल, म.प्र. 462011
  ganeshgroupbpl@gmail.com
  मो. 9981984888

पाठशाला भीतर और बाहर पत्रिका, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन का हिन्दी प्रकाशन है। यह शिक्षकों, शिक्षक प्रशिक्षकों, अन्य ज़मीनी कार्यकर्ताओं व शिक्षा से सरोकार रखने वाले सभी व्यक्तियों और संस्थाओं के लिए विचार-विमर्श का एक मंच है। पत्रिका का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों के अनुभवों व आवाज़ को जगह देकर शिक्षा के विमर्श को गहन व यथार्थपरक बनाना है।

अनुक्रम

पत्रिका में छपे लेखों में व्यक्त विचार और मत लेखकों के अपने हैं।
अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

सम्पादकीय

2021 अप्रैल में फिर से देश में तालाबन्दी होगी, ऐसी कल्पना नहीं थी। मार्च में लगने लगा था कि धीरे-धीरे स्कूल भी खुल पाएँगे, परन्तु दूसरी लहर के कारण पुनः लॉकडाउन हुआ और आगे का समय फिर से पूर्णतः अनिश्चित हो गया। बीते सवा साल के लम्बे कोरोना काल ने स्वास्थ्य, रोज़गार, आजीविका और शिक्षा जैसे पहलुओं को गहनता से प्रभावित किया। इस पूरे दौर में स्कूल बन्द ही रहे। बच्चे मानो अपने घरों में लगभग बन्द से हो गए। स्कूल बन्द हैं और दोस्तों से मुलाक़ात एवं खेलना भी बन्द है। उनकी आज़ादी पर तो पूरा अंकुश है ही, पर इसके साथ-साथ बहुत-से बच्चों ने निकट से इस बीमारी और इसके तनाव को भी महसूस किया है। कईयों ने विस्थापन और विपन्नता के चलते भूख का भी सामना किया है। इस दौर में बचपन मानो सिमटकर रह गया है।

बच्चों के लिए स्कूल एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके बन्द होने से बच्चों की शिक्षा और उनका पूरा बचपन प्रभावित है। स्कूल बच्चों के लिए केवल पढ़ने-पढ़ाने की ही नहीं बल्कि अपने हमउम्र और बड़े दोस्तों से मिलने की, एक दूसरे से बातचीत करने, खेलने और घर से निकलने की भी जगह है। स्कूल में कई मौक़े ऐसे होते हैं जहाँ बच्चे पूरी तरह आज़ाद होते हैं। तनावों और टोकाटाकी से मुक्त, चाहे वह स्कूल तक साथ-साथ आने-जाने का समय हो, या मध्याह्न भोजन का, या फिर साथ-साथ पानी पीने जाने या खेलने का समय हो, स्कूलों के बन्द होने ने पूरे समाज को यह काफ़ी अच्छी तरह से महसूस कराया है कि स्कूल बच्चों की शिक्षा के लिए ही नहीं बल्कि उनके मानसिक, शारीरिक और सामाजिक विकास के लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

स्कूलों के बन्द होने ने बच्चों को किस-किस तरह प्रभावित किया है, इसपर हमारे देश और पूरे विश्व में कई अध्ययन हुए हैं। जैसे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक अध्ययन दर्शाता है कि अधिकांश बच्चे जो सीख चुके थे उसे भी, वे काफ़ी हद तक भूल चुके हैं। वे उतना भी नहीं कर पा रहे जितना पिछले मार्च लॉकडाउन के समय तक कर पाते थे। प्राथमिक कक्षाओं में हर स्तर पर ऐसा हुआ है। जो सीखा था उसे भूलकर पीछे जाने से बच्चों के ड्रॉपआउट होने की सम्भावनाएँ बढ़ सकती हैं।

तालाबन्दी के दौरान बच्चों की पढ़ाई जारी रखने के लिए सरकारों, स्वयंसेवी संस्थाओं, शिक्षकों ने कई वैकल्पिक तरीक़े प्रयोग करके देखे, जैसे– ऑनलाइन शिक्षण, समुदाय के साथ मोहल्ला कक्षाएँ, कई समूहों में घरों में पढ़ाई, आदि। इस तरह के बहुत प्रयास अलग-अलग ढंग, ढाँचों व विधियों के उपयोग से किए जा सकते हैं। इनकी सम्भावनाओं, इनमें क्या हासिल हो सकता है व इन तक बच्चों की पहुँच की सीमाओं पर भी कई शोध हुए हैं। इन शोधों में– बच्चों, शिक्षकों व पालकों– तीनों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर यही समझ आता है कि यह सभी अलग-अलग ढंग से आधे-अधूरे उपाय हैं। इन्हें कुछ समय के लिए तो उपयोग कर सकते हैं पर ये स्कूल का विकल्प नहीं हैं। लेकिन इन अनुभवों से सीखने में शिक्षक और बच्चों की भूमिका के बारे में जो सीखा गया है, उसकी मदद आगे कक्षा व स्कूल में अन्तःक्रिया रचने में लेनी होगी।

स्कूल कब पूरी तरह खुलेंगे, यह अभी कहना मुश्किल है। लेकिन यह तो है ही कि जब भी स्कूल खुलेंगे तब बच्चों की भावनात्मक, बौद्धिक और मानसिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए ही शिक्षण समेत स्कूल की सभी प्रक्रियाओं के बारे में सोचना होगा। स्कूल को ख़ुद को इसके लिए तैयार करना होगा कि कई बच्चों के साथ इनमें से कई पहलुओं पर नई तरह से और काफ़ी शुरुआती स्तर से काम करना पड़ सकता है। और इसके लिए बच्चों को या उनके अभिभावकों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

पाठशाला के इस अंक में कक्षा अनुभव और शिक्षणशास्त्र पर बहुत सारे लेख हैं। शिक्षणशास्त्र खण्ड में शामिल चार लेखों में एक लेख ***पढ़ने का सफ़र बनाम सक्रिय साक्षरता का सफ़र*** अनिल सिंह ने लिखा है। इसमें पढ़ना सीखने की प्रक्रिया के एक मॉडल की व्याख्या को प्रस्तुत किया गया है। इस व्याख्या के अनुसार पढ़ने की पूरी प्रक्रिया में पाठक चार अलग-अलग चरणों से गुज़रता है और हर इस चरण में वह अलग भूमिका निभाता है। लेख में इन चरणों और हर चरण में पाठक द्वारा निभाई जाने वाली भूमिकाओं के बारे में विस्तार से बातचीत है।

मीनू पालीवाल का लेख ***लेखन ग़लतियाँ और उनका विश्लेषण*** स्कूल में लिखना सिखाने पर है। वे बताती हैं कि स्कूल में लिखना-पढ़ना सिखाने के दौरान सिर्फ़ शुद्धता पर ज़ोर रहता है और ऐसे में बच्चों का स्वतंत्र लेखन बाधित होता है। वे लिखने के सन्दर्भ में स्कूल में अपनाए जाने वाले तरीक़ों का संक्षिप्त वर्णन देते हुए बताती हैं कि किस तरह ये तरीक़े मददगार न होकर लिखना सीखने को बाधित ही करते हैं। वे लिखना सिखाने में ऐसे मसले जिनको शिक्षक को जानना चाहिए, आगाह भी करती हैं कि शिक्षक बच्चों को लिखना सिखाने के जो भी तरीक़े काम में लें, उनका अवलोकन और समीक्षा करते रहें और उनमें ज़रूरी बदलाव के लिए हमेशा तैयार रहें।

शिक्षणशास्त्र में शामिल तीसरा और चौथा लेख पाठ्यपुस्तक के पाठों पर कक्षा में किए गए काम पर आधारित है। तीसरे लेख, ***'सुनीता की पहिया कुर्सी': पाठ की समझ और उसकी प्रक्रिया*** की लेखिका मधु रावत हैं। लेख कहता है कि किसी पाठ को पढ़ाने से पहले शिक्षक को उसके बारे में गहरी समझ बनाने की ज़रूरत है। बच्चों को अपने आसपास के इंसानों और उनकी पहचान के प्रति संवेदनशील बनाने का काम टेक्स्ट के ज़रिए कैसे हो सकता है, लेख इसका भी उदाहरण प्रस्तुत करता है।

'नन्हा फ़नकार' और सीखने के प्रतिफल अनीता ध्यानी द्वारा लिखा लेख है। यहाँ लेखिका ने पाठ योजना कैसे बनाई, कैसे अपने शिक्षण कार्य को दिनों में विभाजित किया, क्या गतिविधियाँ कीं, इनके लिए कितना समय निर्धारित किया, क्या सामग्री उपयोग में ली और आकलन कैसे किया, इस पूरी प्रक्रिया में उनकी अपनी क्या समझ बनी, आदि का सिलसिलेवार ब्योरा प्रस्तुत किया है।

परिप्रेक्ष्य खण्ड में मुकेश मालवीय द्वारा लिखी एक कहानी ***घर जाने की पूरी छुट्टी*** को शामिल किया गया है। यह कहानी स्कूल के प्रति बच्चों के लगाव को सामने रखती है। लेखक कहते हैं कि बड़े शायद ही इसपर विश्वास करें। लम्बे समय तक स्कूल बन्द होने से अब बच्चों को स्कूल याद आने लगा है। उनका मन करता है कि वे स्कूल वैसे ही जाएँ जैसे पहले जाते थे।

विमर्श खण्ड में शामिल लेख ***सिद्धान्त बनाम व्यवहार*** अनवर हुसैन का है। लेखक सीखने-सिखाने के बारे में कार्यशालाओं में साझा किए गए सिद्धान्त कक्षाओं में इस्तेमाल करने पर किस तरह की चुनौतियाँ आती हैं, और उनसे कैसे रूबरू हुआ जा सकता है, इसपर विस्तार से चर्चा करते हैं।

हमारा प्रयास रहा है कि पत्रिका में स्कूल और कक्षा अनुभव से जुड़े लेखों की संख्या बढ़े। इस अंक में कक्षा अनुभव पर आधारित सात लेख शामिल किए गए हैं।

अलका तिवारी का लेख ***बच्चे, कहानियाँ और बातचीत*** बहुस्तरीय कक्षा में कहानियों पर किए गए काम के अनुभव की प्रस्तुति है। लेख कहता है कि ठीक से उपयोग की गई कहानियाँ बच्चों को खुलकर बातचीत करना, प्रश्न पूछना, अपनी राय देना, जैसे अभ्यासों के मौक़े दे सकती हैं।

कक्षा अनुभव पर केन्द्रित दूसरा लेख ***किताबों पर बातचीत*** है। कमलेश चन्द्र जोशी किताबों की विषयवस्तु पर बच्चों के साथ अपनी बातचीत के अनुभव का विवरण प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुभव के निहितार्थ यह दिखाते हैं कि बच्चों को नियमित रूप से किताबों को पढ़ने के मौक़े देने से वे अच्छी तरह से पढ़ना सीखते हैं। पढ़ना सीखने में टेक्स्ट का सन्दर्भ बनाने से व उसे बच्चों के सन्दर्भ में रखने से उन्हें पढ़ने की शुरुआत में आसानी होती है और पढ़ना अक्षर-अक्षर जोड़कर शब्द पढ़ाना नहीं है वरन् अर्थ निर्माण कर सीखना है।

अगले लेख ***पढ़ने-लिखने की प्रक्रियाओं में बाल डायरी*** में मंजू नौटियाल ने पढ़ना-लिखना सिखाने की प्रक्रियाओं में आने वाली समस्याओं और इनसे उबरने में बाल डायरी कैसे मददगार हो सकती है, इस बारे में चर्चा की है। उनका कहना है कि डायरी बच्चों को अपनी इच्छा से, अपने द्वारा सोची गई, अपनी पसन्द की बात अपने लिए लिखने का मौक़ा देती है।

जब बच्चों ने मापी दोस्ती नीतू सिंह का लेख है। लेख में, नीति दस्तावेज़ों में जीवन्त पुस्तकालय व सुरुचिपूर्ण पुस्तकों की स्कूल में अनिवार्यता के बावजूद इनकी अनुपस्थिति व बच्चों के लिए इसकी

अनुपलब्धता पर चिन्ता दर्शाई गई है। वे कहती हैं, पुस्तकालय के प्रति आकर्षण व किताबों से बच्चों का जुड़ाव साज-सज्जा से नहीं, परन्तु बच्चों के साथ पुस्तक के सन्दर्भ में हुई अन्तःक्रिया पर आधारित होता है।

कक्षा अनुभव का अगला लेख संगीता फरासी का ***पढ़ना-लिखना और दीवार पत्रिका*** है। इसमें वे पढ़ना-लिखना सिखाने के तरीक़ों में दीवार पत्रिका का सार्थक उपयोग करने के उनके द्वारा किए गए प्रयासों का विस्तार से वर्णन करती हैं। इससे स्वतंत्र अभिव्यक्ति जो सभी से साझा हो, एक दूसरे का लिखा पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। इस तरह के काम से बच्चों में बहुत बदलाव आते हैं व हर कक्षा के लिए वह पढ़ने की घण्टी रखने का सुझाव देती हैं।

श्रीदेवी का लेख ***पैकिंग कवर (रैपर) और पढ़ना-लिखना*** एक कक्षा अवलोकन पर आधारित है। यह एक शिक्षिका द्वारा पढ़ना-लिखना सीखने के माहौल को सहज बनाने के लिए की गई कोशिश के बारे में बताता है। लेख दर्शाता है कि बच्चों के परिवेश को, उनकी क्रियाओं को, समझने से कक्षा प्रक्रियाओं को अर्थपूर्ण बनाने में काफ़ी मदद मिलती है और इसी वजह से बच्चे इनमें जुड़ पाते हैं एवं मशग़ूल होकर सीख पाते हैं।

सम्पूर्णानन्द जुयाल का लेख ***सीखने की राह में पुस्तकालय का संग*** स्कूल में पुस्तकालय की ज़रूरत को रेखांकित करता है और एक स्कूल में पुस्तकालय को नए सिरे से व्यवस्थित करने के लिए शिक्षक व बच्चों द्वारा मिलकर किए गए प्रयासों का विस्तार से वर्णन करता है। लेख दर्शाता है कि बच्चों को ज़िम्मेदारी देने से वे किताबों की सार सँभाल भी करते हैं और उनसे एक रिश्ता भी बनाते हैं। लेख पुस्तकालय की किताबों को कैसे उपयोग में लाया सकता है, क्या विभिन्न गतिविधियाँ की जा सकती हैं, इसका भी वर्णन करता है।

पुस्तक चर्चा खण्ड में दो किताबों ***स्कूल की अनकही कहानियाँ और प्यारी मैडम*** की समीक्षा प्रस्तुत की गई है और समीक्षक हैं प्रभात। ***स्कूल की अनकही कहानियाँ*** एकलव्य द्वारा प्रकाशित की गई है और इसमें स्कूली जीवन के इर्द-गिर्द रची गई तीन कहानियाँ शामिल हैं। एकलव्य द्वारा प्रकाशित ***प्यारी मैडम*** कहानी पत्र शैली में लिखी गई है जिसमें एक बालिका अपनी मैडम को गाँव की परिस्थितियों के बारे में पत्र लिखती है।

इस बार का साक्षात्कार ***उस दिन से आज तक रुकी नहीं हूँ*** शिक्षिका रीता मंडल से पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर ने किया है। शिक्षिका ने अपनी शिक्षा व शिक्षक बनने की यात्रा, कोरोना काल में शिक्षण कार्य को लगातार जारी रखने के प्रयासों, ऑनलाइन शिक्षण व मोहल्ला कक्षाएँ संचालित करने की कोशिशों और शिक्षा के क्षेत्र में किए गए अन्य उल्लेखनीय कार्यों के बारे में विस्तार से बताया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शुरुआती कक्षाओं में भाषा और गणित की बुनियादी क्षमताओं के विकास पर काफ़ी ज़ोर दिया गया है। बच्चों द्वारा इन बुनियादी क्षमताओं को हासिल करना महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आगे की कक्षाओं में सीखना-सिखाना इनपर ही निर्भर करता है। इस अंक का संवाद ***बुनियादी साक्षरता और बुनियादी, संख्यात्मक और अन्य गणितीय ज्ञान*** विषय पर था।

इस वर्ष 2021 से इस पत्रिका के साल में चार अंक प्रकाशित होंगे। हमने ***पाठशाला*** के स्वरूप में पाँचवें अंक से बदलाव शुरू किया था। पत्रिका का यह अंक और इसके लेख कैसे लगे, यह हमें बताएँ और इसे बेहतर बनाने के लिए सुझाव दें।

पाठकों की प्रतिक्रिया के लिए पिछले अंक से हमने ***पाठक चश्मा*** शुरू किया है। इस अंक में छठवें व सातवें अंक के लेखों पर कुछ टिप्पणियाँ शामिल हैं। आगामी अंकों के लिए आपके लेखों के साथ ***पाठक चश्मा*** के लिए इस अंक पर टिप्पणियों की हमें प्रतीक्षा रहेगी।

सम्पादक मण्डल

लेखन ग़लतियाँ और उनका विश्लेषण

मीनू पालीवाल

यह लेख बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने के सन्दर्भ में है। शिक्षकों से इस विषय पर हुई बातचीत का हवाला देते हुए लेखिका बताती हैं कि आज भी कक्षा में पढ़ना-लिखना सिखाने के दौरान ज़ोर समझ और विचार पर नहीं बल्कि शुद्धता पर रहता है, और बच्चे के हर प्रयास में कुछ सही देखने की बजाय ग़लतियों पर ही ध्यान जाता है। वे कहती हैं कि इस दृष्टिकोण को बदलना होगा। वे बच्चों के साथ किए गए काम के उदाहरण लेकर दर्शाती हैं कि लिखना-पढ़ना सिखाने के लिए किस तरह के तरीक़े मददगार हो सकते हैं और कैसे। वे यह भी कहती हैं कि लिखना-पढ़ना सिखाने के पारम्परिक तरीक़ों को बिना सोचे-समझे अपनाने की बजाय, उनको जाँच-परख कर, उनमें ज़रूरी बदलाव कर काम में लिया जाए तो सीखने की सम्भावनाएँ बढ़ सकती हैं। सं.

आज भी देश में बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाना एक बहुत बड़ी चुनौती के रूप में हमारे सामने है। देशभर में बहुत-से बच्चे सालों तक स्कूल में रहकर भी पढ़ना-लिखना नहीं सीख पाते हैं। इस समस्या के कारणों का पता करने की बहुत आवश्यकता है। बच्चों के पढ़ना-लिखना न सीख पाने के बहुत-से कारक हैं। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण कारक बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए अपनाए जाने वाले तरीक़े और मान्यताएँ हैं। परन्तु पढ़ना सिखाने के तरीक़ों पर विचार करने के बजाय अकसर बच्चों के पढ़ना नहीं सीख पाने का दोषारोपण बच्चों पर ही कर दिया जाता है। अपने इस आलेख में मैं शिक्षकों के एक समूह से हुई बातचीत आपसे साझा कर रही हूँ। यह समूह कक्षा 6 से 8 के बच्चों को हिन्दी विषय पढ़ाने वाले 20-25 शिक्षकों का था।

यहाँ मैं बातचीत के उस अंश को जस का तस उद्धृत कर रही हूँ जिसके आधार पर आगे विश्लेषण किया जा सकेगा।

चर्चा

सुगमकर्ता : आपको हिन्दी भाषा पढ़ाने में किस तरह की परेशानी आती है?

ज़्यादातर शिक्षक : बच्चों को लिखना नहीं आता।

सुगमकर्ता : क्या जो बच्चे ठीक से लिख नहीं पाते वो प्रवाह से पढ़ लेते हैं?

शिक्षक : नहीं।

सुगमकर्ता : क्या यह कह सकते हैं कि तकलीफ़ लिखने में नहीं, पढ़ने में है।

शिक्षक : बेहतर पढ़ने वाले छात्र भी लिखने में बहुत ग़लतियाँ करते हैं।

सुगमकर्ता : क्या हम संक्षिप्त में बता सकते हैं वे किस प्रकार की ग़लतियाँ करते हैं।

शिक्षक : बड़ी ई, छोटी इ, बड़ा ऊ, छोटा उ, श, क्ष, ष, स को लिखने में ग़लतियाँ करते हैं?

सुगमकर्ता : श, क्ष, ष, स क़िस्म की ग़लतियाँ वोकल कॉर्ड्स पर क्षेत्रीयता और वातावरण के असर के कारण भी होती हैं और इनके अदल-बदल जाने से वाक्य का मतलब नहीं बदल जाता है। इसलिए इनपर बहुत परेशान होने की ज़रूरत नहीं है। हम आगे के सत्र में विज़ुअल मेमोरी पर बात करेंगे जो इन अक्षरों के अन्तर को समझने और मुख्य रूप में पढ़ना सीखने में उपयोगी हो सकती है।

सुगमकर्ता : (पहली दो ग़लतियों—बड़ी ई, छोटी इ, बड़ा ऊ, छोटा उ—के सन्दर्भ में पूछा गया) इस कमरे में हममें से ऐसे कितने लोग हैं जिन्हें 2-3 पन्ने का कोई निबन्ध लिखना पड़े और बड़ी ई, छोटी इ, बड़ा ऊ, छोटा उ आदि की कोई ग़लती न हो?

सिर्फ़ 5 प्रतिभागियों ने हाथ उठाया।

सुगमकर्ता : यह प्रश्न पूछने का मेरा उद्देश्य सिर्फ़ इतना है कि ग़लतियों के डर की वजह से कहीं बच्चे लिखने से ही न डरने लगें। हम ज़रूर ग़लतियों को सुधारने पर काम करें, परन्तु पहले निश्चित कर लें कि कोई चूक असल में ग़लती है भी या नहीं। उस चूक का कारण क्या है? ग़लतियों के इस विश्लेषण से हमें उस ग़लती पर किस तरह काम करना है यह समझने में मदद मिलेगी।

सुगमकर्ता : विचार ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है या व्याकरण?

शिक्षक : विचार ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है।

सुगमकर्ता : मान लीजिए, एक बच्ची ने एक वाक्य को पढ़ा— रमा ने चप्पल पहनी। जबकि वाक्य कुछ इस तरह लिखा था— रमा ने चप्पल पहन ली। यहाँ बच्ची ने ‘पहन ली’ को ‘पहनी’ शब्द से बदल दिया। क्या आप यहाँ इस बच्ची को ठीक से पढ़ने के लिए टोकेंगे?

शिक्षक : हाँ।

सुगमकर्ता : क्यों?

शिक्षक : बच्ची ने ग़लत पढ़ा है।

सुगमकर्ता : पढ़ना क्या है?

शिक्षक : लिखित सामग्री से अर्थ प्राप्त करना।

सुगमकर्ता : तो क्या बच्ची के ‘रमा ने चप्पल पहन ली’ को ‘रमा ने चप्पल पहनी’ पढ़ देने से वाक्य के अर्थ में अन्तर आता है?

शिक्षक : नहीं।

सुगमकर्ता : फिर हम क्यों सुधार करवाना चाहते हैं?

शिक्षक : पर पढ़ा तो ग़लत ही है।

सुगमकर्ता : पर आप ही ने कहा था विचार व्याकरण से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है।

मेरे विचार

ऊपर लिखी बातचीत में आप देख सकते हैं कि समूह के उत्तरों में अन्तर्विरोध है। समूह ने कहा कि पढ़ने का उद्देश्य लिखित सामग्री से अर्थ प्राप्त करना है। बच्ची के एक शब्द को बदल देने से वाक्य का अर्थ नहीं बदलता है इसके बावजूद शिक्षक इस शब्द को बदल देने को ग़लती मान रहे हैं। दूसरी बात, समूह ने ये भी माना कि विचार ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है फिर छोटी-मोटी व्याकरण की त्रुटि पर हमें बच्चों को सुधार करवाने की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए, विशेषकर वहाँ, जहाँ अर्थ में बदलाव नहीं आता है।

शिक्षक समूह के उत्तरों के पीछे कारण

आप यहाँ ऊपर देख सकते हैं कि सैद्धान्तिक तौर पर समूह की सहमति है कि विचार ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है, अर्थ प्राप्त करना पढ़ने का उद्देश्य है परन्तु इस सिद्धान्त का व्यवहारिकता में अमल नहीं दिखता है। तो अब सवाल है कि ये अन्तर्विरोध क्यों है। बहुत-से सिद्धान्तों को हम काफ़ी समय से सुनते आ रहे हैं और ये अनजाने

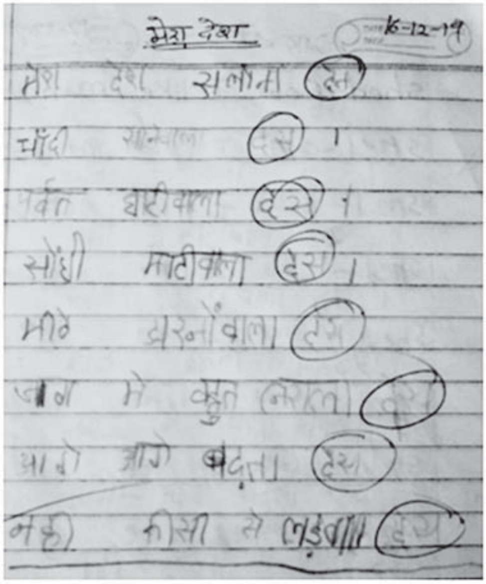
में ही हमारे स्वभाव का हिस्सा बन जाते हैं। इनमें से कुछ बातें सही प्रतीत होती हैं पर उनपर विचार किया जाए तो वे सही नहीं लगतीं या वे और बहुत-से प्रश्नों को जन्म देती हैं। उदाहरण के लिए, हम हमेशा से सुनते आए हैं कि बड़ों का आदर करो। इस वाक्य पर थोड़ा गहराई से सोचेंगे तो हमें लगेगा कि सिर्फ़ बड़ों का आदर करो, ऐसा क्यों? हम क्यों ये सुनते बड़े नहीं हुए कि सबका आदर करो? क्या हमें किसी का आदर सिर्फ़ उसकी उम्र देखकर करना चाहिए? यदि हम इस मान्यता को रखते हैं तो क्या हम बड़ों से किसी मुद्दे पर बातचीत की जगह को कम कर देते हैं? क्या ये मान्यता किसी और मान्यता को जन्मती है जैसे कि बच्चों को अच्छे संस्कार देने के लिए हाथ उठाना सही है। साथ ही हम इस बात को भी मानते हैं कि हिंसा ग़लत है परन्तु बच्चों के साथ उनकी भलाई के लिए अपनाई जा सकती है।

मुझे लगता है कि समूह सिद्धान्तों को सतही तौर पर ही समझता है। समूह को सिद्धान्त पर गहराई से विचार करने की ज़रूरत है तभी सिद्धान्त और उसके प्रयोग में एकरूपता आएगी।

लेखन में ग़लतियाँ

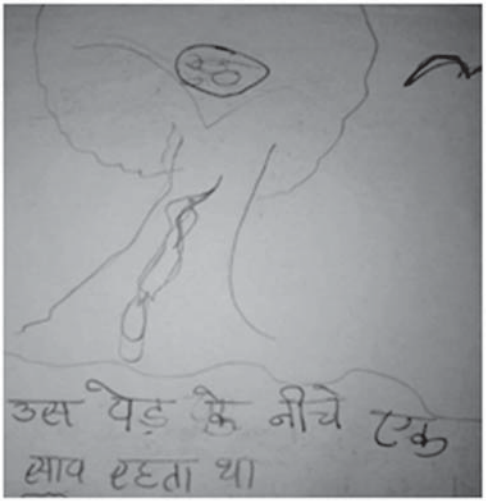
बहुत-से बच्चे लिखने में तरह-तरह की ग़लतियाँ करते हैं। इनमें बड़ी ई, छोटी इ, बड़ा ऊ, छोटा उ की ग़लतियाँ काफ़ी होती हैं। सामान्य तौर पर ग़लतियाँ सुधरवाने के लिए लाल पेन से गोला लगाने का तरीक़ा इस्तेमाल किया जाता है। ग़लत शब्द को सुधारकर कई-कई बार लिखने के लिए बच्चों को कहा जाता है।

आगे एक बच्चे की कॉपी में किया गया काम है। इसमें 'देश' शब्द पर 8 जगह गोले लगे हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि ग़लतियाँ 8 हैं या सिर्फ़ 1? क्या इतने गोले लगाने से बच्चे हतोत्साहित नहीं हो सकते हैं? यही व्यवहार हमारे साथ होगा तो हमें कैसा लगेगा? क्या इस पृष्ठ पर 'बाँसरी' ग़लत लिखा है? क्या आपको लगता है कि इसे तो 'बाँसुरी' लिखा जाना चाहिए था? ज़रा सोचिए, क्यों? क्या आपने किताबों में 'बाँसुरी' लिखा देखा है इसलिए? क्या किसी शब्द को सही और ग़लत बताने के लिए ये आधार काफ़ी है? फ़र्ज़ कीजिए, आप जिस क्षेत्र में रहते हैं वहाँ 'उँगली' को 'नुन्गली' कहते हैं और आप वही लिखते हैं तो



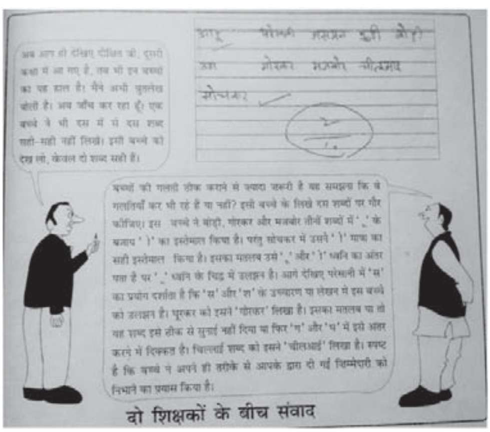


क्या वो ग़लत होगा? हर क्षेत्र में कुछ ऐसे शब्द होते हैं जिनका उच्चारण थोड़ा बहुत अलग होता है, इसमें किसी एक को सही और बाक़ी को ग़लत





कहने की मान्यता की जड़ें अभिजात वर्ग के द्वारा बोली गई भाषा और उसकी सर्वग्राह्यता में हैं।



एक कहानी में बच्चे ने पहले 'साप' लिखा, पर आगे कहानी में 'साँप' की सही वर्तनी लिखी। ऐसा क्यों हुआ? इस तरह के और भी सवाल बच्चों के लेखन को पढ़कर हमारे मन में आना चाहिए ताकि हम ग़लतियों का विश्लेषण करके उनके मूल कारण तक पहुँच सकें।

लिखने की शुरुआत किताब में ग़लतियों के विश्लेषण को बख़ूबी दिखाया गया है।

गोले लगाने की प्रैक्टिस के पीछे की मान्यता

मान्यता यह है कि बच्चों को कुछ शब्द लिखने नहीं आते, तो उन शब्दों पर गोला लगाकर बच्चों का ध्यान उनकी त्रुटियों की ओर दिलाया जाएगा और उन शब्दों को लिखने का अभ्यास कराया जाएगा तो ग़लतियाँ ठीक हो जाएँगी। दूसरा कारण है कि ये तरीक़ा काफ़ी समय से स्कूलों में इस्तेमाल होता आ रहा है। शिक्षकों ने जब पढ़ाई की थी तब भी यही तरीक़ा इस्तेमाल होता था। शिक्षकों के स्वयं के बच्चे जिन स्कूलों में पढ़ते हैं, वहाँ भी ग़लती सुधरवाने के लिए उन्हें इसी तरह के काम दिए जाते हैं। कई बच्चों के माता-पिता भी बच्चों को किताब से देखकर सुलेख लिखने के लिए बोलते हैं।

मेरे विचार

गोला लगाकर, बार-बार अभ्यास से हमें बच्चों को सही लिखना सिखाने में कितनी सफलता मिली है ये हम स्कूलों के नतीजों से देख सकते हैं। मात्राओं की ग़लतियाँ न हों या कम हों, इसके लिए शिक्षक प्रश्न-उत्तर, निबन्ध, यहाँ तक कि नानी या दोस्त को पत्र में क्या लिखा जाए वो भी स्वयं श्यामपट्ट पर लिखवाते हैं या बच्चे गाइड से देखकर ये काम करते हैं।

यदि बच्चों को ख़ुद से अपने लिखे हुए को पढ़ने के लिए कहा जाए तो वे ख़ुद अपनी कुछ-कुछ ग़लतियाँ पहचानकर सुधार कर लेते

हैं। यदि हम ऊपर वाली मान्यता पर यह सोचें कि बच्चों को कुछ शब्द लिखने नहीं आते, इसलिए वे ग़लत लिख रहे हैं तो प्रश्न ये बनता है कि वे उसे ख़ुद पढ़कर कैसे सुधार ले रहे हैं।

लेखन में ग़लतियाँ न हों, इस सोच ने बच्चों के स्वतंत्र लेखन को ही कुचलकर रख दिया है। बिना देखे लिखने पर ग़लतियाँ होने की सम्भावना बढ़ जाती है। इसलिए बच्चे कक्षा में लेखन के अभ्यास के नाम पर किताब के पाठ उतार रहे होते हैं। अकसर शिक्षक बच्चों को व्यस्त रखने के लिए भी किसी पाठ को उतारने के लिए दे देते हैं और इस काम से ये उम्मीद की जाती है कि बच्चे इस काम से बेहतर लिखना सीखेंगे।

मात्राओं पर काम करने के लिए कुछ सुझाव

- विज़ुअल मेमोरी
- लिखने की आदत का विकास करना

बड़ी ई, छोटी इ, बड़ा ऊ, छोटा उ की मात्राओं पर काम करने के लिए हम विज़ुअल मेमोरी पर काम कर सकते हैं। बहुत-से शब्द हम रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में लिखे देखते हैं। उन्हें लिखते वक़्त हमें ज़रा भी नहीं सोचना पड़ता कि उनमें छोटी इ या बड़ी ई, बड़ा ऊ या छोटा उ में से कौन-सी मात्रा लगेगी। उदाहरण के लिए, स्कूल और किताब जैसे शब्दों को लिखते वक़्त हम मात्राओं में परेशानी महसूस नहीं करते। कारण शायद आप समझ ही गए होंगे कि इन्हें हम बार-बार लिखा देखते हैं तो ये शब्द हमारी विज़ुअल मेमोरी का हिस्सा बन जाते हैं।

विज़ुअल मेमोरी का एक और उदाहरण देखते हैं। '**विद्यालय**' शब्द हमने इस तरह विद्यालय लिखा हुआ कई बार देखा है। एक शिक्षक का मत था कि सही विद्यालय ऐसे विद्यालय ही लिखते हैं। यदि हमने इस तरह विद्यालय को लिखा नहीं देखा होता तो हम ख़ुद से शायद इस तरह **विद्यालय** लिखते। वैसे भी इस तरह का द्य हम कम ही शब्दों में लिखा देख पाते हैं।

ऐसा ही एक और उदाहरण बुद्धि को लेकर दिया गया। 'बुद्धि', **बुद्धि** शब्द को लेकर तो समूह बँटा हुआ था कि सही कौन-सा है। छोटी-बड़ी मात्राओं के उच्चारण में अन्तर होता है। पर बच्चों के दृष्टिकोण से ये बड़ा ही सूक्ष्म अन्तर है। ऐसे में कक्षाओं में मात्राओं को सुधरवाने के लिए बड़े ही कृत्रिम तरीक़े से तितली, किताब, कीड़ा शब्दों का उच्चारण किया जाता है। परन्तु आम बोलचाल में इन शब्दों को सुनें, तो यह अन्दाज़ा लगाना कठिन होता है कि वक्ता ने किस स्वर (बड़ा / छोटा) का उच्चारण किया है। इसलिए बड़ी ई, छोटी इ, बड़ा ऊ, छोटा उ की ग़लतियाँ सुधारने के लिए हम विज़ुअल मेमोरी का इस्तेमाल भी कर सकते हैं।

हमें लिखने में बच्चों की ग़लतियाँ सुधारनी हैं तो ज़्यादा-से-ज़्यादा बच्चों को पढ़ने का मौक़ा देना होगा ताकि वे विज़ुअल मेमोरी के माध्यम से सही लिख पाने में सक्षम हो पाएँ। लिखना भी लिखकर ही आएगा, इसका तात्पर्य यह है कि हमें बच्चों को स्वतंत्र लेखन के बहुत-से अवसर उपलब्ध करवाने होंगे। और बच्चे लिखेंगे तब, जब उनकी कॉपी में गोले न लगे हों, अन्यथा बच्चे का ध्यान पूरी तरह से मात्राओं पर ही केन्द्रित हो जाएगा और विचार दिमाग़ से ग़ायब हो जाएँगे। लिखने हेतु बच्चों को प्रेरित करने के लिए उन्हें किसी भी विषयवस्तु पर अपने स्वयं के विचार लिखने के, अपने मन से कविता-कहानी के, डायरी लेखन के मौक़े देने होंगे। इससे बच्चों के लेखन में रचनात्मकता आएगी, वे सिर्फ़ किसी और के विचार अपनी कॉपी में नहीं लिख रहे होंगे और शिक्षक जान पाएँगे कि बच्चों के मन में क्या बातें चलती हैं, बच्चों के अपने विचार किस तरह के हैं। ये जानकारी शिक्षकों को बच्चों से बेहतर सम्बन्ध बनाने और बेहतर शिक्षण प्रक्रिया अपनाने में भी मदद करेगी।

विज़ुअल मेमोरी का इस्तेमाल आप किताबों में भी देख सकते हैं। नीचे दिया चित्र मध्यप्रदेश की *भाषा भारती* कक्षा 4 से लिया गया है।

शुद्ध रूप चुनकर रिक्त स्थान भरिए–

(क) मैं .... नदी हूँ। (नमर्दा, र्नमदा, नर्मदा)

(ख) भारत में बहुत सी .... बहती हैं। (नदीया, नदियाँ, नँदिया)

(ग) यहाँ एक .... कुण्ड है। (प्राकतिक, प्रार्कतिक, प्राकृतिक)

(घ) पुनासा खण्डवा .... में है। (जीला, जिले, जिलों)

(ङ) जबलपुर की भूमि .... है। (उर्वरा, उवर्रा, उरवरा)

यहाँ आपको शायद देखकर ही समझ आ जाएगा कि सही वर्तनी कौन-सी है। बहुत-से शब्दों को जब हम कुछ गड़बड़ लिख देते हैं तो वे देखने में ही कुछ अटपटे लगते हैं। ये हमारे दिमाग़ में मौजूद उस शब्द की स्मृति से लिखे हुए शब्द के मेल न खाने के कारण होता है जिसे हम विज़ुअल मेमोरी कह रहे हैं।

भाषाविद रमाकांत अग्निहोत्री अपने लेख 'बच्चों के भाषा सीखने की क्षमता' में कहते हैं, "सच बात यह है कि आज की हिन्दी में 'इ' और 'ई' व 'उ' और 'ऊ' में कोई विशेष अन्तर नहीं रहा है।"

मुझे लगता है, क्या पता जैसे आज 'ष' की ध्वनि सुनने को नहीं मिलती है वैसे ही आने वाले समय में छोटे-बड़े स्वर का अन्तर ख़त्म हो जाए और हम एक ही मात्रा इस्तेमाल कर रहे हों? मैं ये मानती हूँ कि छोटी-बड़ी मात्रा लगाने से कहीं-कहीं अर्थ बदल जाता है, जैसे– 'आज के दिन मैंने बहुत-से दीन लोगों को देखा', परन्तु ज़्यादातर बोलचाल की भाषा में ऐसा नहीं होता है। यदि आप कोई 100 पन्नों की किताब हाथ में उठाएँगे तो आपको शायद ही कोई ऐसा वाक्य या अनुच्छेद मिले जिसमें एक ही शब्द में एक साथ एक छोटा और एक बड़ा स्वर इस्तेमाल हुआ हो, जैसे– दिन और दीन। मैंने जो वाक्य 'दिन' और 'दीन' को लेकर बनाया है वो भी कृत्रिम-सा लगता है। सच तो ये है कि यदि मैं लिखूँ, 'आज के दीन बड़ा मज़ा आया' या 'दिन लोगों को देखकर दया आती है', तो ग़लत मात्रा लगाने के बावजूद आप अर्थ तक पहुँच जाएँगे। आप अर्थ तक सन्दर्भ की मदद से पहुँच रहे होंगे। अर्थ तो पाठक और लेखक के बीच की अन्तर्क्रिया से बनता है जिसमें मुद्रित सामग्री के अलावा सन्दर्भ, लेखक और पाठक की विचारधारा भी मौजूद होती है।

मैं व्याकरण की दृष्टि से सही लिखे जाने के ख़िलाफ़ नहीं हूँ परन्तु शुरू से सही लिखने के आग्रह ने लेखन के मायने ही बदल दिए हैं। मैं जब स्कूल में पढ़ती थी तब 5वीं की बोर्ड परीक्षा में अच्छे नम्बर आएँ और मैं ज़िले में अव्वल स्थान प्राप्त करूँ, इसके लिए मेरी प्रधानाचार्य ने मुझसे बहुत बार दीपावली पर निबन्ध लिखवाया ताकि उसमें एक भी ग़लती न हो। अब यहाँ ज़रा ठहरकर सोचने की ज़रूरत है कि स्कूल में निबन्ध लिखवाया क्यों जाता है? निबन्ध की कोई सटीक परिभाषा लिखना कठिन है, पर हम यह कह सकते हैं कि निबन्ध किसी विषय पर थोड़ा विस्तार से अपने विचारों को प्रेषित करने का एक माध्यम है। निबन्ध चूँकि थोड़ा विस्तृत होता है इसलिए विचारों को व्यवस्थित करने की माँग रखता है। हममें ऐसे बहुत-से लोग होंगे जो कई बातों को बोलकर बता देंगे परन्तु जब उन्हें लिखकर देने की बात आएगी तो शायद न लिख पाएँ। क्या ये अजीब बात नहीं है कि हम अपने ही विचार लिखित में नहीं दे पा रहे हैं। शायद इसका कारण हम स्कूल में कराई गई गतिविधियों में पाएँगे। यदि मुझे भी स्कूल में ख़ुद से निबन्ध लिखने के मौक़े उपलब्ध कराए गए होते तो शायद आज मैं और भी बेहतर लिख पाती।

निष्कर्ष

शिक्षा का उद्‌देश्य हमें एक आलोचनात्मक नज़रिया प्रदान करना है परन्तु शिक्षा केवल जीविकोपार्जन का साधन बन गई है, इस वजह से हम समस्याओं को अलग-अलग नज़रियों से नहीं देख पाते हैं। इसका नतीजा है कि हम किसी समस्या के लिए अलग-अलग उपचार नहीं सोच पाते और वही तरीक़े इस्तेमाल करने

लगते हैं जो हमेशा से चले आ रहे हैं बिना इस बात की जाँच किए कि क्या ये तरीक़े उपयुक्त हैं। चर्चा में हमने देखा कि कैसे सिद्धान्त को तो हम मानते हैं, पर उसपर काम करने के दौरान हम अमल नहीं करते हैं। अकसर चर्चाओं में बहुत-सी बातों पर सहमति नज़र आती है परन्तु कक्षा में जाने पर हम कक्षाओं में वही पारम्परिक तरीक़े होते हुए पाते हैं। इसकी कई वजहें हैं जैसे कि परीक्षाओं का पैटर्न, अधिकारियों और शिक्षकों का मूल्यांकन करने का तरीक़ा, आदि। इस लेख में हमने पढ़ाने के तरीक़ों पर बात की है जिसका अन्ततः निचोड़ यह है कि हमें अपने पढ़ाने के तरीक़ों पर निरन्तर चिन्तन करने और बच्चों व उनके काम का सूक्ष्म अवलोकन करने की ज़रूरत है ताकि हम पीढ़ी-दर-पीढ़ी पढ़ने-पढ़ाने के चले आ रहे तरीक़ों को आलोचनात्मक दृष्टि से देख पाएँ, उनमें यथासम्भव बदलाव कर पाएँ और अपनी शिक्षण प्रक्रिया को जीवन्त बना पाएँ।

मीनू पालीवाल अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में 2017 से काम कर रही हैं। आप फ़ेलोशिप प्रोग्राम के ज़रिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़ीं। इससे पहले उन्होंने 6 वर्ष आईसीआईसीआई बैंक में काम किया। वे अपने मन में आने वाले सवालों की तलाश में शिक्षा और शिक्षण प्रक्रिया से जुड़ीं। प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के साथ काम करना उन्हें अच्छा लगता है।

सम्पर्क : meenu.paliwal@azimpremjifoundation.org

पढ़ने का सफ़र बनाम सक्रिय साक्षरता का सफ़र

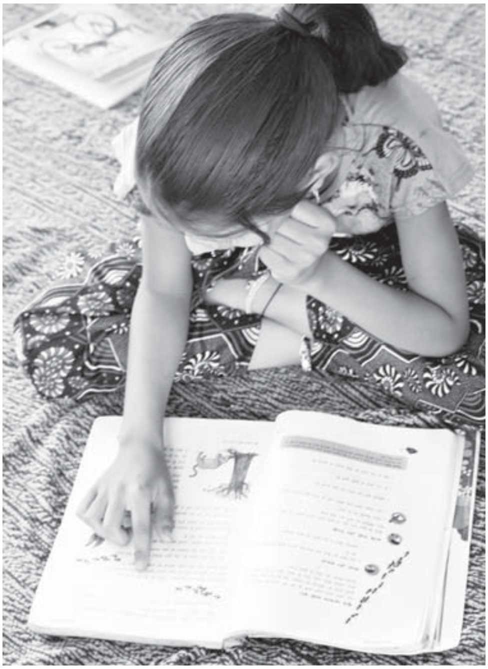
अनिल सिंह

साक्षरता और पाठक प्रतिक्रिया को लेकर विभिन्न विचार और सैद्धान्तिक व्याख्याएँ दी जाती रही हैं। किसी लिखित सामग्री को पढ़ते हुए अर्थ निर्माण की प्रक्रिया को पाठ (Text) और पाठक (Reader) दोनों के नज़रिए से देखा गया है। साक्षरता की समग्र और आधुनिकतम व्याख्या शिक्षाविद फ्रीबॉडी और ल्यूक के चार संसाधन मॉडल से की जाती है। इस आलेख में अनिल सिंह ने साक्षरता के इसी चार संसाधन मॉडल और इसमें पाठक की भूमिका की सैद्धान्तिक रूपरेखा प्रस्तुत की है। सं.

पढ़ने का सफ़र कहते ही हमारे सामने दो पात्र साफ़तौर से रहते हैं– एक तो पाठ और दूसरा पढ़ने वाला। पाठ के सहारे ही पढ़ने वाला यह सफ़र तय कर पाता है। पाठ एक साधन की तरह है पढ़ने वाले के लिए, जो न सिर्फ़ अपने भीतर उसे आने देता है बल्कि रुकने, ठहरने देता है और फिर कभी सुगम तो कभी हिचकोले लेते हुए उसे सफ़र में लेकर चल पड़ता है।

ये सफ़र किसी भी आम सफ़र से किस तरह अलग है इसे समझने के लिए हमें अपने पढ़ने के सफ़र के बारे में थोड़ा विचार करना होगा। हमारे चारों ओर मौखिक के साथ लिखित भाषा का संसार बिखरा पड़ा है। इन दोनों तरह के संसार का एक दूसरे से गहरा नाता है।

यहाँ हम पाठ सामग्री के बहाने लिखित भाषा संसार की बात को समझने की कोशिश करेंगे। लिखित भाषा या चित्रित सामग्री हमें अपनी तरफ़ खींच लेती है। एक पढ़ने वाला शायद ही उसकी अनदेखी कर पाए। लिखित को पढ़ पाना, उसे जान पाना मनुष्य की बड़ी उपलब्धियों में से एक है। इसलिए हम उसपर ठहरते हैं। मानवीय ज्ञान निर्माण की परम्परा और सामाजिक अभ्यास हमें वह विश्वास और उपकरण देते हैं कि लिखी हुई या चित्रित पाठ सामग्री को हम अपनी तरह से खोल सकते हैं, उससे गुज़र सकते हैं, आत्मसात कर सकते हैं और उसके पार जा सकते हैं। उससे प्रभावित या अप्रभावित रह सकते हैं, सहमत या असहमत हो सकते हैं, उसे चुनौती दे सकते हैं, उसपर सवाल उठा सकते हैं, उसे नई तरह से कहने, बोलने और पेश करने का उपक्रम कर सकते हैं।



इसका अर्थ यह है कि कोई पाठ सामग्री, पढ़ने वाले के भीतर तमाम स्तरों पर और तमाम तरह के उद्वेलन खड़े कर सकती है। इस प्रक्रिया में पाठ की ताक़त का अन्दाज़ा हमें मिलता है कि वह कुछ तरह की मनोसामाजिक प्रक्रियाएँ शुरू करने और पाठक को उकसाने का सामर्थ्य रखता है। लेकिन साथ ही हम यह समझने की भूल नहीं कर सकते कि यह सिर्फ़ पाठ की ही ताक़त का मसला है। पढ़ने वाला किसी कोरे सफ़र में नहीं निकला है। इस सफ़र के दौरान वह एक सक्रिय यात्री (पाठक) है और साधन (पाठ) के साथ बराबरी से अन्तर्क्रिया करता चलता है। अगर ऐसा न होता तो एक तरह की पाठ सामग्री को पढ़ने वाले अलग-अलग लोग उसे अलग-अलग तरह से न देखते-समझते।



साक्षरता को लेकर अभी तक की चरणबद्ध समझ हमें यहाँ तक पहुँचाती है। पूरेपन में और क्रियाशील या सक्रिय साक्षरता यही है जिसमें पढ़ने के सफ़र में पाठ (साधन) और पढ़ने वाले (यात्री) न सिर्फ़ एक दूसरे के पूरक हैं बल्कि उनके आपसी लेन-देन और परस्पर अन्तर्क्रिया से दुनियावी ज्ञान संसार का निर्माण भी होता चलता है।

एनसीएफ़ 2005 जिस रटन्त और यांत्रिक शिक्षा से आगे जाने का आह्वान करता है उसमें पहली बात यही है कि वह किसी पाठ को सिर्फ़ पढ़ पाने (डिकोड कर पाने) से कहीं आगे जाकर उसे अपने सन्दर्भ में जानने, समझने और इस्तेमाल कर पाने का कौशल दे। संसार की विविधता, विसंगतियों और इसके बीच अपनी स्थिति को समझने और उसकी पड़ताल कर पाने के मौक़े बनाए। किसी मत, समझ या विचार को चुनौती देने, सवाल करने और स्वीकारने या नकारने अथवा उसकी पुनर्व्याख्या की आज़ादी और उदारता दे।

यह शिक्षक / फेसिलिटेटर के दायरे में आने वाली ज़िम्मेदारी है कि वह अपने विद्यार्थी को पाठ के साथ इस सफ़र में निकल जाने के मौक़े निकाले, उसकी राह बनाए, और जहाँ सम्भव हो उसके साथ ख़ुद भी सफ़र करे।

पढ़ने-पढ़ाने की तमाम विधियों में पढ़ने के तकनीकी कौशल और अर्थ निर्माण के बीच एक द्वन्द्व बना रहता है। पढ़ पाने को सीमित अर्थों में देखे जाने के कारण यह द्वन्द्व और भी गहरा जाता है। पढ़ने की तकनीकी जटिलता में उलझकर अर्थ निर्माण और अर्थ विश्लेषण की अहम प्रक्रियाएँ न सिर्फ़ शिथिल पड़ जाती हैं बल्कि कुन्द भी होती जाती हैं। इसलिए पढ़ने के कौशल की वांछनीयता को स्वीकारते हुए हम पढ़ने के सफ़र को सुगम, आनन्ददायी, अर्थपूर्ण और समग्र कैसे बना सकें, इसपर सचेत और संवेदनशील ढंग से सोचने की ज़रूरत रही आती है।

शुरुआती पठन-पाठन के सफ़र में ही यह इसलिए भी ज़रूरी हो जाता है कि अगर पढ़ना सीखने के दौरान ही बच्चों में पाठ से एंगेज होने का यह अभ्यास बन जाए तो वह कौशल उम्रभर का हो जाता है। पाठ के साथ इस सक्रिय जुड़ाव को समय-समय पर अलग-अलग विद्वानों ने पहचाना और रेखांकित किया है। स्विट्ज़रलैंड की भाषा वैज्ञानिक डेनिस वॉन स्टॉकर, पढ़ पाने को सिर्फ़ अक्षरों को जानने-समझने से कहीं आगे दुनिया को पढ़ने और जानने-समझने तक विस्तृत करके देखती हैं। बच्चे उन अक्षरों को पढ़ते, अर्थ बनाते दरअसल अपनी आसपास की दुनिया को समझते जाते हैं। अपने निजी और सामाजिक अनुभवों के बूते वो इस काम को स्वाभाविक रूप से अंजाम देते हैं। एक वयस्क के रूप में हमारी भूमिका पाठ के साथ बच्चे की अन्तर्क्रिया को इनिशिएट करने और फिर लगातार उसे फेसिलिटेट करते जाने की है।

अमरीकन शिक्षाविद लुईस रोजेनब्लॉट (1938) ने पाठक-केन्द्रित विचार देते हुए कहा कि कोई उपन्यास, कहानी या कविता तब तक काग़ज़ में फैली स्याही से ज़्यादा कुछ नहीं है जब तक कि कोई पाठक उन्हें पढ़कर एक अर्थ नहीं देता। उन्होंने इस नज़रिए से पाठक के सिरे पर होने वाली अन्तर्क्रिया और अर्थ निर्माण को महत्त्वपूर्ण माना है। पाठक एक लगभग अनुपस्थित और अनजान लेखक के पाठ को अपनी तरह से गढ़ता और रचता है। उसके तमाम अर्थ बनाता है, तमाम परतें खोलता है, अलग-अलग तरह से देखता और समझता है। रोजेनब्लॉट के इस सिद्धान्त को रीडर रेस्पोंस थ्योरी 'Reader Response Theory' कहा जाता है। साहित्य में रसबोध और समालोचना इसी दायरे में आती हैं।

पढ़ने के सफ़र में जो सबसे आधुनिक और समग्र विचार है वह 1990 में ऑस्ट्रेलियन शिक्षाविद पीटर फ्रीबॉडी और एलेन ल्यूक का दिया हुआ है जिसमें वह पढ़ने के इस सफ़र को चार संसाधनों में देखते हैं। इस वजह से इस सिद्धान्त को 'साक्षरता का चार संसाधन मॉडल' (Four Resources Model of Literacy) भी कहते हैं। जिन बातों की चर्चा अभी ऊपर हमने की, उन्हीं बातों को एक सैद्धान्तिक ढाँचे में रखकर पीटर फ्रीबॉडी और एलेन ल्यूक ने साक्षरता और उसकी पद्धतियों को लेकर हमारी अब तक की समझ को एक तार्किक और व्यवहारिक आधार दिया है। उनके अनुसार, किसी पाठ सामग्री से एंगेज करते हुए पढ़ने वाला, साक्षरता की अलग-अलग अवस्थाओं में चार तरह की भूमिका में होता है।

पहली भूमिका (टेक्स्ट डिकोडिंग— Text Decoding)

प्रारम्भिक भूमिका है अक्षरों को जोड़-जोड़कर जमाना एवं टुकड़े-टुकड़े में शब्दों को लगाना है, उनकी ध्वनियों और उच्चारण के साथ चलना पर साथ ही साथ वाक्य की बढ़ती हुई संरचना को भी निभाते चलना। विराम चिह्नों को पहचानना। किस अक्षर पर ज़ोर है, कहाँ रुकना है, दो शब्दों के बीच के अवकाश का सम्मान करना, वाक्य कहाँ पूरा हो रहा है उसे समझना और उसके विन्यास को एक लय देना। साक्षरता की यह अपेक्षाकृत मूर्त अवस्था है। इसे डिकोडिंग भी कहा गया है। नए और कठिन शब्दों के अर्थ तलाशना, देशज या अन्य भाषाओं से आए शब्दों के अर्थ लगाना, यह सब इस भूमिका में होता है। बच्चे अकसर राह चलते दुकानों पर लगे साइन बोर्ड, शहरों या गलियों के नाम, विज्ञापन के स्लोगन, आदि पढ़ने की कोशिश लगातार करते रहते हैं। कविताओं के पोस्टर या कहानी की किताब से इसी तरह एंगेज होना शुरू करते हैं। यह आमतौर पर मौखिक भाषा के सहारे-सहारे चलता है। इसमें उसकी वर्तनी और विन्यास के व्याकरण का भी पालन करते जाना होता है। यह भी देख और कर पाना इसमें शामिल है कि अमुक वाक्य को दूसरी तरह भी जमाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, 'बिल्ली रोज़ दूध पीने आती थी' को दो अन्य तरह से जमाया जा सकता है— 'बिल्ली रोज़ आती थी दूध पीने' और 'बिल्ली दूध पीने रोज़ आती थी'। यह भाषा के स्वरूप और स्वभाव से आता है। हमारे सुने हुए अनुभवों से आता है।

इस भूमिका में इस स्तर पर, पढ़ने वाला, पाठ वस्तु में निहित तथ्यों और सूचनाओं को उस भाषा रूप में पहचान पाता है। अगले स्तर पर वह एक वाक्य में विभिन्न उप-वाक्यों की जटिलता को भी समझ पाता है। एक वाक्य दूसरे वाक्य से किस तरह भिन्न है, वाक्य में शब्दों का दुहराव कैसा है, एक वाक्य दूसरे वाक्य पर किस तरह निर्भर है या किस तरह उसी का विस्तार है। पढ़ने वाला पलट-पलट कर दुबारा पढ़ता है और उसकी पुष्टि करता चलता है कि वह जो पढ़ रहा है वह ठीक है या नहीं? क्या ठीक होगा? हिज्जे करके पढ़ना, ग़लत पढ़ जाने पर स्व-बोध से किसी शब्द को दुबारा पढ़ना, या पूरे वाक्य को फिर से पढ़कर विन्यास के आधार पर सुधार करते हुए पढ़ना इसी भूमिका में होता है।

दूसरी भूमिका (पाठ सहभागी या अर्थ गढ़ना— Text Participant or Meaning Making)

एक अगली भूमिका में पढ़ने वाला, पाठ का अर्थ गढ़ता है, उसे समझता है और ख़ुद

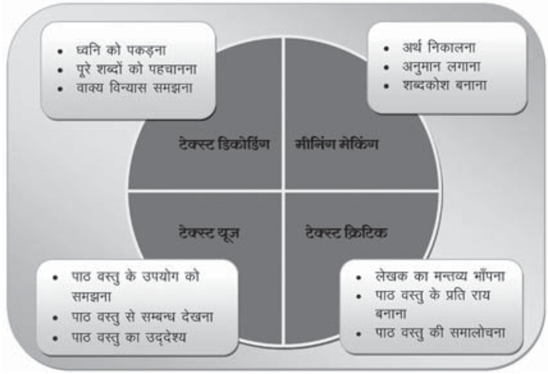
से उसका जुड़ाव देखता है। संस्कृति, परिवार-समुदाय और देश-काल के आधार पर उस पाठ वस्तु को समझने का जो भी सिस्टम है, उसके अनुसार पाठ वस्तु को समझता और उसके साथ जोड़ बिठाता है। यह अमूर्तता की तरफ़ साक्षरता का पहला क़दम है। पढ़ने वाला पहले उसका शाब्दिक अर्थ समझता है और फिर एक क़दम आगे बढ़कर वह उसका निहित और गूढ़ अर्थ समझता है। साक्षरता के इस संसाधन या कौशल को पाठ सहभागिता या अर्थ गढ़ना कहते हैं। पाठ समझने में वह अपनी पिछली जानकारी और समझ का उपयोग करता है। वह टटोलता है कि इस तरह की पाठ वस्तु को समझने में उसका पूर्व ज्ञान या समझदारी क्या कहते हैं। इस भूमिका / अवस्था में पढ़ने वाला, उन जानकारियों, विचार और घटनाओं को चुनता है जो उसके जीवन से जुड़ाव रखते हैं। पाठ वस्तु को पढ़ते समय वह इस बात से संचालित होता है कि क्या अर्थपूर्ण है, किस चीज़ से अर्थपूर्णता बन रही है या क्या मायने रखता है।

उदाहरण के लिए, ‘आज फिर घर में चूल्हा नहीं जला’ का एक शाब्दिक अर्थ है, जिसमें आज एक शब्द है, घर एक शब्द है, चूल्हा एक शब्द है और जलना एक शब्द है। ये चारों शब्द जीवन से जुड़े शब्द हैं, और इनसे बनने वाला यह पूरा वाक्य भी जीवन से जुड़ाव रखता है। लेकिन इन शाब्दिक अर्थों से इतर उसका एक गहरा, निजी और सामाजिक सन्दर्भ में निहितार्थ है, गूढ़ अर्थ है। ‘चूल्हे का नहीं जल पाना’ एक बेबसी की तरफ़ इशारा करता है, जिसमें अभाव, वंचना और पीड़ा का भाव समाहित है। ‘आज फिर’ उसे एक स्तर की गम्भीरता से भर देता है। साक्षरता की यह अमूर्तता एक ऐसा कौशल है जो पढ़ने वाले को पाठ वस्तु के साथ एंगेज होने के लिए जीवन का एक पूरा सन्दर्भ देता है। उसके अनुभवों को कुरेदता है, चेतना को जागृत करता है और किसी पाठ वस्तु के गहरे सरोकार को पकड़ पाने के लिए प्रेरित करता है। इस दौरान भी पाठ वस्तु से संकेतों को लेकर अपनी प्रतिक्रिया और अहसास को पुष्ट करने का लेन-देन चलता रहता है। कई बार छोटे-छोटे उपवाक्यों को व्यवस्थित, नियमानुसार और विराम चिह्नों के साथ प्रवाह से पढ़ने पर अर्थ बन पाता है। पढ़ने वाला तरह-तरह से इसे आज़माकर अपना अर्थ बनाता है।

तीसरी भूमिका (पाठ सामग्री उपयोगकर्ता— Text User)

तीसरी भूमिका में, पढ़ने वाला उस पाठ वस्तु को उपयोग करने की नज़र या उद्देश्य से पढ़ता है। साक्षरता का यह अपेक्षाकृत अधिक क्रियात्मक कौशल है। साक्षरता के इस संसाधन को पाठ प्रयोग भी कहते हैं। किसी पाठ को पढ़ते हुए उसकी उपयोगिता के बारे में विचार करते चलना। पढ़ने के साथ ही यह तय करते जाना कि पाठ वस्तु के इर्द-गिर्द उसका सामाजिक सम्बन्ध क्या है? यह किसके लिए है? इसका क्या उपयोग किया जा सकता है? साथ ही यह समझ पाना कि सांस्कृतिक और सामाजिक दायरों में पाठ वस्तु अलग-अलग होती है। यह भी समझना कि पाठ वस्तु का कहन, उसका सुर, तीव्रता और वाक्य अवयवों का क्रम अलग-अलग सन्दर्भों में अलग-अलग हो सकता है। पढ़ने वाला इस अवस्था में पाठ वस्तु के उन तत्त्वों को पहचान पाता है जो किसी विशिष्ट उद्देश्य से उसमें शामिल किए गए हैं।

पढ़ने वाला उद्देश्य और सन्दर्भ के अनुसार अलग-अलग पाठ वस्तु की संरचना की समझ रखता है। उदाहरण के लिए, किसी विज्ञापन की पाठ वस्तु को पढ़ते हुए पढ़ने वाला स्वयं को तत्काल एक सम्भावित क्रेता की तरह देखने लगता है, और पाठ वस्तु से उसी तरह एंगेज करता है। वह इस पाठ वस्तु से किसी और उद्देश्य को पूरा करने की अपेक्षा भी नहीं रखता। किसी व्यंजन की विधि को पढ़ते हुए उसकी उपयोगिता को तत्काल रेखांकित किया जा सकता है। या किसी कहानी को पढ़ते हुए उसके किसी ख़ास हिस्से को एक ख़ास उद्देश्य से इस्तेमाल करने के बारे में विचार कर पाना इसी तरह का कौशल है। जब हम कोई चुटकुला पढ़ रहे होते हैं तो मनोरंजन का उसका उद्देश्य हमारे सामने बिलकुल स्पष्ट



होता है। उसके साथ एंगेज करते समय पढ़ने वाला उसके निहायत इसी पहलू को देख रहा होता है। किसी पाठ वस्तु को पढ़ते हुए उससे बाहर निकलकर, उसके उपयोग पर नज़र टिकाने का कौशल, साक्षरता का ऐसा कौशल है जिसे जीवन कौशल भी कहा जा सकता है। इस कौशल से साक्षरता के उद्देश्य को एक स्तर की पूर्णता मिलती है। इसमें पाठ वस्तु से जीवन की ओर और जीवन से पाठ वस्तु की ओर आना-जाना चलता रहता है। स्कूली शिक्षा में पाठ्यपुस्तकों को पढ़ते हुए अकसर अपने उत्तर की तलाश या किसी बात की व्याख्या का उद्देश्य लेकर बच्चे उसकी पाठ वस्तु के साथ इसी तरह एंगेज करते हैं। जब हम पढ़ भी रहे होते हैं और अपने काम की, उपयोग की चीज़ें निकालते और छाँटते भी जाते हैं। किसी पात्र का चरित्र या व्यक्तित्व समझने के लिए कहानी या उपन्यास को पढ़ना इसी भूमिका के अन्तर्गत होता है।

चौथी भूमिका (पाठ वस्तु समालोचना— Text Analyst)

चौथा कौशल साक्षरता का एक उच्च स्तरीय और चेतनाशीलता का कौशल है। यह अपेक्षाकृत एक उच्चतम क्रियाशीलता का कौशल है जिसमें पढ़ने वाला पाठ से एंगेज करते हुए उससे विलग होकर भी उसे देखता है। वह पाठ वस्तु पर समालोचनात्मक नज़र डालता है और उसपर चिन्तन करता है। ऐसा करते हुए वह लेखक के बारे में भी सोच रहा होता है। वह यह देख रहा होता है कि कोई पाठ वस्तु किसी ख़ास मक़सद से तैयार की गई है। वह लेखक के ख़ास दृष्टिकोण को पकड़ पाता है। साक्षरता के इस संसाधन को पाठ समालोचना कहते हैं। पढ़ने वाला इस स्तर पर समझ रहा होता है कि पाठ वस्तु तटस्थ या निरपेक्ष नहीं होती है, वह किसी ख़ास नज़रिए, मत या इशारे को पेश करती है। पढ़ने वाला उस आधार पर अपनी पोजीशन या अपना स्टैंड तय करता है। वह यह भी समझ पाता है कि लिखने वाला क्या सोचता है, उसका क्या विचार या मत है।

पढ़ने वाला अपने सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों, रुचियों और नज़रिए के अनुसार पाठ वस्तु को बार-बार खँगालता है और उसके सामने खड़े होकर कई बार उसे चुनौती भी देता है, उसपर सवाल खड़े करता है। पाठ वस्तु के साथ पढ़ने वाले का संघर्ष होता है, और इसीलिए इस स्तर पर कोई पाठ वस्तु पढ़ने वालों पर अलग-अलग असर डालती है। किसी कहानी के अन्त को अपनी तरह से सोचने, बदलने और अपनी पसन्द के अनुसार ढालने का प्रयास इसी कौशल से आता है। किसी आलेख में निहित कोई सांस्कृतिक मूल्य या राजनीतिक विचार, एक पढ़ने वाले को वहाँ पर रोककर उसकी पड़ताल करने को उकसाता है।

पढ़ने वाला इस चेतना के बूते उस पाठ वस्तु की संरचना या विन्यास अथवा उसमें निहित विमर्श को चुनौती दे सकता है, उसपर प्रश्न उठा सकता है, उसकी समीक्षा और पुनर्लेखन कर सकता है। इस तरह हम देख पाते हैं कि पढ़ने वाला इन चारों भूमिकाओं में चार संसाधनों का इस्तेमाल करता है और साक्षरता के समग्र लक्ष्य को प्राप्त करता है। यहाँ हमें यह समझने की भूल नहीं करनी चाहिए कि पढ़ते समय पाठक एक बार में किसी एक भूमिका या कौशल का इस्तेमाल कर रहा होता है। और न ही यह कि साक्षरता के इन चार संसाधनों के इस्तेमाल की कोई रेखीय प्रक्रिया है। एक पाठक अलग-अलग समयों पर दो या दो से ज़्यादा कौशलों का इस्तेमाल भी कर रहा हो सकता है। कई बार

पाठ को पढ़ते हुए उसे समझने का संघर्ष और उसमें निहित दृष्टिकोण को पकड़ना साथ-साथ हो सकता है। उसी दौरान उसके उपयोग का बोध भी हो सकता है।

कक्षा में बच्चों के साथ हम साक्षरता के इन चारों संसाधनों का ध्यान रखते हुए पाठक को उसकी चारों भूमिकाओं में कुशल बना सकते हैं। किसी पाठ सामग्री को पढ़ते हुए उसमें आए कठिन शब्दों या दूसरी भाषा के शब्दों के अर्थ पर बात करना एवं स्थानीय और देशज शब्दों की रचना पर बात करना इसका पहला चरण हो सकता है। पाठ वस्तु के साथ शुरुआती जुड़ाव इसी तरह बनता है। पाठ वस्तु को पढ़कर इससे मिलता-जुलता क्या कुछ याद आ रहा है या ये बात किस बात से जुड़ रही है, कोई पात्र या घटना से किसी और बात का जुड़ाव मिलना; इन बातों को कुरेदा जा सकता है। इससे पाठ वस्तु सिर्फ़ एक कोरी शब्द रचना न होकर जीवन्त अनुभव हो जाती है, यह जुड़ाव का एक और स्तर है। हम यह अभ्यास करा सकते हैं कि पाठ वस्तु से क्या-क्या सूचनाएँ मिल रही हैं, पाठ वस्तु क्या-क्या बता रही है, एवं किसी पात्र, घटना या कालखण्ड के बारे में क्या-क्या बातें हमारी समझ और जानकारी को बढ़ा रही हैं। इस पाठ वस्तु का क्या इस्तेमाल किया जा सकता है, यह अभ्यास भी बच्चों के साथ काम करने से पुख़्ता होता है। किसी पाठ वस्तु में क्या मूल्य, मान्यताएँ और मत निहित हैं, इन्हें पकड़ना भी एक अभ्यास की माँग करता है। पाठ वस्तु को पढ़कर आपका क्या नज़रिया बना, नज़रिए में क्या कोई बदलाव आया, और सहमति-असहमति की दृष्टि भी टटोली जा सकती है। किसी पाठ सामग्री को अपनी तरह से बदलकर फिर से लिखने या प्रस्तुत करने जैसा अभ्यास कराकर बच्चों को सक्रिय साक्षरता के एक और पायदान तक पहुँचाया जा सकता है।

इस तरह ये चारों संसाधन एक दूसरे के काफ़ी नज़दीक और कई बार आपस में गुँथे हुए भी हैं। वास्तविक और समग्र साक्षरता के लिए इन चारों संसाधनों का समावेशन अनिवार्य है। बच्चे इन संसाधनों के साथ अलग-अलग भूमिकाओं में पाठ के साथ अन्तर्क्रिया करें, इसके लिए ज़रूरी है कि एक वयस्क भूमिका में हम शिक्षक, बच्चों के साथ साक्षरता पर काम करते हुए इसके 'पढ़-लिख पाने' जैसे सीमित अर्थों से आगे जाकर इसे एक सामाजिक व्यवहार के रूप में देख पाएँ। बच्चों को इन चारों कौशलों का अभ्यास करा पाएँ। अब जब हम किसी पाठ वस्तु से एंगेज हों तो हम ख़ुद भी अहसास करें कि ये चारों कौशल पढ़ने की इस प्रक्रिया में किस तरह काम करते हैं।

सन्दर्भ

फर्दर नोट्स ऑन द फोर रेसोर्सेस मॉडल, एलेन ल्यूक एंड पीटर फ्रीबॉडी

लिटरेसी टीचिंग टूल किट— फोर रेसोर्सेस मॉडल फॉर रीडिंग एंड व्युइंग

बाल साहित्य के ज़रिए प्रारम्भिक भाषा एवं साक्षरता को सींचना, शैलजा मेनन (*पराग,* एलईसी 2020, कोर्स बुक–1)

साक्षरता के चार संसाधन मॉडल का परिचय, सुजाता नरोन्हा द्वारा संकलित 2016 (*पराग,* एलईसी 2017, कोर्स बुक–2)

अनिल सिंह पिछले ढाई दशक से विभिन्न स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ मिलकर सामाजिक विकास के कार्य में संलग्न रहे हैं। 15 सालों से प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत हैं। जन संचार, समाज कार्य एवं शिक्षा शास्त्र की पढ़ाई की। वर्तमान में टाटा ट्रस्ट, पराग इनिशिएटिव के लाइब्रेरी एजुकेटर कोर्स में बतौर फ़ैकल्टी जुड़े हुए हैं।

सम्पर्क : bihuanandanil@gmail.com

'सुनीता की पहिया कुर्सी'

पाठ की समझ और उसकी प्रक्रिया

मधु रावत

एनसीएफ़ 2005 और शिक्षाविद सच्चे अर्थों में सीखने के लिए पाठ्यवस्तु के जीवन से जुड़ाव पर ज़ोर देते हैं। एनसीईआरटी द्वारा विकसित की गई किताबें इसके लिए पर्याप्त अवसर भी बनाती हुई दिखती हैं। लेकिन किताब तो फिर भी एक ज़रिया ही है अन्ततः कक्षा-कक्ष के अन्दर तो शिक्षक ही ये काम कर सकता है। प्रस्तुत आलेख में मधु रावत ने *रिमझिम* पाठ्यपुस्तक के एक पाठ 'सुनीता की पहिया कुर्सी' के माध्यम से बच्चों के बीच सार्थक संवाद, जीवन अनुभवों से जुड़ाव बनाने के अवसर और फिर उसपर आधारित रचनात्मक लेखन तक की प्रक्रिया का अनुभव साझा किया है। सं.

सन्दर्भ

भाषा अर्जित सम्पत्ति है, जो बुनियादी दक्षताओं (सुनने-बोलने, पढ़ने-लिखने) के रूप में स्कूल स्तर पर विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा सम्पन्न की जाती है। भाषा हम सिखा नहीं सकते बल्कि सीखने और समझने के लिए विविध अवसर पैदा कर सकते हैं। यह अवसर टीएलएम में, गतिविधियों में, प्रिंट रिच वातावरण, बाल साहित्य, पाठ्यपुस्तक, जीवन और परिवेश में शामिल घटनाओं और अनुभव को मौखिक एवं लिखित रूप से अभिव्यक्त करने के रूप में हम देख पाते हैं। मैंने यह महसूस किया है कि भाषा शिक्षण की प्रक्रियाओं का जितना अधिक-से-अधिक जुड़ाव बच्चों के जीवन और परिवेश से जुड़ा होगा, वह उतना ही प्रभावी व असरदार होगा, यह बात विशेषकर प्राथमिक कक्षाओं के सन्दर्भ में पूर्णत: सटीक है। जब हम किसी कक्षा में जाते हैं तो हमारा एक प्रमुख उद्देश्य पाठ्यवस्तु होता है। उसे पूरा करने के लिए हमारे पास एक निश्चित समय होता है। निर्धारित समय सीमा में पाठ्यवस्तु को पूरा करने के दबाव के चलते कई बार हम यह समझ ही नहीं पाते कि भाषा सीखने-सिखाने में क्या महत्त्वपूर्ण है। क्या सिर्फ पाठ्यवस्तु को बच्चों तक पहुँचा देना काफ़ी है या इसमें कुछ और भी शामिल है। इस लेख में हम पाठ्यपुस्तक में शामिल पाठ की समझ और उसके क्रियान्वयन की बात करेंगे।

पाठ की समझ

रिमझिम प्राथमिक भाषा शिक्षण के उद्देश्यों, सीखने के प्रतिफल और भाषाई दक्षताओं को विस्तार देने के सन्दर्भ में रची बुनी पाठ्यपुस्तक है। इसमें शामिल पाठ और अभ्यास बच्चों एवं शिक्षकों को सोचने, समझने और अवलोकन करने के विविध अवसर देते हैं। ये पाठ शिक्षकों से पूर्व तैयारी की माँग करते हैं। पाठ्यपुस्तक यह शिक्षण प्रक्रिया को सुनियोजित व बेहतर ढंग से बनाने का अवसर भी देती है। इस सन्दर्भ में यह बात मुझे काफ़ी महत्त्वपूर्ण लगती है कि किसी पाठ को हम कितना समझते हैं और यह भी समझते हैं कि वह पाठ किताब में क्यों रखा गया होगा! यदि हम उस पाठ के रखे जाने का मक़सद समझ लेते हैं तो हमारी शिक्षण प्रक्रिया सुनियोजित और प्रभावी बन सकती है। जब हम कोई पाठ पढ़ाते हैं तो उसके कुछ उद्देश्य होते हैं। उसमें कुछ प्रेरणा या सीख निहित होती है।

इस सन्दर्भ में, मैं कक्षा चार की पाठ्यपुस्तक *रिमझिम* से 'सुनीता की पहिया कुर्सी' पाठ का ज़िक्र करना चाहूँगी।

सबसे पहले तो किताब का नाम ही बहुत रोचक लगता है– *रिमझिम।* रिमझिम शब्द स्वतः ही मन को विभोर-सा कर देता है। बच्चों से पूछो तो कहते हैं– "मैमजी, बरखा की झमझम"। आवरण पृष्ठ पर बना बारिश में भीगते बच्चों का चित्र भी आकर्षित करता है। रंगीन चित्र बच्चों में पुस्तक के अन्दर झाँकने की जिज्ञासा को बढ़ाने का साधन हैं। 'सुनीता की पहिया कुर्सी' पाठ में दिए चित्र से हमें पाठ्यवस्तु का काफ़ी हद तक अनुमान हो जाता है। जैसे, जिन बच्चों ने पहिया कुर्सी नहीं देखी, चित्र देखकर समझ जाते हैं कि ये पहिया कुर्सी है। फिर वे चित्रों के आधार पर अपनी-अपनी कल्पना और अनुमान से कहानी बुनने लगते हैं। इसका अहसास उनसे बातचीत करते हुए महसूस किया जा सकता है। उनमें पढ़ने और जानने की रुचि भी पैदा होने लगती है।

यह पाठ बच्चों के मूल्यों के विकास में सहायक सिद्ध हो सकता है। जिससे वे समाज में एक अच्छा व्यक्तित्व बनकर उभर सकते हैं। जैसे, इस पाठ का सबसे विशिष्ट उद्देश्य है– बच्चों में 'संवेदना' का विकास करना। इसके अलावा आत्मविश्वास, आत्मसम्मान, दूसरों के प्रति सम्मान, आपसी सहयोग की भावना, अपने काम स्वयं करने की भावना, समानता, आदि गुणों का विकास करना। ये सारी बातें हमें पाठ को पढ़कर समझ आती हैं। 'सुनीता की पहिया कुर्सी' ऐसी लड़की के साहस पर आधारित है जिसके दोनों पैर कमज़ोर हैं। उसे सहानुभूति तो ज़रा भी पसन्द नहीं है, पर दूसरों से सहयोग लेने में हिचक नहीं है। अपनी ही उम्र का मददगार दोस्त मिल भी जाता है। पाठ को दो-तीन बार पढ़ने से यह समझने में मदद मिलती है कि सीधे पाठ पर जाने से पहले की शुरुआती प्रक्रियाएँ कौन-कौन सी हो सकती हैं। यदि बातचीत करनी है तो उसके प्रश्न किस तरह



के होने चाहिए। यदि किसी खेल गतिविधि से जोड़ेंगे तो पाठ से उसका सम्बन्ध कैसे जुड़ेगा, पाठ पढ़ते समय आरोह-अवरोह का उपयोग कैसा होगा, कहाँ पर रुकना है, कहाँ पर बच्चों से चर्चा करेंगे, आदि।

शिक्षण प्रक्रिया

यहाँ पर शिक्षण योजना के सैद्धान्तिक पक्ष की नहीं बल्कि इसके व्यवहारिक पक्ष, जो हम कक्षा में करते हैं, की बात है। पाठ्यवस्तु पर जाने से पहले बच्चों के पूर्वज्ञान से अवगत होना बहुत ही ज़रूरी होता है उनके घर, परिवार, दोस्त, रिश्तेदार और पालतू जानवरों के बारे में जब हम बातचीत करते हैं वो उत्साहित होकर बताते हैं। उनकी झिझक कम होने लगती है। यहाँ पर हमें यह ध्यान रखना होता है कि वो जिस भी भाषा में या जिस भी तरह से अपनी बात को रख रहे हैं, हम उन्हें टोकें नहीं, बल्कि उनकी बातों को धैर्य से सुनें और उनको ये अहसास दिलाएँ कि हम उनकी बातों में रुचि ले रहे हैं। इससे आगे चलकर वे पाठ्यवस्तु को समझने में उत्साह से भाग लेंगे। जब हम उन्हें भयमुक्त और स्वतंत्र वातावरण देते हैं तो उनके तार्किक एवं बौद्धिक विकास में वृद्धि होती है। इस दौरान हम भी बच्चों से बहुत कुछ सीखते हैं। इसी सन्दर्भ में एक छोटी-सी बात साझा करना चाहूँगी। जब मैंने बच्चों से पूछा कि क्या आपके आसपास कोई ऐसा है जो शारीरिक रूप से असमर्थ हो? जैसे– चलने, बोलने, सुनने,

आदि में। तो बच्चों ने तपाक से कहा, जी मैमजी! डुंडी (लंगड़ी)। यह पढ़कर या सुनकर जैसा भाव आप सबके मन में आ रहा है ऐसा ही भाव मेरे मन में आया। थोड़ा-सा ग़ुस्सा भी आया। जिसकी बात बच्चे कर रहे थे वो हमारे ही स्कूल में कक्षा चार में पढ़ने वाली छात्रा थी। उसका नाम लक्ष्मी था। उसका एक पैर पोलियो के कारण बहुत कमज़ोर था जो कि चलते समय एकदम लहराता था। वो दूसरे पैर पर हाथ टिकाकर चलती थी। वो रोज़ कितनी तकलीफ़ से गुज़रती होगी, इन बच्चों को उस तकलीफ़ का कोई भी अहसास नहीं था। और इसमें इनका कोई दोष भी नहीं। यहाँ पर कमी है 'संवेदना' की, जिसका इन बच्चों में शायद अभी अभाव है। इस पाठ को पढ़कर शायद बच्चे इस सन्दर्भ में कुछ समझ बना पाएँगे। लक्ष्मी पढ़ने में बहुत अच्छी नहीं थी लेकिन उसका व्यवहार, समझ और सीखना बहुत अच्छा था। वह सबके लिए प्रेम का भाव रखती थी। परन्तु इस सबके बावजूद उसका कोई दोस्त नहीं था। बच्चे उससे क्यों दूर रहते थे मुझे समझ नहीं आया। उस समय जो मेरे मन की दशा थी या भावुकता थी या यूँ कहूँ, मैं थोड़ा आहत थी। यह सीधे-सीधे 'सुनीता की पहिया कुर्सी' पाठ से भी जुड़ता है। बच्चों में लक्ष्मी और सुनीता की मन:स्थिति का अहसास कराने के लिए एक छोटी-सी गतिविधि कराई गई। सभी बच्चों को एक साथ बिना किसी की सहायता के एक पैर बाँधकर चलने को कहा गया। वो कुछ क़दम ही चलकर लड़खड़ाकर गिर पड़े। ऐसे ही कुछ और काम करने को कहा गया, जैसे– आँखों पर पट्टी बाँधकर काम करने को कहना, कुछ सामान उठाकर लाना, एक हाथ से काम करना, आदि। इन सभी में उन्हें बहुत परेशानी हुई। इससे बच्चे यह महसूस कर पाए कि दूसरे की परिस्थिति देखने में जितनी आसान लगती है उतनी होती नहीं। फिर बच्चों के साथ बातचीत की कि कैसा लगा आपको! यदि ऐसा सचमुच हो जाए तो कैसे अपने काम करोगे, आदि। उनके जवाब में मज़ाक़ न उड़ाना, सहायता करना जैसे पहलू शामिल थे। इस चर्चा में ये बात भी शामिल रही कि लक्ष्मी हम तुम जैसी ही तो है, फिर उसके साथ अच्छा व्यवहार क्यों न किया जाए, हम दौड़ सकते हैं, कूद सकते हैं, नाच सकते हैं, लेकिन क्या लक्ष्मी का मन यह सब करने को नहीं करता होगा! ऐसे में यदि हम उसे चिढ़ाते हैं तो क्या यह अच्छी बात है! हमारी बातों से उसे तकलीफ़ होती है। वह हमसे दूर अकेले में बैठकर सबको देखती रहती है। वह हमारे साथ कोई बुरा बर्ताव भी नहीं करती तो ऐसे में उसके साथ बुरा व्यवहार करना कितना उचित है! बच्चों के चेहरे के भाव बयाँ कर रहे थे कि वे इस दिशा में कुछ सोच रहे थे। उनके चेहरे एकदम उदास थे, क्योंकि अब उन्होंने ये दर्द ख़ुद से जोड़कर देखा। उसके बाद बच्चों में परिवर्तन देखने को मिला। वे लक्ष्मी की मदद करने लगे। उसे चिढ़ाने की बजाय उसे अपने साथ शामिल करने लगे। जब कोई और लक्ष्मी को चिढ़ाता तो बच्चे आकर मुझसे कहते। इससे महसूस हो रहा था कि बच्चे संवेदनशील हो रहे हैं।

रिमझिम चार में 'बड़ों से दो बातें' पृष्ठ के अन्तर्गत तेरहवें बिन्दु, "दूसरों के प्रति ख़ासकर असमानता, क्षमता या पृष्ठभूमि के अन्तर के सन्दर्भ में बच्चों को संवेदनशील बनाना भी भाषा शिक्षण के दौरान होना चाहिए", से भी यह बात स्पष्ट होती है। इस तरह पढ़ाने के साथ-साथ उनमें मूल्यों का विकास करना भी हमारा दायित्व बन जाता है।

बच्चों के साथ पाठ पर जाने से पहले यह ज़रूरी है कि पहले हम उसे पढ़ें और देखें कि कहाँ पर किस तरह की बातचीत या गतिविधि की गुंजाइश दिखाई देती है। पाठ को पढ़ते समय पता लगता है कि सुनीता आज बहुत ख़ुश है क्योंकि उसे बाज़ार जाना है। इसके लिए वो सुबह से ही अपने सारे काम फुर्ती से कर रही थी। सुनीता चलने-फिरने के लिए पहिया कुर्सी का इस्तेमाल करती है। अपने रोज़ाना के काम करने के लिए उसने स्वयं ही कई तरीक़े निकाले हैं। हालाँकि कपड़े बदलना, जूते पहनना, आदि उसके लिए कठिन काम हैं। सुनीता तैयार होकर खाने की

मेज़ पर बैठती है और माँ से कहती है कि माँ, अचार की बोतल पकड़ाना। और माँ कहती है कि अलमारी में रखी है, ले लो। एक बार के लिए लगता है कि माँ को ऐसा नहीं करना चाहिए। क्या उन्हें नहीं पता कि सुनीता को ये सब करने में दिक़्क़त होगी। लेकिन फिर हमें समझ आता है कि माँ का ऐसा व्यवहार सुनीता के आत्मविश्वास को बढ़ाने और उसे अन्य बच्चों की ही तरह सामान्य महसूस करने के लिए बहुत ज़रूरी है। इसीलिए वह सुनीता को चीनी लेने के बहाने बाज़ार भेजती हैं ताकि उसका मनोबल बढ़ाया जाए।

पाठ में एक उदाहरण एक अन्य बच्चे का है जिसे बाक़ी के बच्चे 'छोटू-छोटू' कहकर चिढ़ा रहे हैं। मैंने बच्चों से प्रश्न पूछा कि क्या उन बच्चों का ऐसा व्यवहार सही है? बच्चों का जवाब होता है, नो मैम। यहाँ पर आवश्यकता होती है कि हम बच्चों के साथ चर्चा करें, जिससे यह अहसास पैदा हो कि किसी की कमज़ोरी पर हँसना या उसे चिढ़ाना बहुत ग़लत है। ऐसा ही जब एक छोटी बच्ची फ़रीदा सुनीता की पहिया कुर्सी को देखकर पूछती है कि तुम्हारे पास यह अजीब-सी चीज़ क्या है? तभी फ़रीदा की माँ आती है और उसे ग़ुस्से से खींचकर ले जाती है और कहती है कि इस तरह का सवाल नहीं पूछना चाहिए, अच्छा नहीं लगता! सुनीता को उनका यह व्यवहार समझ में नहीं आया। यहाँ पर बच्चों के लिए सवाल था कि क्या फ़रीदा



की माँ का यह व्यवहार उचित था? बच्चे कहते हैं, जी नहीं। वो वही बात प्यार से भी समझा सकती थीं।

सुनीता जब दुकान पर पहुँचती है तो एक किलो चीनी माँगने पर दुकानदार ने चीनी की थैली उसकी गोदी में रख दी जबकि उसने चीनी लेने के लिए हाथ बढ़ाया था। सुनीता ग़ुस्से से कहती है कि मैं भी दूसरों की तरह ख़ुद अपने-आप सामान ले सकती हूँ। यहाँ पर फिर सवाल था कि सुनीता को दुकानदार का व्यवहार क्यों अच्छा नहीं लगा? बच्चों का जवाब था, हाँ, उन्होंने सुनीता के हाथ में चीनी नहीं दी इसलिए। दुकानदार के व्यवहार से सुनीता को अपनी कमज़ोरी का अहसास हुआ और उसे दुःख भी हुआ। किसी की मदद करते समय हमें यह भी ध्यान रखना होता है कि हम उसकी मदद ऐसे करें कि उसे अपनी कमज़ोरी का अहसास न हो। जब सुनीता को दुकान पर जाना था तो उसे चढ़ना था जो वो नहीं कर पा रही थी। तभी वहाँ वही लड़का, जिसे बच्चे 'छोटू' कहकर चिढ़ा रहे थे, आकर कहता है कि क्या मैं तुम्हारी कुछ मदद करूँ? वो अपना नाम अमित बताता है। तब





सुनीता कहती है कि पीछे के पैडिल को पैर से दबाओगे? यहाँ पर सुनीता को अमित की मदद लेना बुरा नहीं लगा। हालाँकि आसपास बहुत-से लोग थे पर सब जल्दी में थे और किसी ने भी उसकी तरफ़ ध्यान नहीं दिया।

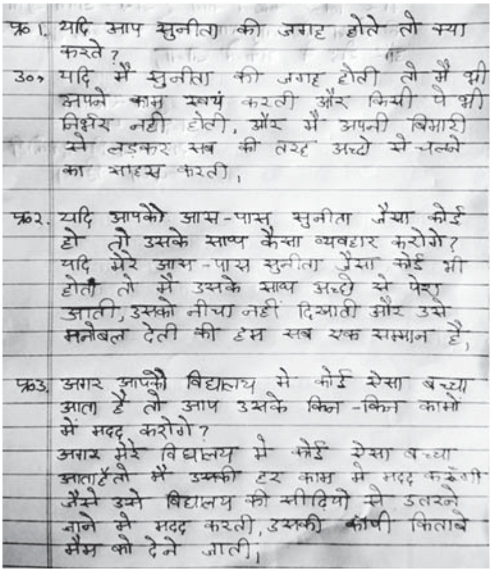
शिक्षण प्रक्रिया के दौरान इस तरह के प्रश्नोत्तर लगातार करते रहने से बच्चे पाठ्यवस्तु को समझने के लिए उत्सुक और क्रियाशील रहते हैं। बस उन्हें ये आज़ादी देनी होती है कि वो अपनी बात को अपने ढंग से और अपनी भाषा में रख पाएँ। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हम उनको देते हैं तो कई बार ऐसी चीज़ें निकलकर आती हैं जो हमें भी सीखने के मौक़े देती हैं। पाठ से सम्बन्धित गतिविधियाँ अगर हम उनके परिवेश एवं उनके अनुभवों के आधार पर करते हैं तो बच्चे ज़्यादा रुचि लेते हैं।

आकलन की तैयारी

एक आकलन तो पाठ पढ़ाने के दौरान ही होता रहता है, जैसे– बच्चों द्वारा प्रश्न करते समय, किसी बात पर अनुभव रखते या जवाब देते समय अभिव्यक्ति कौशल का आकलन। बच्चे शिक्षण प्रक्रिया के दौरान कितना समझ पाए, उसका आकलन करने के लिए कुछ प्रश्न इस प्रकार से हो सकते हैं जो कि बच्चों के तार्किक एवं बौद्धिक विकास में सहायक सिद्ध हो सकते हैं :

1. यदि आप सुनीता की जगह होते तो क्या करते?
2. यदि आपके आसपास सुनीता जैसा कोई हो तो उसके साथ कैसा व्यवहार करोगे?
3. अगर आपके विद्यालय में कोई ऐसा बच्चा आता है तो आप उसकी किन-किन कामों में मदद करोगे?
4. आपके लिए कठिन काम कौन-कौन से हैं?
5. सुनीता को दुकानदार का व्यवहार क्यों बुरा लगा?
6. आपके सुनीता को सड़क देखना अच्छा क्यों लगता होगा?
7. सुनीता के बारे में पढ़कर तुम्हारे मन में कई सवाल और बातें आ रही होंगी। वे बातें सुनीता को चिट्ठी लिखकर बताओ।

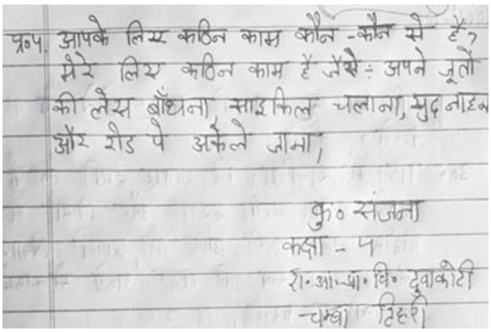
इन प्रश्नों पर बच्चों के जवाब कुछ इस तरह से रहे :



प्र०1. यदि आप सुनीता की जगह होते तो क्या करते?
उ०, यदि मैं सुनीता की जगह होती तो मैं भी अपने काम स्वयं करती और किसी पे भी निर्भर नही होती, और मैं अपनी बिमारी से लड़कर सब की तरह अच्छे से चलने का साहस करती।

प्र०2. यदि आपको आस-पास सुनीता जैसा कोई हो तो उसके साथ कैसा व्यवहार करोगे?
यदि मेरे आस-पास सुनीता जैसा कोई भी होती तो मैं उसके साथ अच्छे से पेश आती, उसको नीचा नहीं दिखाती और उसे मनोबल देती की हम सब एक समान है।

प्र०3. अगर आपको विद्यालय मे कोई ऐसा बच्चा आता है तो आप उसके किन-किन कामों में मदद करोगे?
अगर मेरे विद्यालय मे कोई ऐसा बच्चा आता है तो मैं उसकी हर काम मे मदद करूँगी जैसे उसे विद्यालय की सीढ़ियो से उतरने जाने मे मदद करती, उसकी कॉपी किताबे मैम को देने जाती।



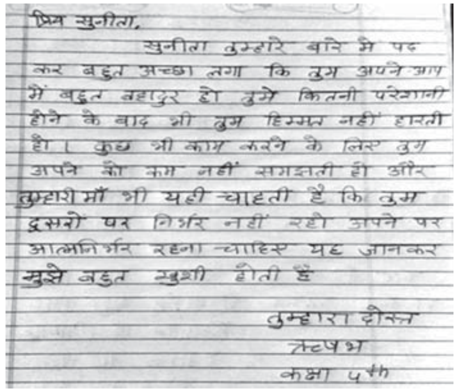
प्र०4. आपके लिए कठिन काम कौन-कौन से है?
मेरे लिए कठिन काम है जैसे÷ अपने जूतों की लेस बाँधना, साइकिल चलाना, मुद नाहना और रोड पे अकेले जाना।

कु० संजना
कक्षा - 5
रा॰ आ॰ प्रा॰ वि॰ दुवाकोटी
-चम्बा टिहरी

प्रतिफल

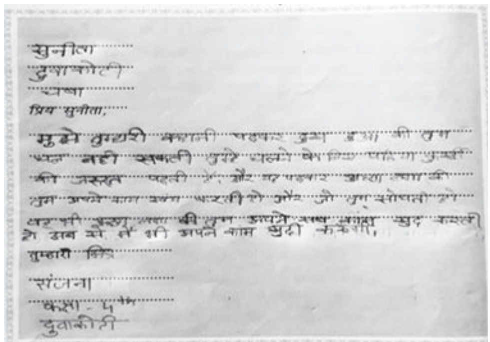
- बच्चों में मूल्यों का विकास हो पाया।
- उनमें संवेदनशीलता का गुण विकसित हो पाया है।
- सहयोग की भावना विकसित हो पाई है।
- अपने कामों को स्वयं करने के लिए प्रेरित हो पाए हैं।

और ये प्रतिफल हमें बच्चों द्वारा सुनीता के लिए लिखी गई चिट्ठियों में भी देखने को मिले हैं, जो कि निम्नवत हैं :



प्रिय सुनीता,
सुनीता तुम्हारे बारे मे पढ़ कर बहुत अच्छा लगा कि तुम अपने आप में बहुत बहादुर हो तुमे कितनी परेशानी होने के बाद भी तुम हिम्मत नहीं हारती हो। कुछ भी काम करने के लिए तुम अपने को कम नहीं समझती हो और तुम्हारी माँ भी यही चाहती है कि तुम दूसरो पर निर्भर नहीं रहो अपने पर आत्मनिर्भर रहना चाहिए यह जानकर मुझे बहुत खुशी होती है

तुम्हारा दोस्त
ऋषभ
कक्षा 5th



सुनीता
दुवाकोटी
चम्बा
प्रिय सुनीता;
मुझे तुम्हारी कहानी पढ़कर [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] अपने काम खुदी करूँगी।
तुम्हारी मित्र
संजना
कक्षा - 5th
दुवाकोटी

एक बात जो मेरे मन को कचोटती है वह यह कि असल मायने में विकलांग कौन हैं? वो जो शारीरिक रूप से असमर्थ होने के बाद भी अपने सारे काम स्वयं करने की कोशिश करते हैं और समाज में अपना स्थान मुकम्मल रखते हैं या वे जो पूरी तरह से समर्थ होने के बावजूद भी संवेदनाओं से विकलांग होते हैं।

*लेख के सभी चित्र एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तक *रिमझिम- 4* के पाठ 'सुनीता की पहिया कुर्सी' से साभार

मधु रावत को प्रारम्भिक कक्षाओं को पढ़ाने का 20 वर्ष का अनुभव है। वर्तमान में वे राजकीय आदर्श प्राथमिक विद्यालय दुवाकोटी, विकासखण्ड चंबा, टिहरी गढ़वाल में शिक्षक हैं। उन्हें कविताएँ पढ़ने और लिखने में विशेष रुचि है। बच्चों के साथ सांस्कृतिक गतिविधियाँ मसलन गीत, नृत्य, कविता और कहानी लेखन आदि करवाना अच्छा लगता है।
सम्पर्क : rawatmadhu10@gmail.com

‘नन्हा फ़नकार’ और सीखने के प्रतिफल

अनीता ध्यानी

शिक्षिका ने पाठ्यपुस्तक के एक पाठ पर किस तरह योजना बनाकर काम किया इसका सिलसिलेवार और विस्तार से वर्णन करता है यह लेख। लेख में पाठ के उद्देश्य निर्धारित करना, उनपर उपयुक्त गतिविधियाँ सोचकर बच्चों के साथ करना, और इस दौरान बच्चे जो सीखे हैं उसका आकलन करना, आदि से सम्बन्धित अपने अनुभवों को लेखिका ने साझा किया है। सं.

यूँ तो सीखने-सिखाने का कार्य अनवरत चलता ही रहता है। लेकिन कोरोना ने जब सबको अपने घरों में क़ैद कर लिया, विद्यालय बन्द हो गए तो सभी शिक्षक टेक्नोलॉजी से आपस में जुड़े और साथ ही शुरू हुआ अपने विद्यालय में किए गए कार्यों व अनुभवों को साझा व लिपिबद्ध करने का कार्य। मेरा विद्यालय ऋषिकेश के पास एक गाँव में स्थित है। यहाँ अधिकतर लोग मज़दूरी का काम करते हैं। बच्चे घर पर घरेलू कामों में माता-पिता का हाथ बँटाते हैं, इसलिए पढ़ने-लिखने का काम स्कूल तक ही सीमित रह जाता है। इसी वजह से यह ज़रूरी हो जाता है कि स्कूल में पढ़ने-लिखने का कार्य सहज हो ताकि बच्चे सीखने में दिलचस्पी ले सकें। इस लेख में कक्षा 5 के बच्चों के साथ हिन्दी पाठ्यपुस्तक *रिमझिम* से लिए गए पाठ ‘नन्हा फ़नकार’ की पाठ योजना और क्रियान्वयन के अनुभवों को मैंने प्रस्तुत किया है।

इस पाठ को पढ़ने पर उसके शिक्षण के उद्देश्य जो समझ आते हैं, वे हैं : कल्पनाशीलता का विकास, पठन व लेखन की क्षमता का विकास, कला व हस्तकला में रुचि का विकास, संवेदनशीलता और श्रम के प्रति आदर, हुनर के प्रति सम्मान। लेकिन सीखने के प्रतिफलों को ध्यान में रखकर जब इस पाठ को देखा तो इसमें 10 से ज़्यादा सीखने के प्रतिफल चिह्नित हो गए। अब जद्दोजहद यह थी कि उन प्रतिफलों को प्राप्त करने के लिए क्या किया जाए, इसके निराकरण के लिए कुछ गतिविधियाँ तैयार कीं और दिवसवार पाठ योजना बनाई गई। यह पूरे 7 दिन की बनी, जिसे 1 घण्टे के पीरियड के हिसाब से पूरे 7 घण्टे बच्चों के बीच में किया गया।

पाठ में चिह्नित प्रतिफल

जैसा कि ऊपर कहा गया है, बच्चों के सीखे हुए का आकलन करने के लिए सीखने के इन प्रतिफलों को पूर्व में ही चिह्नित किया गया, ये थे :

- शब्दों का अपने सन्दर्भों में उपयोग कर वाक्य रचना कर सकेंगे।
- ख़ुद सवाल बना सकेंगे एवं जवाब ढूँढ़ सकेंगे।
- उचित उतार-चढ़ाव व हाव-भाव के साथ पाठ का आदर्श वाचन कर सकेंगे।
- अपने शब्दों में पाठ की विषयवस्तु को सुना सकेंगे।

- अपने आसपास घटने वाली विभिन्न घटनाओं की बारीक़ियों पर ध्यान देते हुए उनपर अपनी प्रतिक्रिया दे सकेंगे और परिचित शब्दों से वाक्य, कविता व कहानी बना सकेंगे।
- भाषा की व्याकरणिक इकाइयों– संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया विशेषण, नुक़्ता आदि को समझकर लिख सकेंगे और प्रयोग कर सकेंगे।
- व्यवसायों के प्रति अपने ढंग से सोच सकेंगे।
- अपने अन्दर छुपे फ़नकार को पहचानते हुए व्यक्त कर सकेंगे।
- फ़न (कला) और फ़नकार (कलाकार) का वर्गीकरण कर सकेंगे।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए बच्चों से कुछ गतिविधियाँ, जैसे– नाटक, चित्रकला, मॉडल निर्माण, बड़े-बुज़ुर्गों से बातचीत, आदि करवाई गईं। इस दौरान जो हुआ उसकी झलक मैं इस लेख में प्रस्तुत कर रही हूँ। कोशिश है कि इस अनुभव के हर हिस्से के कुछ उदाहरण भी दे पाऊँ। यह पूरा क्रम धीरे-धीरे काम करते-करते विकसित होता चला गया। मेरा प्रयास यही था कि बच्चों को भागीदारी व सार्थक भाषाई अभ्यास के मौक़े मिलें।

पहला दिन

समय : 1 घण्टा

आवश्यक सामग्री : स्वरचित कविता* (जिसमें कामगारों के बारे में रोचक ढंग से विवरण लिखा गया है), नक़्क़ाशी युक्त चित्र, बातचीत हेतु पहले से तैयार कुछ सवाल, आदि।

कक्षा में बैठक व्यवस्था व छात्रों के पास सामग्री की उपलब्धता जाँचने के पश्चात पहली गतिविधि करवाई गई।

गतिविधि 1 : नाचें, गाएँ, चित्र बनाएँ

कविता को बच्चों के साथ मिलकर गाया और फिर दर्ज़ी, लोहार, मिस्त्री व सुनार के बारे में चर्चा करते हुए एक इमारत का चित्र दिखाया गया। चित्र में बने डिज़ाइन पर सवाल पूछे कि किसने बनाया होगा ये? कैसे बनाया होगा? क्या आप लोगों ने कभी बनाया या किसी को बनाते हुए देखा है? चर्चा के बाद बच्चों ने भी इन नक़्क़ाशियों को बनाया, कुछ ने कविता दोहराई और अन्य ने नृत्य किया। फिर बच्चों के नाम बोर्ड पर लिखकर, उनके द्वारा किया गया कार्य लिखा और उनके नाम के साथ फ़नकार शब्द को जोड़कर लिखा, जैसे– फ़नकार ईशांत, फ़नकार साहिल, आदि। उन्हें बताया गया कि चित्र बनाना, नृत्य करना, कविता गाना आदि कार्य, जो हम सभी ने किए यह सब फ़न और इन्हें करने वाले सभी व्यक्ति फ़नकार कहलाते हैं।

फ़न और फ़नकार*

काट छांट कर, सिल देता फिर
सिलवा लो पोशाक जो मर्जी।
लेकर माप जो कपड़े सीता,
उसको सब कहते हैं दर्जी।

करके लोहा बड़ा गरम
मार हथौड़ा धाड़-धड़म।
फिर गढ़ता उससे औजार
कहते हम उसको लोहार।

सोने का उसका व्यापार
करे न कम धेला दो चार।
गढ़ता कंगन, सुंदर हार।
कहते हम उसको सुनार।

गतिविधि 2 : आओ करें बातचीत

कुछ उदाहरण कविता से लेते हुए बातचीत की गई, जैसे– मिस्त्री का काम करना, लकड़ी पर डिज़ाइन बनाना, लोहे से औज़ार बनाना या गहने पर डिज़ाइन बनाना फ़न हैं। अब ज़रा सोचो और बताओ।

प्रश्न 1 : क्या आपने अपने गाँव में कोई ऐसा व्यक्ति देखा है, जिसमें इस तरह का कोई फ़न हो?

एक बच्चा– मेरी माँ गढ़वाली गाना गाती है, दूसरा बच्चा– मेरे दादाजी रामलीला में मामा मारीच का पाठ खेलते हैं।

प्रश्न 2 : जब आपको अपनी कला दिखाने का मौक़ा मिलता है, तो आपको कैसा महसूस होता है?

एक बच्चा– मुझे बहुत अच्छा लगता है, दूसरा बच्चा– मुझे शर्म आती है।

प्रश्न 3 : क्या आपने कभी लकड़ी, पत्थर, प्लास्टिक या मिट्टी के बर्तन पर कोई डिज़ाइन बनी हुई देखी है? यह किसने बनाई होगी?

बच्चों के उत्तर– हमारे घर की कुर्सियों पर, खम्भों और दरवाज़ों पर भी अच्छी-अच्छी डिज़ाइन बनी हुई हैं। दुकानदार ने बनाई होंगी।

प्रश्न 4 : गाँव के कुछ पुराने मकानों में आज भी लकड़ी के खम्भों पर डिज़ाइन बनी हुई हैं, उन मकानों को क्या कहते हैं? और खम्भों पर यह डिज़ाइन किसने और कैसे बनाई होंगी?

उत्तर– मेरी दादी ने बताया, तिवारी कहते हैं कि डिज़ाइन बढ़ई ने लकड़ी खुरचकर बनाई होंगी।

प्रश्न 5 : क्या गाँव के लोग हमेशा से इसी गाँव में हैं या कहीं से आए हैं?

उत्तर– पहले हम कहीं और रहते थे, मेरे दादाजी के भी दादाजी यहाँ आकर बसे।

प्रश्न 6 : आज सारे गाँव ख़ाली क्यों होते जा रहे हैं, लोग गाँव से बाहर क्यों जा रहे हैं?

उत्तर– नौकरी की तलाश में, बच्चों को अँग्रेज़ी स्कूल में पढ़ाने और इलाज के लिए।

गतिविधि 3 : आज का सवाल

यहाँ बच्चों को घर के लिए एक सवाल दिया, जिसका उत्तर उन्हें अपने बड़े-बुज़ुर्गों से पूछकर आने के लिए कहा गया :

पता करो कि आपके गाँव में लोग कब, कहाँ से और कैसे आए होंगे? लोग यहाँ क्या-क्या काम-धन्धे करते हैं और बाहर जाकर कौन-कौन से काम-धन्धे करते हैं?

दूसरा दिन

समय : 1 घण्टा

आवश्यक सामग्री : चार्ट, ग्लू, पेंसिल, कलर, पाठ्यपुस्तक, ए-4 साइज़ का पेपर, चार्ट पर लिखी हुई कविता, आदि।

गतिविधि 1 : बातें पिछले दिन की

कक्षा की शुरुआत पिछले दिन के सवाल पर बातचीत से की गई। इसमें उनके जवाब सुनना और उनके द्वारा लाए गए लिखित जवाबों को एक जगह चार्ट पर चिपकाकर डिस्प्ले किया गया। फिर बच्चों का ध्यान पाठ की विषयवस्तु की ओर लाने का प्रयास किया गया। आपने अपने आसपास देखा होगा, कुछ लोग अच्छा नृत्य कर लेते हैं, कोई अच्छी चित्रकारी करता है, कोई अच्छी मिमिक्री करता है, तो कोई मिट्टी से सुन्दर आकृतियाँ बनाता है। आज आपको मिलाते हैं ऐसे ही एक नन्हे फ़नकार से जो अपनी नक़्क़ाशी के फ़न से सभी का मन मोह लेता है।

गतिविधि 2 : आओ पढ़ें अपना पाठ

मैंने पाठ पढ़ा। बीच में पाठ से प्रश्न भी किए गए जिससे छात्रों का ध्यान बना रहे। फिर छात्रों के साथ मिलकर भी पाठ पढ़ा गया।

गतिविधि 3 : पाठ से कविता

पाठ की विषयवस्तु को कविता के रूप में एक चार्ट पर लिखकर रखा गया और हाव-भाव के साथ बच्चों के साथ कविता को गाया गया। कविता बनाते समय यह ध्यान रखा गया कि कहानी की मुख्य बातें और घटनाएँ उसमें आ जाएँ। कविता की भाषा सरल और वाक्य विन्यास भी सुगम हो ताकि पाठ के प्रवाह को समझने में कोई मुश्किल न रहे। सामान्यतः दो

दो पंक्तियों को छंद में रखने की कोशिश की ताकि कविता पढ़ने और बोलने का मज़ा बना रहे। इस तरह 20-22 पंक्तियों में पाठ की पूरी बात और कहानी आ गई।

गतिविधि 4 : सुनाओ तो ज़रा

बच्चों की ज़ुबानी पाठ सुना और बीच-बीच में जहाँ वे अटक गए, उनकी मदद की। बच्चों से पाठ सुनने के बाद कुछ सवाल भी पूछे गए। जैसे– राजा को देखकर केशव क्यों सकपकाया होगा? राजा नक़्क़ाशी क्यों सीखना चाहते थे? आदि। कुछ सवाल तो पहले से सोचे हुए थे और कुछ बातचीत के दौरान व बच्चों के जवाबों से जुड़ते चले गए।

गतिविधि 5 : आज का सवाल

इसके बाद एक सवाल सोचा जिसमें बच्चों से एक समग्र रचनात्मक प्रयास की अपेक्षा थी। प्रयास यह था कि स्वाभाविक ढंग से जो काम अकसर मुश्किल व विशेष लोगों की बपौती माना जाता है, वह करने का प्रयास सभी करें। अभ्यास था, पाठ में जो तुम्हें अच्छा लगा उसपर तीन-चार लाइन की कविता बनाओ?

तीसरा दिन

समय : 1 घण्टा

आवश्यक सामग्री : चार्ट, ग्लू, पेंसिल, कलर, पाठ्यपुस्तक, ए-4 साइज़ का पेपर, नक़्क़ाशी के चित्र, आदि।

गतिविधि 1 : बातें पिछले दिन की

बच्चों के द्वारा बनाई गई कविताओं को एकत्र कर कक्षा-कक्ष में डिस्प्ले किया और कुछ बच्चों से ग्रुप में कविता सुनी।

गतिविधि 2 : चित्रों से बातचीत

पाठ में पहला चित्र बुलन्द दरवाज़े का है। छात्रों के साथ बुलन्द दरवाज़े के बारे में विस्तृत बातचीत की। यह कहाँ स्थित है, किसने, कब और क्यों बनाया, आदि पहलुओं पर चर्चा की गई। अगले चित्र में नक़्क़ाशी करता हुआ बालक है जो अभी सीधी लकीर और कुछ घुमावदार डिज़ाइन बना सकता है, लेकिन वह जानता है कि एक दिन वह भी अपने पिता की तरह बारीक़ जालियाँ, कमल के फूल, लहराते हुए साँप और इठलाकर चलते हुए घोड़े, यह सब पत्थर पर उकेर पाएगा। यह पढ़ने के बाद छात्रों से प्रश्न किया। बच्चों, क्या आपने कभी केशव की तरह सोचा है कि आप क्या-क्या काम कर सकते हो? उन कामों को अपनी कक्षा में सभी बच्चों से साझा कीजिए।

यह प्रश्न भी पाठ को अनुभव से जोड़ने व उसपर लागू करने की माँग करता है। इसमें बच्चों से अपेक्षा है और यह उनके लिए अपने अनुभव व आकांक्षाओं को व्यक्त करने का मार्ग प्रदान करता है।

अगला चित्र– नक़्क़ाशी करते हुए केशव के कान में एक आवाज़ पड़ती है। 'माशा अल्लाह! यह घण्टियाँ कितनी सुन्दर हैं। तुमने ख़ुद बनाई हैं?' 'बेशक मैंने ही बनाई हैं। क्या मैं आपको पत्थरों पर नक़्क़ाशी करता नज़र नहीं आता?' इसके बाद बच्चों से प्रश्न किया, क्या आपके साथ कभी ऐसा हुआ है कि आपके कान में अचानक आवाज़ पड़ने से आप चौंके हों? यदि हाँ, तो लिखिए कब? और कहाँ? इसपर छात्रों के अलग-अलग जवाब आते हैं। कोई कहता है कि मैं जब नींद में था, माँ की आवाज़ से चौंक गया था। और इसी क्रम में एक बालिका कहती है कि मैं तब चौंकी थी जब किसी ने बताया कि उसे बाघ उठाकर ले गया था। फिर उसने इसका जो विवरण दिया उसे सुनने से रोंगटे खड़े हो रहे थे।

गतिविधि 3 : आज के सवाल

- गत्ते, काग़ज़ व रंगों की मदद से बुलन्द दरवाज़े का एक मॉडल बनाइए?
- पाठ में दिए अलग-अलग चित्रों को बनाते हुए उनके बारे में लिखिए?

यह अभ्यास अलग क़िस्म के हैं, किन्तु इनमें भी टेक्स्ट के साथ अलग प्रकार की अन्तःक्रिया के प्रयास के रास्ते सोचे गए हैं जिनमें अलग तरह की अभिव्यक्ति के मौक़े शामिल हैं।

चौथा दिन

समय : 1 घण्टा

आवश्यक सामग्री : चार्ट, ग्लू, पेंसिल, कलर, पाठ्यपुस्तक, ए-4 साइज़ का पेपर, चार्ट पर लिखी हुई कविता, आदि।

गतिविधि 1 : बातें पिछले दिन की

बच्चों के द्वारा बनाए गए चित्रों और मॉडलों को कक्षा में डिस्प्ले किया गया और उनपर बातचीत की गई कि क्या बनाया, क्यों बनाया, कैसे बनाया और क्या लिखा, पढ़कर सुनाओ व कुछ बोर्ड पर लिखकर भी दिखाओ। इस दिन पाठ में आए शब्दों के साथ कई तरह के काम किए गए। इसमें उन्हें अर्थ के स्तर पर अपरिचित लग रहे व नुक़्ते वाले शब्दों, जो लिखने में ख़ास ध्यान माँगते हैं, पर कार्य शामिल था।

गतिविधि 2 : शब्द दीवार

सभी बच्चों को अपनी-अपनी पाठ्यपुस्तक को खोलने और पाठ में आए नए शब्दों तथा ऐसे शब्दों को ढूँढ़ने के लिए कहा गया जिनको समझने में उन्हें परेशानी हो रही थी, इन सारे शब्दों को बच्चे बोलते गए और बोर्ड पर एक ओर लिखते गए। जैसे– पुश्तैनी, गुदगुदाना, उकेरना, कृषि, अँगरखा, माथा ठनकना, कातर आँखें, त्योरियाँ चढ़ना, उत्सुकता, सलाम, आदि। अब इन शब्दों पर बच्चों के साथ चर्चा कर समझ बनाने का प्रयास किया गया।

नुक़्ता शब्द : उर्दू, अरबी और फ़ारसी से हिन्दी भाषा में आए शब्दों के सही उच्चारण के लिए वर्णों के नीचे नुक़्ता लगाना पड़ता है। इससे शब्द का अर्थ भी बदल जाता है, जैसे– खुदा / ख़ुदा में, खुदा का मतलब खुदी हुई और ख़ुदा का मतलब भगवान। नुक़्ता एक छोटी-सी बिन्दी होती है जो वर्ण के नीचे लगती है। पाठ में आए नुक़्ता वाले शब्दों, जैसे– फ़नकार, डिज़ाइन, ज़रूर, नफ़ीस, आवाज़, नज़र, सफ़ेद, काफ़िर, तरफ़, इन्तज़ार, हुज़ूर, शहज़ादा, आदि की सूची बनाई गई। छात्रों से ऐसे वाक्य बनवाए गए जिनमें नुक़्ता वाले शब्दों का प्रयोग हो। छात्रों से उन शब्दों का उच्चारण करने को कहा।

उसके बाद प्रत्येक शब्द पर वाक्य बनाने का अभ्यास समूहों में किया गया। अब बच्चों को तीन समूहों में बाँटकर निम्न कार्य चार्ट पर करने को दिया गया :

समूह 1 : बोर्ड पर लिखे सभी शब्दों को उनके अर्थ के साथ चार्ट पर लिखकर शब्द दीवार बनाएँगे।

समूह 2 : प्रत्येक शब्द पर एक-एक वाक्य बनाएँगे और उन्हें चार्ट पर लिखेंगे।

समूह 3 : इन शब्दों में से नुक़्ता वाले शब्दों को छाँटकर उनपर एक-एक वाक्य बनाकर चार्ट पर लिखेंगे।

समूह कार्य करने के बाद बच्चों ने इसे बड़े समूह में पढ़कर साझा किया। उसके बाद इन तीनों चार्टों पर लिखे शब्दों एवं उनसे बने वाक्यों को अपनी-अपनी कॉपी में लिखा।

गतिविधि 3 : आज का सवाल

बच्चों को कहा गया कि पाठ में आए कुछ शब्दों का उपयोग करते हुए एक-एक कहानी बनाइए और एक शीर्षक भी दीजिए। रोज़ की तरह यह एक सृजन कार्य था जो लम्बा था और इसमें समग्र समझ व नया गढ़ने के अभ्यास की अपेक्षा थी।

पाँचवाँ दिन

समय : 1 घण्टा

आवश्यक सामग्री : चार्ट, ग्लू, पेंसिल, कलर, पाठ्यपुस्तक, ए-4 साइज़ का पेपर, चार्ट पर लिखी हुई कविता, आदि।

गतिविधि 1 : बातें पिछले दिन की

रोज़ की तरह ही पहले बच्चों के द्वारा बनाई सामग्री, यथा– आज की कहानियों को एकत्र कर कक्षा में डिस्प्ले किया गया और उन कहानियों को बच्चों की ज़ुबानी सुना। एक दूसरे की कहानियों को देखने और पढ़ने का अभ्यास किया गया।

गतिविधि 2 : शब्दों में भेद

बच्चों से कहा गया कि आज हम पाठ के साथ एक और मज़ेदार खेल खेलेंगे। हम ऐसा करते हैं कि पाठ में आए नाम, काम, विशेषता और किसी के नाम के स्थान पर आए शब्दों के अलग-अलग कार्ड बनाते हैं। इसके लिए बच्चों के चार समूह बनाए और उन्हें अलग-अलग प्रकार के शब्द छाँटते हुए उनका शब्द कार्ड बनाने का कार्य दिया गया।

इसमें हम बच्चों की मदद करते हैं, जहाँ पर उन्हें कोई बात समझ नहीं आई या उन्होंने ग़लत सूची बना ली। जब चारों समूहों ने अपना-अपना काम कर लिया तब इन सभी शब्द कार्डों को एक जगह अच्छे-से मिला दिया, तत्पश्चात उन्हें संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण एवं क्रिया शब्द के रूप में अलग-अलग करने को कहा। उन्हें बताया कि जो नाम हैं उन्हें संज्ञा कहते हैं; जो शब्द काम का बोध कराते हैं वह क्रिया कहलाते हैं; जो शब्द संज्ञा की विशेषता बताते हैं वे विशेषण; और जो शब्द संज्ञा के स्थान पर बोले जाते हैं, सर्वनाम कहलाते हैं।

उन शब्द कार्डों को अब अलग-अलग कर नामों को संज्ञा के डिब्बे में, नामों के स्थान पर बोले जाने वाले शब्दों को सर्वनाम के डिब्बे में, कार्य होने का बोध कराने वाले शब्दों को क्रिया वाले और विशेषता वाले शब्दों को विशेषण के डिब्बे में रखने को कहा।

इसके बाद शिरोरेखा और पूर्ण विराम का महत्त्व बताया गया। एक शिरोरेखा के ग़लत प्रयोग से पूरे शब्द का अर्थ ही बदल जाता है उसी प्रकार अर्ध विराम और पूर्ण विराम से भी वाक्य के अर्थ बदल जाते हैं। जैसे :

'रोको मत', जाने दो।

'रोको', मत जाने दो।

गतिविधि 3 : खेल–खेल में कविता

बच्चों के साथ एक खेल खेलते हैं। जैसे पाठ में आया है 'ख़रगोश की सी कातर आँखें'। पशु-पक्षियों से तुलना करते हुए और भी बहुत-सी बातें आम बोलचाल में कही जाती हैं, जैसे– 'हिरन जैसी चाल'। ऐसी ही कुछ और बातें मिलकर ढूँढ़ते हैं और बच्चे जिन बातों को बताते हैं उन्हें बोर्ड पर लिखते हैं। जैसे– कौवे जैसी काँव-काँव, भालू जैसे बाल, जिराफ़ जैसी गर्दन, कुत्ते जैसा वफ़ादार, गाय जैसा भोला-भाला और बन्दर जैसा लाल मुँह आदि। बच्चों के साथ इन सब उदाहरणों को तुकबन्दी कर कविता के रूप में गूँथा गया :

ख़रगोश की सी कातर आँखें।

हिरन जैसी उसकी है चाल।

कौवे जैसा काँव-काँव करता।

भालू जैसे उगे हैं बाल।

जिराफ़ जैसी गर्दन उसकी।

कुत्ते जैसा है, वफ़ादार।

गाय जैसा भोला-भाला।

बन्दर सा है मुँह लाल।

गतिविधि 5 : आज का सवाल

छात्रों से कुछ ऐसी ही और बातों को इकट्ठा करने को कहा गया और उनको कविता में जोड़कर आगे बढ़ाने को कहा गया।

छठवाँ दिन

समय : 1 घण्टा

आवश्यक सामग्री : चार्ट, ग्लू, पेंसिल, कलर, पाठ्यपुस्तक, ए-4 साइज़ का पेपर, आदि।

गतिविधि 1 : बातें पिछले दिन की

बच्चों के साथ पिछले दिन की गतिविधियों पर चर्चा करते हुए उनके द्वारा इकट्ठी की गई बातों को कविता में जोड़ा गया।

गतिविधि 2 : पाठ में मुहावरे

छात्रों को मुहावरों से परिचित कराया और पाठ में आए मुहावरों की मदद से चर्चा को आगे बढ़ाया। दिल धक-धक करना, बदहवास होना, आँखें सिकोड़ना, आँखें फैलाना, आँख उठाकर देखना, जैसे पाठ में आए और आँखों से सम्बन्धित अन्य मुहावरों पर बातचीत करते हुए पूछा गया कि मुहावरों के रूप में ये बातें आप लोगों ने क्या पहले भी सुनी हैं। यदि नहीं, तो ज़रा अन्दाज़ लगाओ कि इनका क्या मतलब होता होगा, आदि। ऐसे सवालों की मदद से बच्चों की इन मुहावरों पर समझ बनाई गई। इसके लिए नीचे दिए अभ्यास करवाए गए।

- बच्चों को पाठ से इन मुहावरों को छाँटकर बोर्ड पर लिखवाया गया।
- सूची बन जाने के बाद प्रत्येक मुहावरे पर चर्चा कर समझ बनाने का प्रयास किया।
- मुहावरों का अर्थ उनके सामने बोर्ड पर लिखवाया।
- मुहावरों को वाक्यों में प्रयोग कर लिखवाया।
- अन्य मिलते-जुलते मुहावरों को बताया और लिखवाया गया।
- इन्हें चार्ट पर और कॉपी में भी लिखवाया।

आँखों पर आधारित कुछ मुहावरों पर बच्चों के साथ चर्चा की गई। उदाहरण स्वरूप, आँखें तरेरना, आँखें लाल होना, आँखें भर आना, आँखें खुली की खुली रह जाना, आँखों का तारा होना, आँख का काँटा होना, आँखें बिछाना, आँखों में धूल झोंकना, आँखों से गिरना, आँखें दिखाना, आँख का अन्धा नाम का नैन सुख, आँखें बन्द होना, आदि।

गतिविधि 4 : हमारा पाठ और हमारा परिवेश

इसके बाद लेख की सामग्री की परिवेश से जोड़कर चर्चा की गई। बच्चे इस गतिविधि से, पाठ की विषयवस्तु का हमारे घर-गाँव एवं अन्य विषयों से जुड़ाव समझ सकेंगे। इसके लिए बच्चों से निम्न पहलुओं पर चर्चा कर समझ बनाने का प्रयास किया गया :

पुराना समाज और राजशाही : इतिहास में बुलन्द दरवाज़े का परिचय, राजा अकबर के बारे में जानकारी, उनका जीवन परिचय, युद्ध नीति, दीन-ए-इलाही धर्म के बारे में जानकारी, उनके द्वारा बनवाई गई इमारतों, क़िले आदि की जानकारी, सल्तनत के विस्तार की जानकारी, आदि पर चर्चा कर समझ बनाना।

हमारा परिवेश हमारा घर-गाँव : अपने गाँव के पुराने घरों या इमारतों पर चर्चा, जैसे– ये घर कब बने होंगे? इन घरों को हमारी भाषा में क्या बोला जाता है? किसने बनाए होंगे? इनपर कैसी नक़्क़ाशी दिखाई देती है? क्या अब भी ऐसे घर बनाए जाते हैं? अगर नहीं, तो क्यों नहीं बनाए जाते होंगे?

स्थापत्य कला : पत्थरों एवं लकड़ी पर पैटर्न, फूल, पत्ती, उड़ते हुए साँप, दौड़ते घोड़े, घण्टियाँ, पत्थरों की नक़्क़ाशी, आदि सब कला के ही नमूने हैं। स्थापत्य कला के बारे में चर्चा कर समझ बनाई गई, जैसे– भवन बनाने की विद्या या वास्तु-विज्ञान ही स्थापत्य कला है, और इसे राजगीरी भी कहते हैं। छात्रों से चित्र बनाकर रंग भरने को कहा गया।

विविध आकृतियाँ : पाठ में बहुत सारी आकृतियों का ज़िक्र किया गया है, जैसे– आयत, वर्ग, त्रिभुज, वृत्त, सीधी रेखा एवं वक्र रेखा, आदि। इन पर चर्चा करना। ये आकृतियाँ अपने घर-गाँव में हमें कहाँ-कहाँ देखने को मिलती हैं, इनके क्षेत्रफल, परिमाप, आदि पर बात करना, तत्सम्बन्धी कुछ सवाल भी बनाए गए।

लेनदेन : गाँव में लेनदेन कहाँ-कहाँ किया जाता है? मज़दूरी में, फल-सब्ज़ी व दूध बेचने में, बाज़ार में ख़रीददारी आदि करने में लेनदेन सम्बन्धी सवाल बनाकर समझ बनाने का प्रयास किया गया।

गतिविधि 5 : आज का सवाल

बच्चों से कहा गया कि अपने गाँव के पुराने घरों के बारे में बड़े-बुज़ुर्गों से पूछकर पता करो कि ये घर कब बने होंगे? इन्हें हमारी भाषा में क्या बोला जाता है? किसने बनवाए होंगे? इनपर कैसी नक़्क़ाशी दिखाई देती है? क्या अब भी ऐसे घर बनाए जाते हैं? अगर नहीं, तो क्यों?

सातवाँ दिन

समय : 1 घण्टा

आवश्यक सामग्री : चार्ट, ग्लू, पेंसिल, कलर, पाठ्यपुस्तक, ए-4 साइज़ का पेपर, वर्कशीट, आदि।

गतिविधि 1 : बातें पिछले दिन की

बच्चों के साथ गत दिवस की गतिविधियों पर बात की और उनके द्वारा गाँव के पुराने घरों के बारे में लिखकर लाई गई बातों को चार्ट पर चस्पा कर कक्षा में डिस्प्ले किया गया।

गतिविधि 2 : आओ ज़रा सोचें

सवालों के ज़रिए कुछ मूल्यों एवं परिस्थितियों पर बच्चों की समझ बनाने के लिए, कुछ सवालों पर बच्चों से चर्चा करना, जैसे– राजा अकबर ने केशव से पूछा कि क्या तुम मुझे ये 'नक़्क़ाशी का' काम सिखाओगे?

इस वाक्य पर सवाल पूछे : क्या अब राजा होते हैं? यदि नहीं, तो क्यों? राजा क्या काम करता होगा? राजा के काम और नक़्क़ाशी के काम में क्या कुछ फ़र्क़ है?

केशव राजा से पूछता है कि क्या आप यह काम कर पाएँगे? राजा कहता है कि परसों ही तो मैंने एक मिट्टी की डलिया ढोने में किसी की मदद की थी, तो क्या यह काम उससे भी ज़्यादा कठिन है?

इस पर पूछा : राजा बड़ा या केशव बड़ा? किस वजह से बड़ा? उम्र की वजह से या काम / ओहदे की वजह से? क्या हमें काम को छोटा-बड़ा मानना चाहिए? काम की वजह से क्या ये छोटा-बड़ा होना आप लोगों को ठीक लगता है? क्या सभी को बराबर मानना चाहिए? अगर सभी को बराबर माना जाए तब कैसा रहेगा? क्या राजा अकबर काम की वजह से लोगों को छोटा-बड़ा मानते रहे होंगे?

बच्चों से प्रश्न किए गए कि क्या आपने कभी किसी की मदद की है? घर में, घर के बाहर गाँव में? या कहीं किसी पशु की, पक्षी की या इंसानों की?

बच्चों से उनके शब्दों में सुना कि उन्होंने किस-किस की मदद की है और कैसे? बच्चों को मौक़ा दिया गया कि वे अपने अनुभवों को सबके सम्मुख साझा करें।

गतिविधि 3 : अरे वाह! हमने सीखा

बच्चों को निम्न टास्क एक वर्कशीट के रूप में करने को दी गई :

प्रश्न 1. पता हो तो लिखिए।

कृषि के उपकरणों के नाम लिखिए :

....

पत्थर किन कार्यों में उपयोग में आता है? उनके नाम लिखिए :

....

लकड़ी से बनने वाली वस्तुओं के नाम लिखिए :

....

बढ़ई के औज़ारों के नाम लिखिए :

....

प्रश्न 2. निम्न शब्दों का वाक्य में प्रयोग कीजिए :

बुदबुदाना ....

फुसफुसाना ....

गुनगुनाना ....

बड़बड़ाना ....

प्रश्न 3. नीचे दिए गए नुक़्ता शब्दों से एक कविता बनाइए :

फ़नकार, ज़रूर, नज़र, काफ़िर, इन्तज़ार, हुज़ूर, मज़दूर, मज़बूत

प्रश्न 4. 'नन्हा फ़नकार' पाठ को अपने शब्दों में लिखिए?

....

किसने, कितना सीखा ?

बच्चों के साथ इन गतिविधियों को करने के बाद, निर्धारित किए गए सीखने के प्रतिफलों के आधार पर उनका आकलन किया गया। बच्चों ने समूह में कार्य करना सीखा जिससे उनमें एक दूसरे की बात सुनना, साथ मिलकर काम करना, समय का ध्यान रखते हुए काम करना, स्वयं को अभिव्यक्त करना, आदि आदतें भी विकसित हुईं।

ऊपर किए गए आकलन के बाद बच्चों के सीखे हुए पर मेरी राय

एक दृष्टि से देखा जाए तो पूर्व में होने वाली सभी गतिविधियों से सीखने के साथ-साथ निरन्तर आकलन भी होता आ रहा है। जब हम बच्चों को इन अलग-अलग गतिविधियों में अपनी लिखित और मौखिक अभिव्यक्ति देते हुए निरन्तरता में देखते रहते हैं तो बच्चों के सीखने को लेकर हमारी भी एक स्तर की समझ बनती रहती है, जो हमें उनके बारे में सीखने के प्रतिफलों के सापेक्ष सही राय बनाने में मदद करती है। हो सकता है कि अभी भी कुछ बच्चे सीखने के प्रतिफल के अनुरूप न सीख पाए हों, उनको ध्यान में रखते हुए अगले पाठ की गतिविधियों में उन्हें सिखाने पर ज़्यादा ध्यान दिया जाएगा, परन्तु यह हम तभी कर सकेंगे जब पिछले पाठ में हुए आकलन का विश्लेषण हमारे पास हो। देखा जाए तो आकलन हमें यह दृष्टि दे जाता है कि अब किस बच्चे को क्या मदद करनी है। इस प्रकार हमारा 'नन्हा फ़नकार' पाठ पूरे 7 दिनों तक चला और उसपर पूरे 10 सीखने के प्रतिफलों को ध्यान में रखकर कार्य किया गया और अन्त में उन्हीं को ध्यान में रखकर बच्चों का आकलन भी किया गया।

आकलन ने मुझे न केवल हर बच्चे की क्षमता को जानने में मदद की बल्कि कक्षा में क्या काम किया जाना है, यह निर्धारित करने में भी मदद की। मैंने पाया कि कुछ बच्चे कक्षा शिक्षण में काफ़ी रुचि लेते हैं और काम भी तय समय से पहले कर लेते हैं। मुझे महसूस हुआ कि ये अन्य बच्चों को सिखाने एवं उनसे गतिविधियाँ करवाने में मदद कर सकते हैं और समूह का नेतृत्व कर सकते हैं। साथ ही यह भी समझ आया कि किन बच्चों के साथ किस ख़ास प्रकरण पर पुनः काम करना होगा।

अनीता ध्यानी विगत ढाई दशक से शिक्षा में काम कर रही हैं। वे वर्तमान में राजकीय प्राथमिक विद्यालय देवराना, जिला पौड़ी, उत्तराखंड में प्रधानाध्यापिका हैं। वे प्राथमिक कक्षाओं में सभी विषय पढ़ाती हैं। उनकी कहानी, कविताएँ एवं लेख लिखने और हिन्दी भाषा शिक्षण में विशेष दिलचस्पी है। अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ मिलकर बच्चों के लिए बाल साहित्य मेलों का आयोजन किया है।

सम्पर्क : anudhyani929@gmail.com

घर जाने की पूरी छुट्टी

मुकेश मालवीय



स्कूल बन्द हुए कितने महीने निकल गए? हमको स्कूल की बहुत याद आती है। पहले किसी कारण से या बीमार हो जाने पर जब हम स्कूल नहीं जा पाते तो अच्छा लगता था कि आज स्कूल नहीं जाना है। लेकिन अब स्कूल ही नहीं जाना है, यह सोचकर बहुत बुरा लगता है। स्कूल में दोस्त होते हैं, टीचर होते हैं और टाइम होता है। टाइम का पता घण्टी से चलता है। हमारे बस्ते में किताब के अलावा भी और चीज़ें होती हैं। किसके बस्ते में क्या है, यह पक्के दोस्त को पता होता है। स्कूल में बहुत-सी बातें हमें अपने दोस्तों से पता चलती हैं। स्कूल में पढ़ाई होती है, इस पढ़ाई में कुछ बच्चे तेज़ होते हैं, कुछ नहीं होते। जो तेज़ नहीं होते, उन्हें टीचर की डाँट पड़ती है। कई बार डाँट क्यों पड़ रही है, पता नहीं चलता। इन सब बातों की हमको बहुत याद आती है। इतने सारे दिन निकल गए, हमारा स्कूल बन्द ही है।

अभी कुछ दिन से मेरे मोहल्ले के दो-तीन दोस्त और मैं रोज़ दिन में कभी-न-कभी एक बार स्कूल तक जाते हैं और उसकी दीवार छूकर वापस आ जाते हैं। मेरी एक दोस्त कहती है कि स्कूल की दीवार छूने से हमको विद्या आएगी। मुझे स्कूल की दीवार छूना बहुत अच्छा लगता है। सुबह से ही मन करने लगता कि दीवार छूने चलें। किसी दिन कोई दोस्त नहीं आता तब मैं अकेले ही जाकर दीवार छूती या दीवार से पीठ लगाकर देर तक खड़ी रहती। खड़े-खड़े मैं सोचती कि दरवाज़ा खोलूँ और स्कूल शुरू करने वाली पहली लम्बी घण्टी बजा



दूँ। एक दिन हम दो-तीन पक्के दोस्त दीवार छूने गए। मैं स्कूल के पीछे की तरफ़ वाली दीवार की तरफ़ गई। दोस्त लोग भी मेरे पीछे आ गए। आज हमने दीवार की खिड़की को छुआ। खिड़की को थोड़ा ज़ोर से छूने से वह थोड़ी-सी खुल गई। उस खिड़की को बन्द करने वाली जो साँकल थी वह थोड़ी बड़ी थी। खिड़की को धकाने से थोड़ी-सी जगह खुल गई थी। हमारा मन हुआ कि कमरे के अन्दर जाना चाहिए। हमने आपस में तय नहीं किया, फिर भी हम एक के बाद एक खिड़की में फँसते हुए अन्दर कमरे में कूद गए। कमरे में फ़र्श पर बहुत धूल जमी थी। हमारे पैरों के निशान फ़र्श पर बन गए। मेरे एक दोस्त ने वहाँ पड़ी झाड़ू उठाई और झाड़ने लगा। हमने मिलकर तीनों कमरे झाड़ दिए। फिर हमने टाटपट्टी को झटकारा। टाटपट्टी बिछाकर हम उसपर बैठ गए। तभी हमें मास्टरजी की कुर्सी दिखी। हमने उसे भी झाड़-पोंछ दिया। इतनी देर तक हमने आपस में कोई बात नहीं की। कुछ देर बाद वापस हम खिड़की से कूदे और खिड़की को ठीक से खींच लिया। अब हम वापस घर जा रहे थे। मुझे ऐसा लग रहा था जैसे दिनभर स्कूल लगने के बाद घर जाने की पूरी छुट्टी हुई है। यह बात हम तीन-चार दोस्तों के बीच की थी। अब हम रोज़ ही स्कूल में चुपके से जाकर साफ़-सफ़ाई कर रहे थे और थोड़ी देर चुपचाप टाटपट्टी पर बैठकर वापस आ रहे थे। स्कूल को अपनी उपस्थिति देने से हमें पक्का विश्वास आ रहा था कि हमें विद्या आएगी ही।

कुछ दिन में हमें अलग-अलग महसूस हुआ कि हमारे अन्य दोस्तों को विद्या नहीं आएगी तो उनका बड़ा घाटा हो जाएगा। हम तीनों-चारों पक्के दोस्तों के भी अलग-अलग कई दोस्त हैं ये हमें पता नहीं था। यह हमें विद्या आने की वजह से हुआ या किसी और वजह से कि हमने एक दूसरे को बताए बिना छुपाकर रखने वाली यह बात अपने दूसरे दोस्तों को बता दी। अब हम चारों मिलते तो हममें से कोई कहती कि वह आज स्कूल नहीं जा पाएगी। वह दोपहर में या शाम को हमसे छुपकर नए दोस्तों के साथ गुप्त योजना को अंजाम दे देती। एक दिन भरी दोपहर में मैं अपने चार नए दोस्तों के साथ स्कूल के अन्दर चुपचाप टाटपट्टी पर बैठी थी,



तभी चार और दोस्त उसी गुप्त रास्ते से आ गए। हम एक दूसरे को देखकर सकपका गए, पर वे बिना हल्ला किए दूसरे कमरे की टाटपट्टी पर बैठ गए थे।

यह बात अब हमारे गाँव के सब बच्चों को पता है। हम सभी चाहते हैं कि हमको विद्या आए।

हम सबने अब तय किया है कि यह बात टीचर को पता नहीं चलनी चाहिए। टीचर यह बात मान ही नहीं सकते कि स्कूल की दीवार छूने और स्कूल के अन्दर साथ बैठने से भी विद्या आती है।

*लेख के सभी चित्र पावर झंडा गाँव के स्कूल और बच्चों के हैं। सभी चित्र *टीचर जर्नी* फ़िल्म से साभार।

मुकेश मालवीय पिछले दो दशक से भी ज़्यादा समय से स्रोत शिक्षक के रूप में सरकारी और ग़ैर-सरकारी भूमिकाओं में सक्रिय हैं। कक्षा अनुभवों को लेकर सतत लिखते रहते हैं। वर्तमान में अनुसूचित जाति विकास विभाग के शासकीय आवासीय ज्ञानोदय विद्यालय, होशंगाबाद (मध्यप्रदेश) में शिक्षक पद पर कार्यरत हैं।

सम्पर्क : mukeshmalviya15@gmail.com

सिद्धान्त बनाम व्यवहार

अनवर हुसैन

शिक्षक प्रशिक्षण के दौरान जो कुछ होता है उसे 'कक्षा में करना सम्भव नहीं है', शिक्षकों की इस प्रतिक्रिया की पड़ताल करता है यह लेख। कक्षा में बच्चों के साथ काम करने का विस्तृत विवरण देते हुए लेखक बताते हैं कि व्यवहारिक परिस्थितियों में बच्चों के साथ अवधारणाओं पर काम करते हुए किस तरह की चुनौतियाँ आती हैं और यह भी कि उन्हें इनके क्या सम्भावित कारण और हल समझ आए। लेख में वे इन कारणों की चर्चा करते हैं और अपने अनुभव साझा करते हैं कि इन व्यवहारिक चुनौतियों का सामना करने में क्या-क्या मददगार हो सकता है। सं.

वर्तमान समय में विषयगत व शिक्षा के परिप्रेक्ष्य विषयक अनेक शिक्षक प्रशिक्षणों का आयोजन किया जा रहा है। इन प्रशिक्षणों में शिक्षकों के साथ विषयों की अवधारणात्मक व सैद्धान्तिक समझ पर काम किया जाता है। पिछले 8-10 वर्ष से अवधारणाओं के साथ ही कक्षा-कक्षीय प्रक्रियाओं, उपयुक्त सहायक सामग्री के उपयोग, गतिविधि-आधारित शिक्षण एवं बाल-केन्द्रित शिक्षण पर काफ़ी ज़ोर दिया जा रहा है। क्या ये तमाम अवधारणाएँ सम्पूर्णता में कक्षा-कक्ष में जा पा रही हैं। गहराई से छानबीन करने पर हम इस सवाल का जवाब न में ही पाएँगे, तो वो कौन-से कारण रहते हैं जिनकी वजह से ये अवधारणाएँ / सिद्धान्त बच्चों तक उस रूप में नहीं पहुँच पा रहे हैं। यह लेख हमें कुछ इसी तरह के कारणों को खोजने में मदद कर रहा होगा। इस खोज में, मैं आपके साथ शिक्षक कार्यशाला व बच्चों के साथ किए गए काम के अपने अनुभवों को रखने का प्रयास कर रहा हूँ।

प्राथमिक कक्षाओं को गणित पढ़ाने वाले शिक्षकों के साथ एक कार्यशाला में सन्दर्भदाता के रूप में काम करने का अवसर मिला। कार्यशाला में संख्या और संक्रियाओं पर काम किया गया, जिसके तहत बच्चों को विभिन्न तरह की सहायक सामग्री (मोतीमाला, डीन्स ब्लॉक, तीली-बण्डल, कंकड़) का उपयोग करते हुए प्रभावी शिक्षण की विधाओं पर विमर्श किया गया। कार्यशाला में पहले शिक्षकों के साथ संख्या और संक्रियाओं की अवधारणात्मक समझ पर चर्चा की गई। तत्पश्चात शिक्षण अधिगम सामग्री (टीएलएम) का उपयोग करते हुए इन अवधारणाओं पर बच्चों के साथ काम पर चर्चा की गई। इसी कड़ी में बारी-बारी से कुछ सवाल देते हुए शिक्षकों की भी अवधारणा की स्पष्टता व टीएलएम के उपयोग की समझ को पुख़्ता किया गया। चर्चा के दौरान शिक्षकों का आग्रह था कि सर, आप जो बात कर रहे हैं बहुत अच्छी है, और अगर बच्चों के साथ इस तरह से काम किया जाए तो बच्चों में बहुत अच्छी तरह से अवधारणाओं का विकास किया जा सकता है। लेकिन हम जब स्कूल में होते हैं तो वहाँ की स्थितियाँ बिलकुल ऐसी नहीं होती हैं जैसी हम यहाँ चर्चा कर रहे हैं। व्यवहारिक स्तर पर अपनी कुछ चुनौतियाँ होती हैं। हमें उनमें तालमेल बैठाते हुए काम करना होता है। शिक्षकों की इन प्रतिक्रियाओं को मैंने अपने

तर्कों के आधार पर काटने की असफल कोशिश की। लेकिन मन में एक सवाल भी कौंध गया कि क्या व्यवहारिक स्थितियाँ सही में इतनी फ़र्क़ होती हैं जो इन अवधारणाओं पर काम करने में अवरोधक होती हैं। ख़ैर, अन्ततः इस काम से अपेक्षा यह थी कि शिक्षक कुछ इसी तरह का काम अपने कक्षा-कक्ष में भी करने लगेंगे और कार्यशाला के अन्त में शिक्षकों की उत्साहजनक प्रतिक्रियाओं को देखते हुए मान लिया गया था कि अब ये सभी शिक्षक अपनी कक्षाओं में इसी तरह से काम करने लग जाएँगे। कार्यशाला के दौरान मन में घर बनाए अपने सवाल 'सिद्धान्त बनाम व्यवहार' का उत्तर तलाशने के लिए सीधेतौर पर प्राथमिक स्तर के बच्चों के साथ काम करने का अवसर मिला और इस अनुभव ने सिद्धान्त के साथ ही कुछ वास्तविकताओं के बारे में भी सोचने को मजबूर किया।

अपनी ख़ुद की समझ को समृद्ध करने व बच्चों के साथ अवकाश के दिनों में आनन्ददायी तरीक़ों से कुछ भाषागत व गणितीय अवधारणाओं के साथ काम करने के उद्देश्य से 10 दिवसीय कैम्प का आयोजन किया गया। इस कैम्प में मुझे कक्षा 1 से 5 तक के बच्चों के साथ गणितीय अवधारणाओं पर काम करने का अवसर मिला। पहले दिन काम के लिए बच्चों को एक अलग कक्ष में लिया गया। मेरे पास कुल 17 बच्चे थे। ये सभी बच्चे कक्षा 1 से 5 तक की कक्षा में नामांकित थे। आम शिक्षक की तरह ही मैंने भी बच्चों को कक्षा में व्यवस्थित करने का असफल प्रयास किया। मैं चाहता था कि बच्चे दरी के अन्तिम छोर पर जाकर एक गोल घेरे में बैठें। काफ़ी मशक़्क़त के बाद एक बार अपनी इच्छानुसार बच्चों को बैठाने में कामयाब भी हो पाया। लेकिन ये क्या, दो मिनट भी नहीं हुए होंगे कि बच्चे फिर से अस्त-व्यस्त हो गए। कुछ बच्चे कमरे में रखी किताबों को खींचने की कोशिश कर रहे थे, कुछ एक दूसरे से बातें करने में मशग़ूल थे, जबकि कुछेक बच्चे आपस में झगड़ने भी लगे थे और इस सबके साथ ही एक साथ बहुत-से बच्चे मेरे पास चिल्ला-चिल्ला कर शिकायतें लेकर आ रहे थे। सर, इसने मुझे मारा, ये मेरी जगह पर बैठ गया, ये किताब छेड़ रहा है, ये कमरे में रखे सामान को छेड़ रहा है, आदि-आदि। ऐसा लग रहा था कि बच्चों के उस समूह को मुझसे कोई सरोकार नहीं था। उन्हें तो बस आपस में बात करने में, एक दूसरे को छेड़ने व शिकायत करने में ही मज़ा आ रहा था। दूसरी तरफ़ मैं यह भ्रम पाले हुआ था कि मैं बच्चों को आनन्ददायी तरीक़े से गणितीय अवधारणाओं को सिखाऊँगा। इस 5 मिनट की प्रक्रिया ने कुछ हद तक मेरे इस भ्रम को ध्वस्त करने में मदद की। ख़ैर, मैंने बच्चों को अपनी तरफ़ मुख़ातिब होने के लिए कहा। एक बार बच्चों का ध्यान अपनी तरफ़ खींचकर अपने पास मौजूद कंकड़ों में से एक-एक कंकड़ उठाते हुए बच्चों से 50 तक गिनती बुलवाई। जैसे ही गिनती ख़त्म हुई, बच्चे अपनी पुरानी शैतानियों के दौर में पहुँच गए और इसी के साथ एक नई समस्या आई, बच्चे बार-बार टॉयलेट व पानी के बहाने बाहर जाने लगे। इस समस्या की एक दिक़्क़त यह भी थी कि जब एक बच्चा जाने के लिए पूछता तो उसके साथ और 5-7 बच्चे उसी समस्या को दोहराकर एक साथ बाहर जाने के लिए कहने लगते। इससे निजात पाने का एक ही तरीक़ा था बच्चों को सख़्ती से रोककर एक-एक कर बाहर जाने दिया जाए। पता नहीं यह तरीक़ा ठीक था या नहीं, मगर मैंने उस समय यही तरीक़ा काम में लिया। एक बच्चे को भेजा जाता और उसके आने पर ही दूसरे बच्चे को बाहर भेजा जाता। हाँ, इसमें इतनी शिथिलता

> जब मैंने बच्चों के उप-समूह बनाए और इन समूहों में सामग्री दी तो प्रत्येक बच्चे को अपने हाथ से कुछ करने का अवसर मिला। इसी तरह से जब बच्चों को आपस में एक दूसरे को टास्क देने के लिए कहा गया और उस टास्क को ज़िम्मेदार बच्चा सही कर रहा है या ग़लत, इसपर सभी बच्चों का पूरी मुस्तैदी से ध्यान रहता था।

ज़रूर थी कि अगर कोई बच्चा बहुत ज़िद करता तो उसे भी साथ ही भेज दिया जाता था। इसमें बड़ी सफलता मिली।

जब मैंने बच्चों के उप-समूह बनाए और इन समूहों में सामग्री दी तो प्रत्येक बच्चे को अपने हाथ से कुछ करने का अवसर मिला। इसी तरह से जब बच्चों को आपस में एक दूसरे को टास्क देने के लिए कहा गया और उस टास्क को ज़िम्मेदार बच्चा सही कर रहा है या ग़लत, इसपर सभी बच्चों का पूरी मुस्तैदी से ध्यान रहता था। जैसे– जब मोतीमाला से किसी बच्चे को कोई संख्या गिनकर वहाँ कार्ड लगाने, कुछ मोतियों के समूह को जोड़कर संख्या बताने, समूह में से संख्या कम करके बचे मोतियों की संख्या बताने की टास्क बच्चों द्वारा दी जा रही थी तब टास्क देने वाले बच्चे टास्क करने वाले की हर प्रक्रिया पर बहुत बारीक़ी से नज़र बनाए हुए थे और ग़लत करने पर फटाक से बोल रहे थे कि ये ग़लत है और टास्क पूरा करने वाला बच्चा फिर से की गई ग़लती को ढूँढ़ने में जुट जाता था। समय के साथ मुझे भी समझ आने लगा था कि इन बच्चों को सीखने-सिखाने में मशग़ूल कैसे रखा जा सकता है और मुझे यह बात समझ में आने लगी कि जब भी बच्चों की रुचि की सामग्री उनके हाथ में होती है या उनको बाँधकर रखने वाली गतिविधि बच्चों के साथ हो रही है तो मुझे उनको अनुशासित करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ रही थी, वह स्व-अनुशासित हो रहे थे और जैसे ही उनकी रुचि के बाहर ज़रा-सा भी काम होने लगता तो बच्चों को फिर से वही शैतानियाँ सूझना शुरू हो जाती थीं। ख़ैर, ये सब बातें व्यवस्था सम्बन्धी थीं। मैंने अपने मूल उद्देश्य गणितीय अवधारणाओं पर काम की कोई बात ही नहीं की है। अब उसपर भी चलते हैं।

मुझे यह बात समझ में आने लगी कि जब भी बच्चों की रुचि की सामग्री उनके हाथ में होती है या उनको बाँधकर रखने वाली गतिविधि बच्चों के साथ हो रही है तो मुझे उनको अनुशासित करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ रही थी, वह स्व–अनुशासित हो रहे थे और जैसे ही उनकी रुचि के बाहर ज़रा–सा भी काम होने लगता तो बच्चों को फिर से वही शैतानियाँ सूझना शुरू हो जाती थीं।

जैसा कि मैंने ऊपर बताया था कि इन बच्चों के समूह में कक्षा 1 से 5 में अध्ययनरत बच्चे शामिल थे। मैं यह मानकर चल रहा था कि ज़्यादातर बच्चों को संख्या नाम और संख्या चिह्न की पहचान व गिनती आती होगी। लेकिन मुझे यह पता लगाना था कि किसको कहाँ तक संख्या पहचान व गिनना आता है। इसके लिए सर्वप्रथम मैंने अपने पास रखे कंकड़ों के ढेर से एक-एक कंकड़ उठाते हुए बच्चों को हरेक कंकड़ के साथ अगली संख्या बोलने के लिए कहा। बच्चों ने यही किया। इस प्रक्रिया को करते हुए 50-50 कंकड़ों के ढेर बनवाए गए। इसके बाद यह पता लगाने के लिए कि किस बच्चे को कहाँ तक गिनना आता है। मैंने एक-एक बच्चे को सामने बुलाकर मेरे द्वारा की गई गतिविधि दोहराने के लिए कहा। एक बार तो सभी बच्चे कंकड़ के ढेर की तरफ़ दौड़ पड़े। उनमें से एक का चयन करना मेरे लिए मुश्किल भरा काम था। जैसे-तैसे एक को बुलाकर यह काम शुरू किया तो थोड़ी देर बाद महसूस हुआ कि सामने वाला बच्चा कंकड़ गिन रहा है जबकि बाक़ी बच्चे अपनी शैतानियों या आपसी चर्चा में मशग़ूल हो गए हैं और मैंने जो बच्चों की बैठक व्यवस्था की थी उसका कहीं अता-पता नहीं था। समझ आया कि यह तरीक़ा चलने वाला नहीं है। तुरन्त तय किया कि बच्चों को छोटे-छोटे उप-समूहों में विभाजित करके उन समूहों में यह काम करवाया जाए। इसमें काफ़ी हद तक क़ामयाबी मिली। अभी भी उप-समूहों में कुछ बच्चे ही सक्रिय काम कर रहे थे और बाक़ी अपनी दुनिया में मस्त थे। कुछ बच्चे यह शिकायत भी कर रहे थे कि सर, यह हमें नहीं करने दे रहा। कुछ 'मैं करूँ-मैं करूँ' की प्रक्रिया में आपस में झगड़ने भी लग गए। इससे भी बड़ी चुनौती यह थी कि इस काम का जो

उद्देश्य सोचा गया था कि इससे मैं यह पता लगा पाऊँगा कि कौन-सा बच्चा कहाँ तक गिनना जानता है, इसे जानने के लिए अलग-अलग समूहों में जाकर देखने की कोशिश कर रहा था। लेकिन फिर भी व्यक्तिगत रूप से एक-एक बच्चे को देख पाना सम्भव नहीं हो पा रहा था। इस चुनौती से निजात पाने के लिए समूह में बच्चों की संख्या को कम किया और प्रत्येक समूह में समय लगाकर समूहों में चल रही प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया में भी मेरे लिए प्रत्येक बच्चे की वास्तविक स्थिति का पता लगाना मुश्किल हो रहा था, क्योंकि प्रत्येक बच्चे का अपना स्तर था। किसी को गिनना बिलकुल नहीं आ रहा था, किसी को मात्रात्मक समझ नहीं थी, कोई बच्चा गिन तो पा रहा था पर एक से एक की संगति नहीं बैठा पा रहा था। इनके साथ काम की रूपरेखा बनाने के लिए मैं इतना ज़रूर समझ पाया था कि इस समूह में केवल एक बच्चा है जिसे 20 से आगे तक गिनती बोलना आता है लेकिन मात्रात्मक समझ और एक से एक की संगति की समझ इसे भी नहीं थी जबकि बाक़ी सभी को 20 तक भी गिनती बोलना नहीं आता था। इस प्रक्रिया ने मुझे आगामी समय में काम की रूपरेखा तय करने का आधार दिया। आज के दिन के काम को यहीं विराम दिया गया।

अगले दिन इसी काम को आगे बढ़ाते हुए बच्चों को फिर से उप-समूहों में बैठाया गया। कल के काम से यह समझ आ गया था कि इन बच्चों के साथ संख्या पूर्व की अवधारणा से काम की शुरुआत करनी होगी। इसलिए आज इस समूह को सीधे गिनने का काम नहीं देकर गणित की सहायक सामग्री, जैसे— ब्लॉक्स, स्ट्रॉ, और लकड़ियों की आकृतियों के टुकड़े देकर उनसे आकृतियाँ बनाने के लिए कहा गया। यह मेरे लिए आश्चर्यजनक था कि सभी बच्चे एकदम शान्त होकर अपनी-अपनी आकृतियों को बनाने में व्यस्त थे। बच्चों को इन सामग्रियों से बदल-बदल कर अलग-अलग तरह की आकृतियाँ बनाने के लिए कहा गया और साथ में यह जोड़ दिया गया कि आपको आकृति बनाते समय उभर रहे पैटर्न को समझने के लिए उन आकृतियों का अवलोकन करना है। अगली कड़ी में बच्चों को कहा गया कि अब आप अलग-अलग रंग के ब्लॉक्स, स्ट्रॉ व लकड़ियों के टुकड़ों को जोड़कर इन आकृतियों को बनाओ और फिर से इनमें बन रहे पैटर्न का अवलोकन करवाया गया।

आज इस समूह को सीधे गिनने का काम नहीं देकर गणित की सहायक सामग्री, जैसे— ब्लॉक्स, स्ट्रॉ, और लकड़ियों की आकृतियों के टुकड़े देकर उनसे आकृतियाँ बनाने के लिए कहा गया। यह मेरे लिए आश्चर्यजनक था कि सभी बच्चे एकदम शान्त होकर अपनी-अपनी आकृतियों को बनाने में व्यस्त थे।

इस प्रक्रिया के दौरान समझ आ रहा था कि हर बच्चा अलग तरह की आकृति सोच रहा था। यह भी समझ आ रहा था कि कुछ एक-दो बार के अभ्यास में ही पैटर्न पकड़ पा रहे थे, जबकि कुछ बच्चे कई अभ्यास के बाद भी इनमें बन रहे पैटर्न को नहीं पकड़ पा रहे थे। इस प्रक्रिया में एक बात और जो समझ आई, ऐसा नहीं था कि जो बच्चे आकृति अच्छी बना रहे थे वो पैटर्न भी उतनी ही जल्दी पकड़ पा रहे हों। कई आकृति भी अच्छी बना रहे थे और पैटर्न भी अच्छे-से पकड़ पा रहे थे, वहीं कई बच्चे आकृति अच्छी बना रहे थे, लेकिन पैटर्न नहीं पकड़ पा रहे थे, जबकि कुछ बच्चे आकृति नहीं सोच पा रहे थे लेकिन पैटर्न को बहुत अच्छे-से पकड़ पा रहे थे। उप-समूहों में यह काम होने के बाद इन आकृतियों और पैटर्न को सामूहिक रूप से सभी बच्चों के सामने भी प्रस्तुत करवाया गया। इन प्रस्तुतियों के दौरान दूसरे समूहों के बच्चे भी उसी सामग्री से और नई आकृतियाँ बनाने की प्रक्रिया बता रहे थे। इस पूरी प्रक्रिया में मुझे और बच्चों दोनों को बहुत मज़ा आ रहा था।

तीसरे दिन के काम को अब तक हुए काम से आगे बढ़ाया गया। एक बार सभी बच्चों से पूछा गया कि कल हमने क्या काम किया था। बच्चों ने आकृति बनाने की बात कही। अच्छा, तो आज हम उन्हीं आकृतियों को फिर से बनाएँगे और देखेंगे कि किस आकृति में कितने ब्लॉक्स, स्ट्रॉ या लकड़ी के टुकड़े लगे हैं और किस रंग की कितनी चीज़ें हैं। बच्चों को उप-समूहों में सामग्री दी गई और कहा गया कि आकृति बनानी है, और जो आकृति बनाई है उसमें कितने ब्लॉक्स, स्ट्रॉ या लकड़ी के टुकड़े लगे हैं उतने ही कंकड़ लेकर उनका समूह बनाना है। फिर इस समूह में से ब्लॉक्स, स्ट्रॉ या लकड़ी के टुकड़ों के रंग के आधार पर अलग-अलग समूह बनाने हैं और अलग-अलग रंग की चीज़ों की संख्या गिनकर पता लगानी है। गिनकर यह भी पता करना है कि किस रंग की चीज़ें कितनी हैं, कौन-सी कम हैं और कौन-सी ज़्यादा। इस काम के दौरान यह ध्यान रखा गया कि शुरुआती आकृति ऐसी बने जिसमें 9 संख्या तक की चीज़ें आ रही हों। बच्चे एक से एक की संगति बैठाते हुए उन चीज़ों को गिन रहे थे। मैं घूम-घूम कर प्रत्येक समूह की प्रक्रियाओं को देख रहा था। इस प्रक्रिया में बच्चों को कई तरह की समस्याएँ आ रही थीं, जैसे– एक से एक की संगति बैठाने में कुछ बच्चे संख्या बोल रहे थे लेकिन चीज़ों को उसी क्रम में नहीं उठा पा रहे थे, तो कुछ चीज़ों को ज़्यादा उठा ले रहे थे लेकिन संख्या उसके अनुसार नहीं बोल पा रहे थे। अवलोकन के दौरान जिस समूह को आवश्यकता लग रही थी उस समूह में बैठकर एक-दो बार उनको एक-एक की संगति बैठाते हुए गिनने का अभ्यास करवाया गया और उस समूह को अभ्यास करने का बोलकर अगले समूह में मदद की गई। इस तरह के कंकड़ों के समूह बनवाने के बाद बच्चों से कहा गया कि अब आपके कंकड़ों का जो समूह बना है उसमें से ब्लॉक्स, स्ट्रॉ एवं लकड़ी के टुकड़ों को रंगों के आधार पर अलग-अलग करना और अन्दाज़ा लगाना है कि कौन-से रंग की चीज़ें अधिक हैं, कौन-से की कम हैं और कौन-से रंग की बराबर हैं। अगले चरण में यही काम कुछ ऐसी आकृतियों के साथ करवाया गया जिनमें 20 तक चीज़ें आ रही हों। चूँकि सभी बच्चे पहले से स्कूल जाते थे और उनके साथ संख्या नाम व संख्या चिह्न पर काम हुआ था, इसलिए वे संख्या नाम व संख्या चिह्न दोनों पहचानते थे। हाँ, इनका स्तर ज़रूर अलग-अलग था। कुछ 20 तक संख्या नाम व संख्या चिह्न पहचान पा रहे थे, जबकि कुछ सिर्फ़ थोड़े संख्या नाम व संख्या चिह्न पहचान पा रहे थे। इस प्रक्रिया में बच्चे एक से एक की संगति, समूहीकरण, क्रमबद्धता, अन्तिम संख्या नाम जो उस समूह की पूरी मात्रा को दर्शाता है, क्रम की अप्रासंगिकता एवं मात्रात्मक समझ बना पा रहे थे। इस प्रक्रिया के दौरान भी यह समझ आ रहा था कि बच्चों की सीखने की गति समान नहीं थी। सभी बच्चे गिनने के इन सभी नियमों को एक साथ नहीं पकड़ पा रहे थे। कुछ बच्चे क्रमबद्धता को समझ रहे थे लेकिन एक से एक की संगति नहीं बैठा पा रहे थे, वहीं कुछ क्रम की अप्रासंगिकता को समझ पा रहे थे लेकिन अन्तिम संख्या नाम पूरे समूह की मात्रा दर्शाता है, यह नहीं समझ पा रहे थे। इस प्रक्रिया ने मेरी इस सीख को और बल दिया कि हरेक बच्चे की सीखने की गति अलग होती है। आज के काम में बच्चे पहले व दूसरे दिन के काम की तुलना में कहीं ज़्यादा अनुशासित नज़र आ रहे थे।

कुछ बच्चे क्रमबद्धता को समझ रहे थे लेकिन एक से एक की संगति नहीं बैठा पा रहे थे, वहीं कुछ क्रम की प्रासंगिकता को समझ पा रहे थे लेकिन अन्तिम संख्या नाम पूरे समूह की मात्रा दर्शाता है यह नहीं समझ पा रहे थे। इस प्रक्रिया ने मेरी इस सीख को और बल दिया कि हरेक बच्चे की सीखने की गति अलग होती है।

आगामी दिनों में काम को आगे बढ़ाते हुए इन उप-समूहों में 20 तक कंकड़ गिनवाकर ढेर बनवाया गया। यह काम दो-तीन बार करवाया

गया। इसके बाद इन्हीं समूहों में बच्चों से संख्या बदल-बदल कर ढेर बनवाए गए, जैसे— 7, 10, 14, 12, 17, 18, 19, 13 इत्यादि। इस काम में बच्चों की सक्रियता पहले दिनों की तुलना में बढ़ रही थी। लेकिन इस प्रक्रिया में मुझे भी पूरा चौकन्ना रहना पड़ रहा था। जहाँ जिस बच्चे को मदद की ज़रूरत है तुरन्त उसके पास जाकर सहयोग कर रहा था। मेरी ज़रा-सी देरी उस प्रक्रिया से बच्चों का मोह भंग कर देती थी। बच्चे अपने-अपने समूहों में कंकड़ों के ढेर बना पा रहे थे। जब बच्चे ढेर बना लेते थे तो इस संख्या को मोतीमाला पर भी गिनवाया जा रहा था। इसी तरह का काम बाँस की तीलियों के साथ एक से एक की संगति बैठाते हुए भी किया गया। जब बच्चों को कंकड़ व तीलियों के ढेर बनाने के लिए संख्या बताई जा रही थी तो कंकड़ अथवा तीलियों के ढेर बनाने के बाद उस संख्या को मोतीमाला पर बताने के लिए भी कहा जा रहा था। बच्चों द्वारा मोतीमाला पर संख्या बताने के बाद उसे मेरे द्वारा बोर्ड पर उतनी ही आकृति बनाकर उनके सामने उसके संख्या चिह्न को लिखा जा रहा था। अब बच्चों को मूर्त से अर्ध-मूर्त और अर्ध-मूर्त से फिर अमूर्त की दिशा में लेकर जाने का प्रयास था। पर्याप्त अभ्यासों के बाद अब बच्चे संख्या पूर्व व गिनने की अवधारणा को समझ रहे थे।

चूँकि अब बच्चे 1 से 20 तक की संख्या को गिनने और संख्या नाम व संख्या चिह्न को पहचानने लगे थे। यहाँ से बच्चों को अगली अवधारणा यानी जोड़-घटाव की तरफ़ बढ़ाया जा सकता था। इस प्रक्रिया को फिर से कंकड़ों की मदद से शुरू किया गया। एक बार फिर बच्चों को 20-20 कंकड़ों के ढेर बनाने के लिए कहा गया। फिर अलग-अलग अभ्यास देकर बच्चों को दो समूहों को मिलकर बनने वाले एक बड़े समूह की मात्रा पता करने का अभ्यास करवाया गया। इसी तरह के अभ्यास बाँस की तीलियों व मोतीमाला पर भी करवाए गए। दो समूहों को मिलाने के अभ्यासों के बाद बच्चों से इसी तरह से बड़े समूह में से छोटे समूह निकालने का अभ्यास करवाया गया। जब मैंने जोड़-घटाव की अवधारणा पर काम की शुरुआत की तो बच्चों के साथ पूर्व अवधारणाओं पर किए काम का जुड़ाव इस प्रक्रिया में स्पष्ट रूप से देख पा रहा था, चाहे वो गिनने की प्रक्रिया हो, समूहीकरण की या फिर मात्रात्मक समझ की बात हो। इससे मैं यह समझ पाया कि गणित की अवधारणाएँ एक दूसरे से गुँथी हुई हैं और अगर पूर्व अवधारणा पर ठीक से काम नहीं हुआ है तो बच्चों के लिए अगली अवधारणा को पकड़ पाना न सिर्फ़ मुश्किल, बल्कि असम्भव है। जोड़-घटाव की अवधारणा पर ठोस चीज़ों की मदद से बहुत शुरुआती काम ही हो पाया। लेकिन मैं इन 10 दिनों में बस यहीं तक पहुँच पाया। पूरी अवधारणा को रखने के लिए आगामी समय में बच्चों के साथ अभी और काम की आवश्यकता होगी।

मैं अब तक पर्यावरण अध्ययन व सामाजिक विज्ञान विषय में काम करता आया था। गणित शिक्षण का यह पहला अनुभव था। इस मायने में यह काम मेरे लिए भी कम चुनौतीपूर्ण नहीं था। शिक्षकों के साथ कार्यशाला से पूर्व मैंने उन सभी अवधारणाओं का गहन अध्ययन किया जिनपर उनके साथ काम करना था। कार्यशाला में विमर्श के दौरान काम में ली जाने वाली सहायक सामग्री के उपयोग को भी पहले अपने स्तर पर करके समझा गया। इसी के साथ पहले से गणित विषय में काम करते आ रहे साथी के सत्र का अवलोकन करते हुए सत्र के संचालन की बारीक़ियों को भी समझा। कार्यशाला में सहायक सामग्री का उपयोग करते हुए अवधारणा पर अच्छे-से काम भी कर पा रहा था। लेकिन विमर्श के दौरान शिक्षक साथियों के बच्चों के साथ कक्षा-कक्षीय अनुभवों पर आधारित सवालों का जवाब देते समय अपने-आप में रह गई कमी को भी स्पष्ट रूप से चिह्नित कर पा रहा था। मुझे आभास हो रहा था कि सिद्धान्त और व्यवहार में कोई तो खाई है और इसे पाटने के लिए एक सहजकर्ता के पास दोनों तरह के अनुभवों का समावेश होना बहुत ज़रूरी है। इसी सीख ने

मुझे बच्चों के साथ काम करके अनुभव लेने के लिए प्रेरित किया। मेरी पूर्व की अवधारणा की समझ और कार्यशाला के वास्तविक सवालों को साथ लेकर मैंने बच्चों के साथ काम की योजना बनाई। योजना बनाते समय मैंने हर उस बात का ध्यान रखा जिससे उस अवधारणा पर बेहतर तरीक़े से काम हो सकता है।

गणित विषय पर काम का अनुभव नहीं होने की मेरी अपनी सीमाएँ थीं। मैं अपनी समझ की इन सीमाओं को बच्चों के साथ काम करते हुए महसूस कर रहा था और यह भी समझ पा रहा था कि मेरी योजना में कहाँ अधूरापन रह गया था। काम करते-करते शायद अपनी इस समझ को और बेहतरी की तरफ़ लेकर जा पाऊँगा। लेकिन इन दोनों अनुभवों के आधार पर कह सकता हूँ कि अवधारणा पर काम की पहली शर्त होती है बच्चों को उस अवधारणा को समझने के लिए तैयार करना, जिसे सरल या आम बोलचाल की भाषा में बच्चों को अनुशासित करना भी कहा जा सकता है। इसके लिए बच्चों के बीच उपयुक्त टीएलएम लेकर जाना होगा। टीएलएम के चयन के दौरान हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि उस टीएलएम का चर्चा की जाने वाली अवधारणा से सीधा सम्बन्ध हो। दूसरी बात यह समझ आई कि हरेक बच्चा यूनिक है, हर बच्चे का अपनी समझ का स्तर है और प्रत्येक बच्चे की सीखने की गति अलग होती है। अगर शिक्षक का इन पहलुओं की तरफ़ ध्यान नहीं गया है और पाठ योजना बनाते समय बच्चों की विविधता का ध्यान नहीं रखा गया है तो अवधारणा या सिद्धान्त की बहुत बेहतर समझ होना भी इन अवधारणाओं को बच्चों तक पहुँचा पाने की गारंटी नहीं है। इन दोनों अनुभवों में मेरी कोशिश थी कि शिक्षकों व बच्चों के साथ अवधारणाओं पर काम करते हुए गणित के सीमित उद्देश्यों जैसे– संख्या ज्ञान, मात्रा, पैटर्न, समूहीकरण, संक्रिया : जोड़-घटाव के साथ ही गणित के व्यापक उद्देश्यों जैसे– अनुमान लगाना, सन्निकटन, सम्प्रेषण व अभिव्यक्ति को भी साथ में लेकर काम किया जाए।

हरेक बच्चा यूनिक है, हर बच्चे का अपनी समझ का स्तर है और प्रत्येक बच्चे की सीखने की गति अलग होती है। अगर शिक्षक का इन पहलुओं की तरफ़ ध्यान नहीं गया है और पाठ योजना बनाते समय बच्चों की विविधता का ध्यान नहीं रखा गया है तो अवधारणा या सिद्धान्त की बहुत बेहतर समझ होना भी इन अवधारणाओं को बच्चों तक पहुँचा पाने की गारंटी नहीं है।

अन्त में कहा जा सकता है कि जब मैं शिक्षकों के पास अवधारणा व सिद्धान्त की समझ लेकर गया और शिक्षकों के साथ काम किया तो मुझे लगा अब ये सभी शिक्षक अपनी कक्षा-कक्षीय प्रक्रियाओं को बदल डालेंगे। लेकिन इसके उलट जब कक्षा-कक्ष में काम करने का अनुभव हुआ तो समझ आया कि आपके पास अवधारणा और सिद्धान्त की समझ होना ही काफ़ी नहीं है। बेहतर काम के लिए आपको इनकी समझ के साथ ही बच्चों की स्थितियों व परिवेश, रुचि, संसाधनों का उपयुक्त चुनाव, आदि को ध्यान में रखते हुए अपनी योजना को आकार देना होगा।

अनवर हुसैन ने समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर किया है। 21 वर्ष तक शिक्षा से जुड़े विभिन्न संस्थानों में काम किया है, जिसमें 8 साल श्री अनिल बोर्दियाजी के साथ 'दूसरा दशक' कार्यक्रम में किया गया कार्य शामिल है। वे अप्रैल 2014 से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन की राजसमन्द टीम के साथ कार्य कर रहे हैं। यहाँ फ़िलहाल सामाजिक विज्ञान में शिक्षकों के साथ काम कर रहे हैं। एक साल से प्राथमिक गणित में भी काम करने का प्रयास कर रहे हैं।

सन्दर्भ : anwar.hussain@azimpremjifoundation.org

बच्चे, कहानियाँ और बातचीत

अलका तिवारी

कथा साहित्य के जरिए नैतिक शिक्षण एक पुरानी परिपाटी रही है। वाचिक परम्परा में *पंचतंत्र, हितोपदेश* और *जातक कथाओं* में इसके संकेत मिलते हैं। लिखित बाल साहित्य में तो इसकी पुरज़ोर वकालत की जाती रही है। यह भी हालिया विमर्श है कि बाल साहित्य को नैतिक शिक्षण का जबरिया, ज़रिया बनाया जाना, साहित्य का पाठक बनने और साहित्य रस बोध की राह में कहीं बाधा तो नहीं। इस मत के समर्थकों का कहना है कि जब बड़ों का साहित्य इस कसौटी में नहीं परखा जाता तो फिर बच्चों के साहित्य में यह आग्रह क्यों? यह तो कहानियों पर विश्लेषणात्मक चर्चा करते हुए बच्चों की समझ बनने की प्रक्रिया में स्वतः निहित है।

प्रस्तुत आलेख में अलका तिवारी ने बच्चों के साथ कहानियों पर बातचीत करते हुए उनकी बारीक़ परतों को खोलने और बच्चों की पाठक प्रतिक्रिया खँगालने की कोशिशों का ब्योरा लिखा है। सं.

कोरोना महामारी के इस दौर में हम सभी का जीवन काफ़ी गहरे से प्रभावित हुआ, बच्चे भी इससे अछूते नहीं रहे। ऐसे समय में बच्चों के बीच सकारात्मक माहौल बना पाने व उन्हें सीखने-सिखाने के अनुभवों से जोड़े रखने के लिए विकल्प खोज पाना एक टीम के तौर पर हम सभी के लिए एक अलग तरह का अनुभव रहा। इसके लिए समुदाय में एक जगह रहने वाले बच्चों का समूह बनाकर काम करने का विचार उभरा। इस प्रक्रिया में बच्चों के अलग-अलग कक्षा स्तर (3-8) व सीखने के स्तर में विविधताओं को साथ लेकर चलने के विचार को समायोजित कर स्वरूप देना अपने-आप में चुनौती भरा रहा। इसके लिए किताबों के ज़रिए काम करना एक हल नज़र आया। इसके ज़रिए सबको शामिल करते हुए, बच्चों में भाषाई कौशलों के आयामों पर कुछ काम कर पाना सम्भव लगा।

कहानियों के बहाने...

बच्चों के साथ काम करते हुए पढ़ना-लिखना सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में कई तरह की चुनौतियाँ अनुभव का हिस्सा बनती रहती हैं। बतौर एक शिक्षक ये लगता है कि नए रास्ते खोजने में ये चुनौतियाँ हमेशा एक दोस्त की तरह राह खोजने में साथ निभाती हैं। स्वयं के स्तर पर कोशिश के साथ, अन्य साथियों के साथ रही लगातार बातचीत से यह समझ बनाने में मदद मिली कि भाषाई कौशलों को अर्जित



करने में एक समृद्ध माहौल का होना सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को एक तरह की सहजता और सार्थकता देता है। इस विचार को ध्यान में रखते हुए बच्चों के साथ लाइब्रेरी की पुस्तकों के ज़रिए काम करने का प्रयास रहा। साथ ही (हिन्दी-अँग्रेज़ी) दोनों भाषाओं के कुछ ऑडियो शामिल किए गए, ताकि विविध रोचक सन्दर्भ बच्चों के अनुभव का हिस्सा बन सकें। बच्चे इन सन्दर्भों के ज़रिए हँसें, गुदगुदाएँ, एक दूसरे को सुनाएँ और दुनिया की ख़ूबसूरती की एक झलक ले पाएँ। साथ ही इन सन्दर्भों में छुपे भावों को अपने भीतर तक महसूस करते हुए अपनी बात को अपने ढंग से दूसरों तक पहुँचा पाएँ। यहाँ अँग्रेज़ी भाषा का उपयोग बच्चों के बीच अँग्रेज़ी भाषा सुनकर समझने का एक मौक़ा बना पाने के मक़सद से किया गया।

टीम के सदस्य के रूप में मुझे भी दो छोटे समूह मिले। पहले समूह में 10 व दूसरे में 5 बच्चे थे। काम शुरू करने से पहले, बच्चों के साथ बातचीत व उनकी राय को शामिल करते हुए एक साझा सहमति बनाई गई ताकि बच्चे भी इस प्रक्रिया को वैसे ही देख पाएँ, जैसा इसे बुना गया है, साथ ही अपनी भूमिका को लेकर भी उनके मन में स्पष्टता रहे। इस प्रक्रिया में बच्चे अपनी पसन्द व स्तर के अनुसार पुस्तकें चुनकर, उन्हें पढ़ने की प्रक्रिया से जुड़ने की कोशिश करते। ज़रूरत होने पर पुस्तकों के चुनाव में सब एक दूसरे को सुझाव देकर मदद भी करते। बच्चों द्वारा अपनी पुस्तक को समूह में साझा करने का प्रयास रहता। कुछ बच्चे प्रश्नों के ज़रिए चर्चा को बढ़ाते तो कुछ अपनी प्रतिक्रियाओं से चर्चा को रोचक बनाते। हम सबने सामूहिक सहमति से तय किया कि हर दिन कुछ पढ़ेंगे, और पढ़ी हुई पुस्तक पर अपने शब्दों में अनुभव लिखने का कार्य करेंगे। काम के दौरान बच्चों के साथ रहे अनुभव में से कुछ अंश साझा करने की कोशिश कर रही हूँ...

नदी और पहाड़ : एक दिन हमने 'नदी और पहाड़' पर आधारित एक ऑडियो की मदद से कहानी सुनी– पहले अँग्रेज़ी में फिर हिन्दी में।फिर इसपर बातचीत की। बच्चों ने नदी और पहाड़ दोनों के पक्षों को ध्यान से सुनने की कोशिश की। समूह में हम सबने एक दूसरे से प्रश्न किए तो अन्य बच्चों ने इसपर अपनी समझ को साझा किया। बातचीत में बच्चों ने चर्चा को एक सार्थक दिशा देने में अपनी-अपनी भूमिका निभाई। बच्चों की प्रतिक्रियाओं के अंश कुछ इस रूप में रहे :

भारती (कक्षा 3) : इसमें नदी और पहाड़ आपस में बातें कर रहे हैं। नदी हर जगह घूमती फिरती है, पहाड़ बस खड़ा रहता है एक ही जगह पर।

बुल्ला : नदी परेशान लग रही थी। वो थकी हुई थी। वो चाहती थी कि पहाड़ उसकी मदद करे।

विकास : नदी पहाड़ से शिकायत कर रहीहै कि तुम तो कितने आराम से रहते हो? मैं भी तुम्हारी तरह रहना चाहती हूँ!

वैदेही : नदी पहाड़ से अपना दुःख साझा करने आई है। शायद इससे उसका मन हल्का हो जाए।

आकाश : नदी को लगता है उसको एकपल का भी आराम नहीं है। उसे हमेशा ही चलते रहना पड़ता है।

विशाल : पहाड़ तो एक जगह खड़े-खड़े बहुत बोर चुका है क्योंकि उसे रोज़ एक जैसी चीज़ें ही देखनी पड़ती हैं। पर नदी तो रोज़ नई-नई जगह जाती है।

मानवी : पहाड़ को नदी का जीवन अच्छा लगता है और नदी को पहाड़ का। पर दोनों के जीने के तरीक़े अलग-अलग हैं। पहाड़ यह समझाने की कोशिश कर रहा है कि नदी हमेशा कितने लोगों की मदद करती है।

कुलदीप : हम सब अलग-अलग हैं, और साथ रहकर हम एक दूसरे की मदद करते हैं।

आकाश : हम सभी को अपनी ज़िन्दगी से कोई-न-कोई शिकायत रहती है।

बुल्ला : ऐसा तो इंसान ही करते हैं। चिड़िया, बादल, पेड़ कभी शिकायत नहीं करते, वे बस अपना काम करते रहते हैं।

आकाश : हाँ, इंसान ही आपस में लड़ते हैं, ख़ुद को बड़ा और दूसरों को छोटा समझते हैं।

विकास : इस प्रकृति में हर किसी की अपनी जगह है, कोई किसी की कमी पूरी नहीं कर सकता। सबका अपना महत्त्व है। कोई बड़ा या छोटा नहीं है, जैसे– यदि फूल नहीं होंगे तो मधुमक्खी शहद कैसे बनाएगी? और मधुमक्खी व दूसरे छोटे कीड़े नहीं होंगे तो फसलें कैसे होंगी? फूल कहाँ से खिलेंगे?

आकाश : इंसानों की बस्ती में लोहार, सब्ज़ीवाला, डॉक्टर, मज़दूर, मास्टर, किसान, जानवर सब होते हैं, तभी तो हम अच्छे-से जी पाते हैं, क्योंकि सब मिलकर ही तो एक दूसरे की ज़रूरत को पूरा करते हैं।

बुल्ला : अगर सबको एक दूसरे की ज़रूरत है तो फिर कोई छोटा या बड़ा कैसे हो सकता है?

मानवी : तो फिर सब लोग ज़रूरी हैं, और सभी काम भी।

मानवी : पहाड़ की बात सुनकर नदी का सोचने का तरीक़ा बदल जाता है।

भारती : अब नदी फिर से अपने काम में जुट गई थी।

कुलदीप : जब हम परेशान हो जाते हैं तो अच्छे दोस्त उस समस्या से बाहर निकलने में हमारी मदद करते हैं।

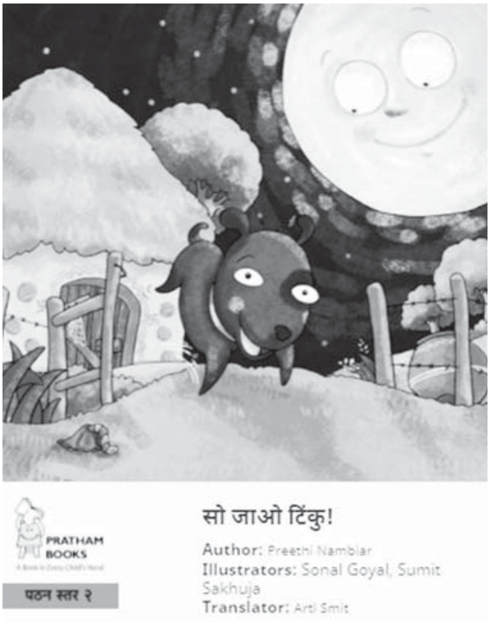
बुल्ला : पहाड़ ने नदी को यह समझने में मदद की कि उसके होने से कितने लोगों का जीवन बदल रहा है। नदी हर रोज़ कितने लोगों की मदद करती है, लेकिन वह ये सब नहीं कर सकता।

चर्चा में समूह का निष्कर्ष कुछ इस रूप में रहा कि जब हम अपने काम के महत्त्व को ठीक से नहीं समझते हैं, तो हम परेशान हो जाते हैं। पर इस ख़ूबसूरत धरती पर सबका होना ज़रूरी है, क्योंकि सबका अपना काम है। अच्छे-से जीने के लिए सबका मिल-जुल कर रहना ज़रूरी है। पेड़-पौधे, तितली, काँटे, नदी सब इंसानों को एक साथ मिलकर रहने की प्रेरणा देते हैं। हम भी एक सुन्दर दुनिया बनाने की कोशिश कर सकते हैं जिसमें सब एक दूसरे के साथ प्यार से रहें। यहाँ कोई छोटा या बड़ा नहीं है, तुलना करना ज़रूरी नहीं है। अगर हम एक दूसरे का महत्त्व समझ पाएँ तो आपस में तुलना के बिना भी जीने का तरीक़ा ढूँढ़ा जा सकता है। इंसानों की बस्ती में लोहार, सब्ज़ीवाला, डॉक्टर, मज़दूर, मास्टर, किसान, जानवर सबके होने से ही तो हम अच्छे-से जी पाते हैं, क्योंकि सब मिलकर ही तो एक दूसरे की ज़रूरतें पूरी करते हैं। अगर सबको एक दूसरे की ज़रूरत है तो फिर कोई छोटा और बड़ा कैसे हो सकता है। अँग्रेज़ी पर रही बातचीत में asked, replied, doing well, comparison, enable, survival आदि शब्दों को हमने छोटे-छोटे वाक्यों में काम में लेते हुए समझने का प्रयास किया। बुल्ला ने पूछा, दीदी ईगो (ego) को कैसे समझा जाए? काफ़ी कोशिश के बाद भी मुझे समझ नहीं आया कि सन्दर्भ के साथ इस शब्द को सही ढंग से कैसे बच्चों तक पहुँचाया जाए। तो मैंने कहा, पता करके बताऊँगी, अभी तो मुझे नहीं पता।

सो जाओ टिंकु : कक्षा 3 की भारती *सो जाओ टिंकु* पुस्तक पढ़ने के बाद अपनी बात कुछ इस तरह बताती है– टिंकु को नींद नी आ रही थी तो वो रात को जंगल में चला गया। चाँद की रोशनी हो रही थी। वहाँ जुगनू, चमगादड़, लोमड़ी, उल्लू, मिले। सब मज़े से ख़ूब खेले।

फिर अपनी बात आगे बढ़ाती हुए बोली– दीदी, आज एक अनुभव भी लिखा है मैं सुनाऊँ। अनुमति मिलने पर वह पढ़कर सुनाने लगी– आज मौसम बहुत अच्छा हो रहा था। मैं मेरी मम्मी से पूछी, मम्मी आज मामा के चल। मम्मी बोली, बाद में बताऊँगी। मैं बहुत ख़ुश थी कि

आज हम जाएँगे। शाम को मैं फिर मम्मी से पूछी, अब तो सारा काम हो गया। अब चलेगी न मम्मी! मम्मी बोली, कहीं नहीं जाएँगे। जा बकरी बाँध। तब मैं बहुत रोई। कक्षा 5 के आकाश ने कहा– इस किताब को पढ़कर लगा कि रात भी तो ख़ूबसूरत हो सकती है। मैंने कल सच में जागकर देखा था– फैली हुई चाँद की रोशनी में सबकुछ कितना अच्छा लगता है। हमारे घर में नेवला अपने पाँचों बच्चों को लेकर घूम रहा था।



बोबक बकरा : ऑडियो के ज़रिए सुनी इस कहानी को अंकिता ने अपने शब्दों में हूबहू सुनाया। कक्षा 6 की अर्चना ने 'बोबक बकरा' कहानी के बारे में अपनी बात कुछ इस तरह साझा की। वह खाने का बड़ा ही शौक़ीन था। जो कुछ भी पाता, तुरन्त उसे मुँह में लपक लेता। कपड़े तक न छोड़ता। वह बग़ीचे में ख़ुश महसूस कर रहा था, घास उसे मखमल से कम आरामदायक नहीं लग रही थी। पहली बार उसने सोचा, आख़िर सब नेता के पीछे क्यों जा रहे हैं? मैं भी तो ऐसे ही जाता हूँ। हर बार मुँह उठाकर पीछे-पीछे चल देने की आदत उसके लिए मुसीबत ही बन गई। उसने अपनी मुसीबत से



सबक़ लिया। तब से वह बदल गया क्योंकि अब वह अपने निर्णय ख़ुद लेने लगा था। तब उसे पता चला कि अब वह पहले से ज़्यादा ख़ुश है। तब से वह सोच-समझ कर काम करने लगा।

याकिती याक : इस पुस्तक को पढ़कर कक्षा 6 की यामिनी ने अपना विचार कुछ इस तरह से साझा किया– एक छोटा, नन्हा, प्यारा-सा याक है। वह जहाँ रहता है वहाँ के पेड़, नदी, चट्टान, फूल, तालाब सब उसके दोस्त बन गए हैं। वह रोज़ वहाँ आता है और ख़ूब सारा समय बिताता है। एक दिन अचानक उसे पता चलता है कि उसे अपने मालिक के साथ शहर छोड़कर कहीं बहुत दूर चले जाना है। अब वह इस बात से दु:खी है कि वह अपने इन दोस्तों को कभी नहीं देख सकेगा, क्योंकि वह एक याक है। याक अकेले इतनी दूर का रास्ता याद नहीं रख सकते, इसलिए फिर कभी भी वह उनसे मिलने नहीं लौट पाएगा। जब वह आख़िरी बार अपने दोस्तों से मिलने आता है तो तालाब को बहुत देर तक देखता रहता है। पेड़ से लिपटे रहना उसे अच्छा लगता है। इस बातचीत के बाद यामिनी अपनी माँ के साथ बिताए समय से एक सुन्दर अनुभव कुछ इस तरह सुनाती है– माँ,

जब तुम्हारी शादी हो रही थी तो मैं बहुत ख़ुश थी। तुम मेरे लिए सुन्दर गहने और कपड़े लाई थीं न। मैं सब पहनकर देख रही थी। पर जब सुबह तुम विदा होकर जाने लगीं तो मैं बहुत रोई थी। नाना मुझे ज़बरदस्ती कमरे में ले आए थे ताकि मुझे तकलीफ़ न हो। मैं बहुत दु:खी थी। पर तुम चली गईं...। जब तुम छोड़कर गई थीं तो मैं 8 वर्ष थी, अब 11 वर्ष की हो गई हूँ। 3 साल हो गए माँ तुम्हें देखे बिना। मैं बस यही सोचती हूँ कि पता नहीं मुझे जाने कितने वर्ष तक ऐसे ही रहना पड़ेगा तुम्हारे बिना। यामिनी के ये शब्द हम सबको माँ के न होने के दुःख को बहुत गहरे से महसूस करने को मजबूर कर देते हैं।

संसार एक पुस्तक है : कक्षा 5 की सपना ने अपनी पुस्तक से पढ़कर इसपर अपना अनुभव समूह में साझा किया। बच्चों के आग्रह पर नेहरूजी द्वारा लिखित यह पत्र जब हमने समूह में पढ़ा तो बच्चों की प्रतिक्रियाएँ कुछ इस तरह आईं– सभी अलग-अलग जगहें इस दुनिया का ही हिस्सा हैं। दुनिया की हर चीज़ अपने बारे में एक कहानी कहती है। उसका पुराना सफ़र कैसा बीता, उसे अपने जीवन में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा? नदी के नए पत्थर नुकीले होते हैं और पुराने पत्थर गोल और चिकने होकर सुन्दर हो जाते हैं। इससे पता चलता है कि वे नदी के पानी के साथ हमेशा कितनी लम्बी यात्राएँ करते हैं, रास्तेभर चोट खाते रहते हैं। हर चीज़ हमें कुछ-न-कुछ ज़रूर बताती है। बस ज़रूरत है सब चीज़ों की कहानी को समझना सीख जाएँ। बच्चों ने इस समझ को अपने काम से जोड़ने का भी प्रयास किया। इन दिनों हम भी लगातार कुछ अलग-अलग तरह की चीज़ों के बारे में जानने की कोशिश कर रहे हैं।

अर्चना का मानना था कि पढ़ने-लिखने का काम हमारे अपने लिए है। हम ये सब ख़ुद के सीखने के लिए करते हैं, किसी और के लिए नहीं। अगर हम ये बात समझ जाएँ तो हम और भी आसानी से नई चीज़ों के बारे में सीखते जाएँगे। इस पत्र पर हो रही चर्चा ने कक्षा 6 की अर्चना को बड़ा प्रेरित किया और उसने मैगजीन से एक लेख 'किताबों का महत्त्व' पढ़कर अगले दिन अपने अनुभव से जोड़ते हुए एक प्रश्न के ज़रिए मन में चल रहे विचार को कुछ इस तरह साझा किया– हम कब मानेंगे कि हममें समझदारी आ गई है! अकसर बड़े और पढ़े-लिखे



12 संसार पुस्तक है

जब तुम मेरे साथ रहती हो तो अकसर मुझसे बहुत-सी बातें पूछा करती हो और मैं उनका जवाब देने की कोशिश करता हूँ। लेकिन अब, जब तुम मसूरी में हो और मैं इलाहाबाद में, हम दोनों उस तरह बातचीत नहीं कर सकते। इसलिए मैंने इरादा किया है कि कभी-कभी तुम्हें इस दुनिया की और उन छोटे-बड़े देशों की जो इस दुनिया में हैं, छोटी-छोटी कथाएँ लिखा करूँ। तुमने हिंदुस्तान और इंग्लैंड का कुछ हाल इतिहास में पढ़ा है। लेकिन इंग्लैंड केवल एक छोटा-सा टापू है और हिंदुस्तान, जो एक बहुत बड़ा देश है, फिर भी दुनिया का एक छोटा-सा हिस्सा है। अगर तुम्हें इस दुनिया का कुछ हाल जानने का शौक है, तो तुम्हें सब देशों का और उन सब जातियों का जो इसमें बसी हुई हैं, ध्यान रखना पड़ेगा, केवल उस एक छोटे-से देश का नहीं जिसमें तुम पैदा हुई हो।

मुझे मालूम है कि इन छोटे-छोटे खतों में बहुत थोड़ी-सी बातें ही बतला सकता हूँ।

2019-2020

लोग भी कहते कुछ हैं, करते कुछ और। सब पेड़ों के बारे में बात करते हैं, पर जब हमें ज़रूरत होती है तो हम उन्हें काटने से पीछे नहीं हटते। कभी सोचा है पेड़-पौधे भला कैसा महसूस करते होंगे? हमारे व्यवहार से उन्हें कितनी तकलीफ़ होती होगी? पेड़-पौधे हमें सब देते हैं, बिना कुछ चाहे। चाहे वह छाया, ऑक्सीजन, फल, दवाइयाँ हों या पक्षियों-मकोड़ों को घर और खाना। लेकिन हम मनुष्य ऐसे नहीं हैं।

एनसीईआरटी की *वसंत* भाग 2 से अर्चना ने एक कहानी 'चिड़िया की बच्ची' पढ़ी। इस कहानी ने अर्चना के मन को छुआ और उसने उत्साहित होकर इस कहानी को समूह में साझा किया :

रामदास ने बड़ा महल बनवाया और उसके आगे एक सुन्दर-सा बग़ीचा, ताकि उसका दिल

बहल सके। वह बग़ीचे में तख़्त डालकर बैठता ताकि मन लगा रहे। फिर भी उसे कुछ कमी लग रही थी। तभी एक सुन्दर-सी चिड़िया आई और एक डाल पर बैठ गई। वह चिड़िया बड़ी ही चंचल थी, कभी गर्दन हिलाती तो कभी पूँछ, एक पल को भी टिककर न बैठती। उसकी सुहानी नीली



चिड़िया की बच्ची 9

माधवदास ने अपनी संगमरमर की नयी कोठी बनवाई है। उसके सामने बहुत सुहावना बगीचा भी लगवाया है। उनको कला से बहुत प्रेम है। धन की कमी नहीं है और कोई व्यसन छू नहीं गया है। सुंदर अभिरुचि के आदमी हैं। फूल-पौधे, रकाबियों से हौज़ों में लगे फव्वारों में उछलता हुआ पानी उन्हें बहुत अच्छा लगता है। समय भी उनके पास काफ़ी है। शाम को जब दिन की गरमी ढल जाती है और आसमान कई रंग का हो जाता है तब कोठी के बाहर चबूतरे पर तख्त डलवाकर मसनद के सहारे वह गलीचे पर बैठते हैं और प्रकृति की छटा निहारते हैं। इनमें मानो उनके मन को तृप्ति मिलती है। मित्र हुए तो उनसे विनोद-चर्चा करते हैं, नहीं तो पास रखे हुए फर्शी हुक्के की सटक को मुँह में दिए खयाल ही खयाल में संध्या को स्वप्न की भाँति गुज़ार देते हैं।

आज कुछ-कुछ बादल थे। घटा गहरी नहीं थी। धूप का प्रकाश उनमें से छन-छनकर आ रहा था। माधवदास मसनद के सहारे बैठे थे। उन्हें ज़िंदगी में क्या स्वाद नहीं मिला है? पर जी भरकर भी कुछ खाली सा रहता है।

गर्दन रामदास को लुभा रही थी। वह चिड़िया से बोला— तुम यहीं रह जाओ। चिड़िया बोली— यहाँ मेरा क्या काम! मैं तो घोंसले में रहती हूँ अपनी माँ के साथ। रामदास बोला— देखो, तुम इस बग़ीचे को अपना ही समझो। यह महल भी तुम्हारा है। चिड़िया बोली— नहीं, मुझे तो मेरी माँ के पास ही जाना है। रामदास बोला— देखो, यहाँ कितना बड़ा बग़ीचा है, महल है, सोना-चाँदी, धन-दौलत, सब है, तुम्हारे घोंसले में क्या है? तिनके का घोंसला। तिनके तुम्हें चुभ जाएँगे। चिड़िया बोली— मैं क्या जानूँ सोने को। मैं तो धूप किरणों को जानती हूँ, सूरज की गर्माहट को जानती हूँ, ठण्डी हवा और पानी को जानती हूँ, घास की नर्माहट को जानती हूँ, जो मेरे घोंसले में हैं। और मेरी माँ भी। रामदास बोला— पगली मत बनो। यहाँ सबकुछ है तुम्हारे लिए। मेरी रानियाँ, नौकर-चाकर सब तुम्हारा जी बहलाएँगे। सोने का पिंजरा बनवाऊँगा तुम्हारे लिए। चिड़िया बोली— मुझे कुछ नहीं पाना, मुझे तो मेरी माँ और मेरा घोंसला ही चाहिए। मैं तो यहाँ दो घड़ी सुस्ताने आ गई थी बस। पर रामदास के बार-बार रोकने पर अब उसे शक होने लगा और वह चौकन्नी हो गई। वह समझ गई थी रामदास उसे बातों में लगा रहा था। तभी उसने चुपके से एक बटन दबाया और एक आदमी आया। वह चिड़िया को जैसे ही पकड़ने लगा, चिड़िया फुर्र से उड़ गई। हाँफती हुई वह माँ से जा लिपटी। माँ, माँ करती रही कुछ बोल नहीं पाई। माँ ने उसे चपेटकर गले लगा लिया। माँ समझ गई थी कि बच्ची अभी किसी मुसीबत से बचकर आई है। रामदास की दौलत देखकर भी चिड़िया को कोई लालच नहीं आया।

वसंत भाग-1 से बच्चों ने 'नादान दोस्त' कहानी को पढ़ा। कक्षा 6 के कुलदीप ने उसे समूह में अपने शब्दों में कुछ इस तरह साझा किया :

केशव और श्यामा रोज़ आँखें मलते हुए चिड़िया के अण्डे देखने पहुँच जाते। उनका मन कौतूहल से भरा होता। तरह-तरह के प्रश्न उनके मन में आने लगते। चिड़िया के अण्डे देखने में कैसे होंगे, कितने बड़े होंगे, रंग कैसा होगा, बच्चे कब निकलेंगे, कितने दिन लग जाएँगे, बाहर कैसे निकलेंगे, चिड़िया उनको कैसे बड़ा करेगी, क्या अण्डा फूटते ही बच्चे उड़ जाएँगे! अण्डों को देखने की बात सोचकर ही वे न जाने कहाँ खो जाते। पता नहीं उन्हें अण्डों को देखने में क्या सुख मिलता कि दूध जलेबी भी भूल जाते। पहले स्टूल फिर उसके ऊपर और एक छोटा स्टूल रखकर अण्डों तक पहुँचने की जुगाड़ लगाई। जब बच्चे अण्डों से निकलेंगे तब कहीं उन्हें तिनके चुभ न जाएँ, यह सोचकर नीचे चीथड़े बिछाकर अण्डों को उसपर रखा। काँटे साफ़ किए। टोकरी औंधाकर छाया की। टोकरी के छेद को कपड़ा ठूँसकर बन्द किया। टोकरी को ऐसे टिकाया कि चिड़िया आराम से बाहर जा सके और धूप भी न आए। कटोरी को गिराकर श्यामा तेल फैलाने का दिखावा करती है ताकि चिड़िया के पानी के लिए कटोरी काम में ले सके। वे माँ

से आँख बचाकर मटकी से मुट्ठी भर चावल लाकर घोंसले के पास रख देते हैं। इस तरह दोनों चिड़िया के खाने-पीने की जुगाड़ करते हैं। अब दोनों सोच रहे थे कि चिड़िया की ज़रूरत की सारी चीज़ें वहाँ हैं क्या! उन्हें क्या पता था कि उनके हाथ लगाने की वजह से सबकुछ ख़त्म हो जाएगा। चिड़िया अण्डे सेएगी ही नहीं।

कहानी पर बच्चों ने अपनी बात कुछ इस तरह कही :

आकाश : हमें बिना सोचे समझे कुछ नहीं करना चाहिए।

बुल्ला : केशव और श्यामा को चिड़िया के बच्चों के बारे में सोच-सोच कर बहुत अच्छा लग रहा था कि वे उन बच्चों की देखभाल करेंगे, सेवा करेंगे, उनकी हर ज़रूरत का ख़्याल रखेंगे, साथ खेलेंगे और उन्हें गोद में उठाए फिरेंगे।

विकास : केशव और श्यामा सोच रहे थे कि अण्डों में से बच्चे निकलेंगे। हम उन्हें निकलते हुए देखेंगे, हाथ से छूकर देखेंगे, बड़ा होते हुए देखेंगे। उन्हें चिड़िया के बच्चों के साथ खेलने का बहुत ही शौक़ लग रहा था।

यामिनी : वे सोच रहे थे क्या पता अण्डे को हाथ लगाने से ही चूज़े बाहर निकल आएँ तो कैसा लगेगा। कहीं चूज़े अण्डे से निकलते ही उड़ गए तो।

भारती : अण्डे से निकलते ही कैसे उड़ सकते हैं, पंख आने में तो कई दिन लगते हैं।

मानवी : पर उन्हें क्या पता था कि अण्डों को हाथ लगाने की सज़ा इतनी बड़ी होगी।

पवन : जब वो उनके घोंसले को ठीक कर रहे थे तो वो चिड़िया के बच्चों के ख़्यालों में खो गए इसलिए उन्होंने अण्डों को हाथ लगा दिया।

विशाल : उन्होंने तो अच्छा सोचकर ही अण्डे उठाकर कपड़े पर रखे ताकि जब चूज़े निकलें तो उनको कुछ चुभ न जाए।

कुलदीप : सबकुछ अच्छा करना चाहा था, पर नादानी से उन्होंने अण्डों को छू लिया।

विशाल : नादानी मतलब बिना समझदारी के।

भारती : क्या पता चिड़िया ने देख लिया हो कि मेरे अण्डों को किसी ने छुआ है।

विकास : हाथ लगाने से हमारे हाथों की ख़ुशबू अण्डे पर रह जाती है। चिड़िया को पता चल जाता है, अण्डे को किसी ने तो छुआ है।

भारती : छिलके पड़े देखकर श्यामा को लगा चूज़े निकलकर उड़ गए।

यामिनी : पर उसने बहते हुए पानी को देखा तो पता चला अण्डे तो फूट गए। उन्होंने चिड़िया के बच्चों को लेकर कितने सपने देखे थे। लेकिन अण्डों के फूटने से सब ख़त्म हो गया।

विकास : नादानी से भी हम किसी के जीवन से खिलवाड़ नहीं करें।

कुलदीप : अनजाने में हुई भूल से भी किसी का जीवन ख़त्म हो जाता है।

मानवी : अण्डों को हाथ न लगाते तो चिड़िया उन्हें सेती, उनसे सुन्दर बच्चे निकलकर इधर-उधर घूमते।

मानवी की इस बात पर सभी के चेहरों के भाव काफ़ी अलग थे। बच्चे काफ़ी भावुक महसूस कर रहे थे। कहानी में चिड़िया के अण्डे टूटने का दुःख सभी महसूस कर पाए। कहानी पर रही चर्चा को कुछ इस तरह समेकित किया गया कि प्रकृति में कई जीव हैं, सब एक दूसरे से अलग हैं। हमें उनके बारे में ज़रूर जानना चाहिए, पर बहुत सावधानी के साथ उन्हें देखें एवं उनकी आदतों और व्यवहार को समझें। दूसरों से इनके बारे में पहले पता करें। अपने शौक़ के लिए हम किसी को नुक़सान तो नहीं पहुँचा रहे, ये ज़रूर सोचें। क्योंकि हम जान-बूझ कर तो ऐसा नहीं कर रहे, पर अनजाने में भी किसी के जीवन से खिलवाड़ नहीं करें।

जब कोई अण्डे को छू ले तो चिड़िया उसे सेती नहीं, पर जब कोई चूज़े को हाथ लगाता है तब तो चिड़िया उसे छोड़कर नहीं जाती। तो फिर अण्डे के साथ ऐसा क्यों करती है?

आकाश : क्योंकि चूज़े को सेने की ज़रूरत नहीं होती। चूज़ा तो कई बार ख़ुद भी इधर-उधर घूमता है, चिड़िया उसे घोंसले में उठाकर रख देती है।

बुल्ला : मुर्ग़ी तो अपने हाथ लगाने पर भी अण्डों को नहीं छोड़ती।

कुलदीप : नहीं, मुर्ग़ी के अण्डे देते ही कच्चे अण्डे (तुरन्त दिए हुए) को हाथ लगाने पर कोई दिक़्क़त नहीं होती। पर बाद में हाथ नहीं लगा सकते।

विकास : अगर दो मुर्ग़ियों के अण्डों को मिला दें तो क्या मुर्ग़ी अपने अण्डे पहचान लेती है?

कुलदीप : हाँ, एक मुर्ग़ी के अण्डे को कितनी भी मुर्ग़ियों के अण्डों में मिला दें, वो अपने अण्डे ढूँढ़ लेती है।

बुल्ला : पर मुर्ग़ी के पास तो दूसरी मुर्ग़ियों के अण्डे भी लाते हैं, तो भी वह उन्हें अपने अण्डों की तरह ही सेती है।

विशाल : वह कुड़क (फूलकर बड़ी) हो जाती है, और अपने नीचे सारे अण्डों को ढँक लेती है। इससे अण्डे गरम रहते हैं।

कुलदीप : जब मुर्ग़ी अण्डे देती है तो 21 दिनों तक पूरे समय उसपर बैठती है। इससे अण्डों का तापमान बढ़ जाता है, और उनसे चूज़े बन जाते हैं। 21 दिन बाद चूज़े अण्डे का खोल तोड़कर बाहर आने लगते हैं। मुर्ग़ी भी खोल तोड़ने में मदद करती है।

'खिलौनेवाला' कहानी को यामिनी ने सुनाया और खिलौनेवाला सभी का चहेता बन गया। सभी बच्चों ने इस कहानी को मज़े से पढ़ा, फिर कुछ इस तरह से चर्चा हुई :

खिलौनेवाला इतने सस्ते खिलौने क्यों बेचता था?

खिलौनों में कोई मिस्टेक होगी।

खिलौने थोड़े टूटे या पुराने होंगे।

शायद उनके रंग कच्चे होंगे।

उसे खिलौने बेचने का मन करता होगा।

थोक में लाया होगा।

फ़ैक्टरी से सस्ते ख़रीद लिए होंगे।

उसने अपना फ़ायदा पहले ही कम लिया होगा।

उसने एक साथ मिट्टी के खिलौने बनवाए होंगे।

शुरू में कम भाव में बेचे होंगे ताकि लोगों के साथ रिश्ता बन जाए।

शुरुआत में कम दाम में बेचकर ज़्यादा ग्राहक बनाने की कोशिश कर रहा होगा।

उसने खिलौने, मुरली, मिठाई, ऐसी चीज़ें बेचने का काम ही क्यों चुना होगा?

उसे दूसरा काम करना नहीं आता होगा।

उसे खिलौने अच्छे लगते होंगे।

उसे बच्चे अच्छे लगते होंगे।

वह चाहता होगा ऐसी चीज़ बेचूँ जो जल्दी से बिक जाए, बच्चे तो हर घर में होते हैं।

पूरी कहानी पढ़ने के बाद खिलौनेवाले के बारे में बच्चों की राय :

वह बच्चों के साथ समय बिताना चाहता होगा।

उसे बच्चे अच्छे लगते होंगे।

वह छोटे बच्चों से बहुत प्यार करता होगा।

उसे बच्चों से मिलना, उन्हें देखना अच्छा

लगता होगा।

वह सब बच्चों को ख़ुश करना चाहता होगा।

उसे बच्चों को ख़ुशी देकर अच्छा लगता होगा।

वह चाहता होगा सब बच्चों को थोड़ी-सी ख़ुशी दे सके।

ग़रीब बच्चों को भी खिलौने मिल सकें जिनके पास पैसे नहीं होते।

वह उन बच्चों को भी मुस्कुराते देखना चाहता था जो ख़ुद कभी खिलौने नहीं ले सके।

उसे उनके मनपसन्द खिलौने देकर उनकी इच्छा पूरी करने में ख़ुशी मिलती होगी।

उसे बच्चों से बहुत ही लगाव होगा।

उसे बच्चों को देखकर सुकून मिलता होगा।

वह उन बच्चों के साथ समय बिताना चाहता होगा।

वह उन बच्चों का साथ पाना चाहता होगा।

वह दूसरे बच्चों को देखकर अपने बच्चों की कमी पूरा करना चाहता होगा।

उसे दूसरे बच्चों में अपने बच्चों की झलक दिखाई देती होगी।

5वीं कक्षा के आकाश ने उपरोक्त प्रश्न पर अपनी समझ को कुछ ऐसे समेकित किया– "उस व्यक्ति के पास सबकुछ था, वह अपने परिवार के साथ बहुत प्रसन्न था। पर कुछ ऐसा हुआ होगा, कोई ऐसी घटना जिसमें उसका पूरा परिवार ख़त्म हो गया। फिर अगर वह उसी घर में रहता तो अकेलेपन से वह घुटता रहता, उसे हमेशा अपने बच्चों की याद सताती रहती। इसलिए उसने गलियों में घूम-घूम कर ऐसे सामान बेचने का काम शुरू किया जिससे वह बच्चों से मिल सके। वह इतनी मधुर आवाज़ में बुलाता था कि बच्चे उसकी आवाज़ सुनकर सबकुछ भूल जाते थे और खिंचे चले आते। भगदड़ में किसी की चप्पल छूट जाती, किसी की टोपी गिर जाती, किसी का पजामा सरक जाता, पर बच्चे परवाह नहीं करते कि क्या हो रहा है। बच्चे जाकर उसे घेर लेते। उसे भी बच्चों को खिलौने दिखाने में मज़ा आता। वह चाहता था कि हर बच्चे को उसका मनपसन्द खिलौना मिल जाए। वह किसी भी बच्चे पर चिल्लाता नहीं था। वरना लोग तो बच्चों को दुत्कार कर भगा देते हैं। पर वो खिलौनेवाला तो बच्चों के चेहरे देखता रहता था। वह तो यह भी ध्यान रखता था कि सबको खिलौना मिल गया या नहीं। उसने उस बच्चे को भी खिलौना दिया था जिसके पास पैसे नहीं थे। शायद उसे अलग-अलग बच्चों से मिलकर ही चैन आता था, तभी तो वह जिस गाँव में खिलौने बेचकर गया, दोबारा उसमें 6 महीने बाद आया मुरलीवाला बनकर, फिर तीसरी बार आया मिठाईवाला बनाकर।

किसान राजकुमारी : बच्चों को ऑडियो के साथ एक भील कथा 'किसान राजकुमारी' सुनाई गई। इसमें राजा अपनी बेटी को उसकी किसान बनने की इच्छा के चलते महल से बेदख़ल कर देता है। राजकुमारी कुछ नए दोस्तों की मदद से अपने प्रयास जारी रखती है। अलग-अलग आपदाओं का सामना समझदारी भरे निर्णयों के साथ कर पाती है। कहानी को सुनने के बाद तय योजना अनुसार बच्चे अपने मन में आने वाले प्रश्नों और विचारों को समूह में रखते गए तो अन्य बच्चे तुरन्त अपनी प्रतिक्रियाओं के साथ तैयार रहे और समझ को साझा करते रहे। चर्चा के कुछ अंशों को साझा करने की कोशिश कर रही हूँ...

इस कहानी में हमारे जीवन के लिए क्या सीख है?

योगिता : हमें मदद करनी चाहिए।

आकाश : हाँ, पर ज़रूरी नहीं है हमेशा पैसे से ही। दूसरी तरह से भी जैसे– अनाज से,

मेहनत से, मिल-जुल कर काम करने से।

कुलदीप : बिना सोचे समझे कुछ भी न करें।

विकास : किसी पर अत्याचार नहीं करें।

बुल्ला : परिस्थितियों से घबराएँ नहीं, सही निर्णय लेना सीखें।

यामिनी : दोस्त बनाने चाहिए जैसे राजकुमारी ने बनाए। दोस्त मदद करते हैं।

विशाल : राजकुमारी डरी नहीं।

आकाश : हम महल में रहें या झोपड़ी में इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है? राजकुमारी ने झोपड़ी में रहकर भी ख़ूब अनाज उगाया जो गाँव के सारे लोगों के काम आया।

विशाल : राजा तो बस अपनी बेटी को नीचा दिखाने की कोशिश करता रहा। ऐसे राजा के होने से क्या फ़ायदा।

राजा ने अपनी बेटी को महल से क्यों निकला होगा? क्या आप बेटी के व्यवहार से असहमत हैं?

राजकुमारी अगर वास्तव में किसान बनना चाहती थी, तो इसमें राजा को क्या दिक़्क़त लगी होगी?

विकास : राजा नहीं चाहता था कि बेटी किसान बने।

विशाल : बेटी किसान बनने की ज़िद कर रही थी।

योगिता : राजा चाहता था बेटी उसकी बात माने क्योंकि मैं इसका पापा हूँ?

भारती : बेटी राजा की बात नहीं सुन रही थी।

विशाल : ज़िद करना सही है क्या?

बुल्ला : बुरी बात है।

विकास : अगर बात सही हो तो ज़िद कर सकते हैं। इसपर समूह में सभी सहमत हुए।

कुलदीप : राजा को लगा बेटी किसान कैसे बन सकती है।

आकाश : हाँ, राजा को लगा होगा यह तो छोटा काम है।

बुल्ला : हाँ, इससे राजा की नाक कट जाती न।

विशाल : हाँ, राजा ने सोचा होगा यह तो राजकुमारी है, मेरी बेटी को किसान बनने की क्या ज़रूरत है?

यामिनी : राजकुमारी तो महलों में रहती है, वह तो बहुत नाज़ुक होती है।

बुल्ला : किसान तो ग़रीब लोग होते हैं, जिनके पास कुछ और करने को नहीं होता। पढ़े-लिखे तो कभी किसान नहीं बनते।

कुलदीप : लेकिन सबको अनाज तो किसान की मेहनत से ही मिलता है न।

विशाल : सारे किसान खेती करना बन्द कर दें तो।

बुल्ला : ग़रीब-अमीर सब भूखे रहेंगे।

आकाश : तो फिर किसान छोटे कैसे हुए?

विकास : अगर पढ़-लिख कर खेती का काम करें तो और अच्छे-से कर पाएँगे। ज़्यादा अनाज हो पाएगा।

क्या लड़कियाँ भी किसान बन सकती हैं?

बुल्ला और यामिनी को छोड़कर सभी बच्चे इस बात पर सहमति जताते हैं!

यामिनी : पता नहीं, पर कभी किसी को देखा नहीं।

बुल्ला : नहीं, क्योंकि इसमें बहुत मेहनत होती है।

विशाल : जिनके पति मर जाते हैं वे औरतें ख़ुद ही अपना पूरा घर और काम सँभालती हैं और खेती-बाड़ी भी करती हैं।

आकाश : घर में भी तो औरतें सारे काम करती हैं, तो क्यों नहीं बन सकतीं लड़कियाँ किसान?

विकास : हमारी मम्मी भी तो पापा के साथ सारे काम करती हैं, मण्डी से सब्ज़ियाँ लेकर आती हैं, दुकान जमाती हैं, पापा सब्ज़ियाँ छाँटते रहते हैं। मम्मी खटाखट सब्ज़ियाँ बेच देती हैं। दिनभर पापा के साथ रहती हैं।

विशाल : मेरी मम्मी भी तो हमेशा पापा के साथ काम पर जाती हैं। जितना पापा करते हैं, मम्मी भी करती हैं।

योगिता : मेरे पापा पढ़ाते हैं, मम्मी दुकान चलाती हैं।

कुलदीप : दीदी, एक फ़िल्म थी– *आमदनी अठन्नी और खर्चा रुपइया।* उसमें भी औरतें काम करती हैं और पैसे कमाती हैं। पर मर्द लोग कहते हैं ये तो औरत की कमाई है, इससे घर नहीं चलेगा।

विशाल, आकाश, विकास बोल पड़ते हैं, सबका पैसा एक ही होता है। हमारे मम्मी-पापा तो ऐसा नहीं कहते। हम तो सारा पैसा काम में लेते हैं।

बुल्ला : खेतों में बाड़ लगाने का काम ही कितना मुश्किल है। औरतों को बाज़ार से सामान ख़रीदकर लाने में कितनी शर्म आती है। औरतें अकेले नहीं कर सकतीं।

कुलदीप : अकेले तो आदमी भी नहीं कर सकते, वो भी तो दूसरों की मदद लेते हैं। जब औजार बनाते हैं तो औरतें ही 5 किलो का घन उठाकर घण्टों पीटती हैं, आदमी तो पकड़े बैठे रहते हैं। मेहनत तो घन पीटने में ज़्यादा होती है।

बुल्ला : बिजली के खम्भों पर चढ़ते देखा है कभी लड़कियों को? वे कभी लाइट ठीक करने क्यों नहीं जातीं?

आकाश, यामिनी : अगर उनको सिखा देंगे तो वो भी जा सकती हैं।

बुल्ला : लड़के खाना बना सकते हैं क्या?

विशाल : हाँ, मैं तो बनाता हूँ, और मेरे पापा भी। मेरी मम्मी तो कोटा गई हैं। आज ही मेरे पापा ने मुझे आलू के पराठे बनाकर खिलाए।

योगिता : जब मेरी मम्मी की तबियत ख़राब होती है तो पापा सबके लिए खाना बनाते हैं। मैं और दीदी मदद करते हैं।

कुलदीप : मेरा मामा जब मास्टर बनने गया था, तो ख़ुद ही अपने लिए सबकुछ करता था।

भारती : मेरे पापा साग बनाते हैं और मम्मी रोटी बना देती हैं। कभी-कभी मैं और मेरा भाई भी मिलकर खाना बनाते हैं।

बुल्ला : मुझे और मेरे पापा को कुछ भी बनाना नहीं आता। पर मैं भी कभी-कभी बकरी चराने चला जाता हूँ, क्योंकि यह मेरी बहन का ही काम नहीं है।

एक शिक्षक की नज़र से : इस पूरी प्रक्रिया में बच्चों के अलग उम्र व भिन्न कक्षा स्तर पर होने की चुनौती बाद में सन्दर्भ के रूप में एक विकल्प बनती नज़र आई। बच्चों की सहमति होने से उनकी भागीदारी सुनिश्चित होने में मदद मिली। बातचीत की प्रक्रिया में बड़ों ने अपने छोटे साथियों को प्राथमिकता के साथ उनकी राय को महत्त्व देने की ज़रूरत को समझा। साथ ही यह भी कि अपनी राय को सबके अनुरूप बनाकर कैसे रखा जाए कि उनका छोटा साथी भी उसका हिस्सा बन सके। कभी-कभी समूह के सबसे छोटे साथी का विचार भी चर्चा का मुद्दा बनता रहा। इससे बच्चे ये अनुभव कर पाए कि सभी की बात उतनी ही ज़रूरी है जितनी उनकी अपनी। यह प्रक्रिया एक दूसरे को देखकर, उत्साहित होकर स्वयं

की ओर से अपने लिए काम चुनने की पहल और मिलकर काम करने का एक ज़रिया बनी। इस प्रक्रिया में एक दूसरे के अनुभव अच्छी चर्चा के साथ नए नज़रिए से सोच विचार का माध्यम बने। 'नदी और पेड़' की कहानी के ज़रिए बच्चे समाज में श्रम के स्तरीकरण से जुड़ी रूढ़िवादी मान्यताओं पर प्रश्न उठाते नज़र आते हैं। इस कहानी के ज़रिए बच्चों ने एक दूसरे के नज़रिए से मदद लेते हुए काफ़ी अच्छे-से प्रकृति में सामंजस्य और सद्भाव को अनुभव करने की कोशिश भी की, जो मानवीय समाज, जीवन में सार्थकता और मिठास भरे जाने की दिशा में एक जायज़ माँग है।

ऑडियो व विविध पुस्तकों के ज़रिए बच्चों के बीच भाषा की बानगी को महसूस कर पाने का एक मौक़ा बन पाता है। 'किसान राजकुमारी' कहानी को लेकर मेरे मन में इतनी सटीक भूमिका नहीं थी, पर कहानी पर उठाए सवालों के चलते मुझे लगा कि बच्चों के अनुभवों में विविधता ने संवाद को कई रोचक मोड़ दिए। इस कहानी के ज़रिए जितना सोचा था, चर्चा उससे कहीं आगे तक जा पाई। बच्चों ने कहानी के साथ चलते-चलते समाज में बात मानने को लेकर छोटों पर दबाव और बड़ों के रौब, उचित-अनुचित व्यवहार के मायने, समाज में श्रम को लेकर रहे स्तरीकरण, जेंडर के कारण लड़कियों के प्रति मान्यताएँ, और सीखने के मौक़ों की ज़रूरत आदि कई पहलुओं की पड़ताल करने की कोशिश की। अन्ततः समूह में सभी ने यह देखने की कोशिश की कि सभी लोग सब काम मिल-जुल कर करते हैं, तो काम भी बिना परेशानी के अच्छे-से हो पाते हैं, और सीखने का मौक़ा दिया जाए तो कोई भी कुछ भी सीख सकता है। कहानी से उठे सवाल कब जीवन के असल सवालों में बदल गए, इसका पता ही नहीं चला। बच्चों के ख़ुद के अनुभवों ने इस चर्चा को काफ़ी जीवन्त बना दिया। अनुभवों में भिन्नता नया नज़रिया बनाने में मददगार साबित हुई। चर्चा के दौरान बच्चों के आपसी मतभेद उभरकर सामने आए लेकिन बच्चों ने व्यक्ति के बजाय विचार के पक्ष में खड़े हो पाने का प्रयास किया। आज के दौर में यह काफ़ी प्रासंगिक प्रतीत होता है, क्योंकि लोगों में सहिष्णुता ख़त्म होती जा रही है। चर्चा के ज़रिए कहानियों के नए आयाम खुल पाए और भाषा के ज़रिए सामाजिक सरोकारों के, जहाँ का हिस्सा बच्चे बने।

भाषा वैज्ञानिकों का मानना है, अच्छे साहित्य का एक्सपोज़र और उसपर खुला विमर्श बच्चों में तार्किक चिन्तन को प्रोत्साहित करने के साथ उनकी मानवीय संवेदनाओं को सहज आकार देता है। भारती और यामिनी के अनुभव में यह स्पष्ट रूप से झलकता है। किताबों से जुड़े अनुभवों को बच्चे अपने व्यवहारिक अनुभवों से जोड़ने का एक सार्थक प्रयास करते नज़र आए। अपने विचारों के माध्यम से अर्चना, आकाश, बुल्ला, यामिनी, मानवी आदि बच्चे किताबों व आसपास की दुनिया के बीच रिश्ते बनाने की कोशिश करते नज़र आते हैं। इस प्रक्रिया में बच्चे किताबी भाषा के ज़रिए जीवन की जटिलता को समझने और उसमें जीवन्तता ढूँढ़ने की कोशिश करते रहे। कहानियों में छुपे मर्म को समझने की दिशा में आपसी संवाद ने सार्थक भूमिका अदा की। बँधे-बँधाए कक्षाई ढाँचे से बाहर बच्चों के साथ रहे ये अनुभव उनके सीखने के प्रति लगाव और ओनरशिप को लेकर हमारी मान्यताओं को चुनौती देते नज़र आते हैं। बच्चों का काम से जुड़ाव और भागीदारी मुझे ऊर्जा देने वाली रही।

Link– किसान राजकुमारी : https://youtu.be/5U1s3X59jLE | नदी और पहाड़ : https://youtu.be/Uxud7zNC_Og

अलका तिवारी ने शिक्षा में अपने काम की शुरुआत ज़िला बारां राजस्थान में दिगंतर संस्था द्वारा चलाए जा रहे सहरिया समुदाय के बच्चों से जुड़े सन्दर्भशाला प्रोजेक्ट में की। फिर उन्होंने बोध शिक्षा समिति में विज्ञान शिक्षक के रूप में कार्य किया। वे 2012 से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में विज्ञान के टीचर एजुकेटर के रूप में जुड़ी हैं। अलका 2019 से फ़ाउण्डेशन के टोंक स्कूल में विज्ञान और भाषा के शिक्षक के रूप में कार्य कर रही हैं। उन्हें शुरुआती कक्षाओं के बच्चों के साथ काम करना अच्छा लगता है।

सम्पर्क : alka.tiwari@azimpremjifoundation.org

किताबों पर बातचीत

कमलेश चन्द्र जोशी

शुरुआती कक्षाओं में पढ़ना सिखाने की प्रकिया में बच्चों से पाठ्येतर किताबों की विषयवस्तु पर बातचीत करना व उनके अनुभवों को शामिल करने के अवसर बनाना बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस लेख में लेखक ने बच्चों के साथ किए अपने काम को, अनुभवों व सवालों के उदाहरणों के साथ रखा है। साथ ही सुझाया है कि बच्चों से किताबों पर बातचीत कैसे की जाए, कैसे उनके अनुभवों को शामिल करते हुए बातचीत का विस्तार किया जाए। बच्चों को पाठक के रूप में विकसित करने के लिए लेख शुरुआती कक्षाओं में ही उन्हें नियमित रूप से रुचिपूर्ण किताबें पढ़ने को देने की बात करता है। सं.

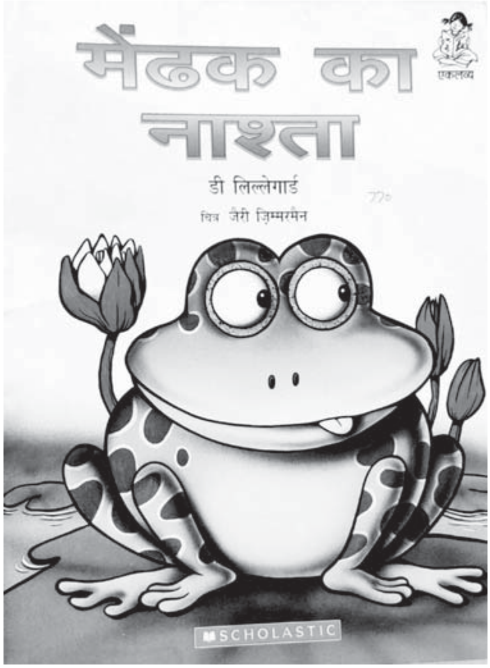
स्कूल पहुँचे तो भंडारी मैडम कहने लगीं कि जो किताबें आपसे मँगवाई थीं उन्हें बच्चे ख़ूब पढ़ते हैं और किताबें उन्हें अच्छी लगती हैं। उन्होंने आगे कहा कि कक्षा 2 का एक बच्चा तो जोड़-जोड़ कर पढ़ने की कोशिश भी करता है और उसके पढ़ने में सुधार हो रहा है। पहले उसे पढ़ना नहीं आता था। उनकी यह बात सुनकर अच्छा लगा कि शायद वे बच्चों के पढ़ना सीखने में किताबों के महत्त्व को समझ रही हैं। शिक्षकों में यह विश्वास पैदा करना थोड़ा मुश्किल ही रहता है कि बच्चे पढ़कर ही पढ़ना सीखते हैं। उनकी यह समझ रहती है कि पढ़ना ईंट पर ईंट रखने की प्रक्रिया है जो वर्णों की पहचान से शुरू होती है और अन्त में पाठ्यपुस्तक के पाठ पढ़ने तक जाती है। ऐसे ही वे पढ़ना सीखते हैं। कुछ देर में ही मैडम बच्चों की कुछ किताबें लेकर आ गईं और कक्षा की तरफ़ जाने लगीं। कक्षा में पहली-दूसरी के बीस-बाईस बच्चे बैठे हुए थे। एक शिक्षिका ब्लैकबोर्ड पर शब्दों को लिखने का काम करवा रही थीं और बच्चे उतार रहे थे। उन्हीं में से एक बच्चे को उन्होंने *बरखा* सीरीज़ की एक किताब *फूली रोटी* दी और वह हमें पढ़कर सुनाने लगा। यह वही बच्चा था जिसके बारे में वे बात कर रही थीं। अभी वह धीरे-धीरे पढ़कर सुना रहा था। कुछ महीनों में वह सीख जाएगा। यह सब दिखाकर मैडम को सन्तोष हुआ कि वह कुछ ठीक कर रही हैं। मैंने आगे कहा कि किताबों को नियमित रूप से पढ़ने के मौक़े देने से बच्चे पढ़ना सीखते हैं। इस काम में हमें उनकी मदद करनी चाहिए।

इतने में मैंने देखा, एक टाटपट्टी पर कुछ बच्चे चुपचाप बैठे हुए थे। ऐसा लगा उनके पास कोई काम नहीं है। मैंने सोचा कि मैडम से एक किताब लेकर इन बच्चों को पढ़कर सुनाई जाए। मैंने उन सातों बच्चों को एक घेरे में बैठाया।



उनके नाम पूछे और बातें करने लगा। उन बच्चों में पाँच बच्चे पहली कक्षा के थे और दो दूसरी के। फिर उन्हें किताब दिखाना शुरू किया। बच्चों से बात शुरू हुई कि इस किताब में क्या बना हुआ है? बच्चों ने बताया– मेंढक। आगे पूछा– तुम लोगों ने मेंढक कहाँ-कहाँ देखा है? एक बच्ची ने कहा– झनकट में। कुछ और ने भी झनकट ही बताया। शायद वे एकाएक जवाब के लिए तैयार नहीं थे। झनकट उनके स्कूल के पास सड़क से जुड़ा एक दूसरा गाँव है जहाँ बाज़ार, दुकानें आदि हैं। वे उसका नाम ले रहे थे। फिर एक बच्चे ने कहा– नदी में। तब सबसे पूछा गया कि ये तो कह रहे हैं नदी में, और तुम लोग कह रहे हो झनकट में। बताओ, मेंढक कहाँ-कहाँ रहता है? एक बच्चे ने कहा– नाल्ला में। उनसे आगे बात हुई कि मेंढक नदी, तालाब, नाले आदि जगहों पर रहता है। कभी-कभी ज़मीन पर भी दिखाई पड़ जाता है। बात आगे बढ़ी कि मेंढक कितना बड़ा होता है? बच्चों ने हाथ से बताया– इतना बड़ा। फिर पूछा, किस रंग का होता है? एक बच्चे ने कहा– काला होता है, दूसरे ने कहा– पीला, तीसरा बोला– हरा होता है। इसके बाद पूछा गया, किताब में किस रंग का बना हुआ है? जवाब आया– हरे रंग का।

आगे फिर बात शुरू हुई कि मेंढक क्या-क्या खाता है? इससे पहले यह बताओ तुम लोग क्या खाते हो? एक बच्चे ने कहा– खाना खाते हैं। एक बच्चे की ओर इशारा करके पूछा, तुम क्या खाते हो? बच्चा बोला– भात-दाल खाते हैं। और क्या खाते हो? तो बोला– रोटी खाते हैं। एक बच्चे ने कहा– मच्छी-मुर्ग़ा भी खाते हैं। एक ने बताया– आलू खाते हैं। अच्छा, अब बताओ मेंढक क्या खाता होगा? वह भी भात-दाल-रोटी खाता है या कुछ और? बच्चे थोड़ी देर सोच में पड़ गए। फिर एक बच्चे ने कहा– कीड़ा खाता है। ये ठीक कह रहे हैं। मेंढक कीड़ा खाता है। अच्छा, हम यह देखें कि चित्र में मेंढक किस चीज़ के बारे में सोच रहा है? इसके बाद थोड़ी देर शान्ति छाई रही।



उनसे फिर बात हुई कि हो सकता है कहीं घूमने जाने की सोच रहा हो या कुछ खाने की सोच रहा हो या कुछ खेलने की सोच रहा हो। एक बच्ची ने कहा– कुछ खाने की सोच रहा है। चलो, आगे देखते हैं मेंढक क्या सोच रहा है? अच्छा, इस किताब का कोई नाम तो होगा। यह कहाँ पर लिखा हुआ है? उँगली रखते हुए, किताब का नाम यहाँ पर भी लिखा हुआ है। किताब का नाम है– *मेंढक का नाश्ता।* किताब के अन्दर यहाँ पर भी लिखा हुआ है। अब इसको पढ़ते हैं। इस बीच एक शिक्षिका वहाँ आ गईं और बैठकर इस प्रक्रिया को देखने लगीं।

चित्र दिखाते हुए पूछा, इस चित्र में क्या-क्या बना हुआ है? बच्चों ने कहा– मेंढक। अच्छा, मेंढक क्या कर रहा है? मेंढक बैठा हुआ है। मेंढक कहाँ बैठा हुआ है? एक बड़े पत्ते पर। यह किस चीज़ का पत्ता हो सकता है, इसपर सोचना पड़ेगा। तुम लोगों ने देखा है यह पत्ता। बच्चों के बीच चुप्पी। चलो, अब पढ़कर देखते हैं, शायद इसमें लिखा हुआ हो। किताब में दिखाते हुए। यहाँ पर लिखा हुआ है– तालाब के बीचों-बीच कमल के पत्ते पर

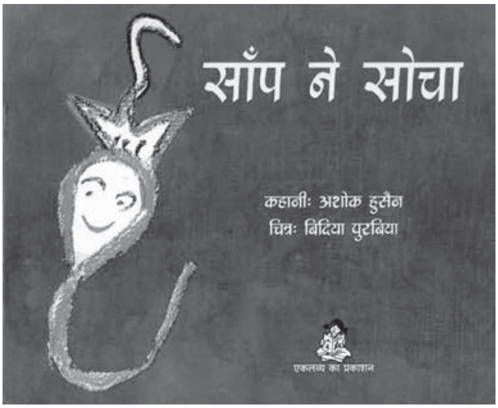
मेंढक बैठा हुआ था। 'नाश्ते का समय हो गया है', मेंढक बोला। तो पत्ता किसका है— कमल का। अगला पन्ना पलटते हुए। अब इन चित्रों पर क्या-क्या बना हुआ है? एक बच्चा— पेड़ है। दूसरी बच्ची— मछली। तीसरा— पानी है। एक और बच्ची— फूल है। चित्र में यह क्या चीज़ दिख रही है? एक बच्चा— कीड़ा। चलो, पढ़कर देखते हैं। यहाँ क्या लिखा हुआ है? एक मक्खी उड़ती हुई वहाँ पहुँची। तो क्या चीज़ है— मक्खी। अगली लाइन में क्या लिखा है? 'हम्म, लो आ गया नाश्ता', मेंढक ने सोचा। चलो आगे पन्ने में देखते हैं। इस चित्र में आगे क्या दिखाई पड़ रहा है? ये क्या है— मक्खी। इतनी बड़ी मक्खी दिख रही है।

यहाँ लिखा है— मक्खी गुन गुन करती हुई इधर-उधर उड़ रही थी। अपने कमल के पत्ते पर, तालाब के बीच मेंढक चुपचाप बैठा रहा। पन्ना पलटते हुए। अब क्या है— मक्खी। इसके साथ ही मेंढक की इतनी बड़ी आँखें। मेंढक ध्यान से देख रहा है। अब क्या लिखा है? गुनगुनाती मक्खी कई बार उसके पास से गुज़री। अगले पन्ने पर कितनी बड़ी मक्खी दिखाई दे रही है। यहाँ क्या लिखा है? 'गुन गुन', मक्खी ने कहा। अब इस चित्र में क्या हो रहा है? मेंढक कैसे बैठा है? क्या सोच रहा है? चुपके से बैठा हुआ है। यहाँ लिखा हुआ है— मेंढक बिना हिले, बिलकुल चुपचाप बैठा रहा। अगले पन्ने पर मेंढक मक्खी को ध्यान से देख रहा है। तालाब है। बड़े-बड़े पत्ते हैं। यहाँ लिखा है— 'गुन गुन', मक्खी ने कहा। इस चित्र में क्या दिख रहा है? मेंढक के पास मक्खी आ गई। यहाँ पर क्या लिखा हुआ है? मेंढक की आँखें फैल गईं। मक्खी गुनगुनाती हुई मेंढक के पास, और पास आ गई। अब क्या होगा? एक बच्ची— मेंढक मक्खी को पकड़ने की सोच रहा है। कैसे पकड़ेगा? बच्चों की चुप्पी। चलो देखते हैं। क्या दिख रहा है? अरे, मेंढक की जीभ कितनी लम्बी हो गई। और लिखा है— पटाक्। अब इस पन्ने पर लिखा हुआ है— मेंढक ने अपनी जीभ से मक्खी को पकड़ लिया। फिर क्या हुआ? बच्चे चुप रहे। कुछ देर बाद एक बच्चा बोला— मेंढक मक्खी को खा गया। यहाँ पर लिखा है— 'म् म् म्', मेंढक ने कहा। 'कितना अच्छा नाश्ता था!' इस प्रकार मेंढक ने नाश्ता कर लिया। तुम लोग भी नाश्ता करके स्कूल आते होगे। बच्चे चुप रहे। तो यह किताब पूरी हो गई।

चलो, अब दूसरी किताब देखते हैं। इसमें क्या बना हुआ है? एक बच्चे ने कहा— साँप।



और क्या-क्या दिख रहा है? तुममें से साँप किस-किस ने देखा है? एक बच्चे ने कहा– देखा है। कहाँ पर देखा है? नदी में। और किसी ने देखा है साँप? बच्चों की तरफ़ से कोई आवाज़ नहीं आई। साँप छोटा होता है या बड़ा? एक ने कहा– बड़ा होता है। दूसरे ने कहा– लम्बा होता है। उनसे आगे बात हुई कि वह किस रंग का होता है। एक ने कहा– काला होता है, दूसरे ने हरा कहा तो तीसरे ने पीला। अच्छा, अब इस किताब का नाम पढ़ते हैं। किताब का नाम लिखा है– *साँप ने सोचा।* अब तुम बताओ, इस चित्र में बना साँप क्या सोच रहा होगा? आगे किताब



पढ़ते हैं। किताब में लिखा है– साँप इधर-उधर घूमने निकला। तुम लोग भी घूमने जाते हो? कहाँ-कहाँ घूमने जाते हो? बच्चों ने कहा– हम झनकट जाते हैं, दुकान पर जाते हैं, खेत जाते हैं। और कहाँ जाते हो? बाज़ार जाते हैं। और कहीं मेला भी जाते हो? बच्चों की तरफ़ से कोई आवाज़ नहीं आई। तो यह साँप भी घूमने जा रहा है। देखो, इस चित्र में क्या बना हुआ है? बच्चों ने कहा– घर, पेड़, चारपाई। किताब में देखो, साँप कहाँ-कहाँ घूम रहा है? यहाँ लिखा हुआ है– घास पर। चित्र में घास कहाँ बनी हुई है? और क्या बना हुआ है? फूल-पेड़ बने हैं? पेड़ पर क्या बना हुआ है? पेड़ पर कौन-सी चिड़िया है? एक बच्चे ने कहा– कौवा है, दूसरे ने कहा– तोता है, तीसरे ने कहा– मुर्ग़ा है। चलो, कोई चिड़िया हो सकती है। फिर आगे लिखा है कि साँप कहाँ घूमने गया, पानी में। फिर कहाँ गया होगा? ये लिखा है– झाड़ी में। फिर कहाँ गया– पेड़ पर। पेड़ पर कहाँ लिखा है। एक बच्ची ने इशारा करके बताया– यहाँ पर लिखा है। अब सोचो, साँप कहाँ जा रहा होगा? इस चित्र में क्या बना हुआ है? मकान, सड़क बनी हुई है। अगले पेज पर कौन आ गया? कौन है ये– लड़की। इसमें लिखा है– साँप के सामने एक लड़की आ रही थी। अच्छा, अब साँप क्या करेगा? कुछ बच्चों ने कहा– लड़की को काटेगा। चलो, देखते हैं क्या हो रहा है? अब लिखा है– साँप ने सोचा, मेरे पास ज़हर है। तुमको पता है, साँप के पास ज़हर होता है। वह किसी को काट ले तो वह मर भी सकता है। लेकिन यह साँप क्या सोच रहा है? बच्चों के बीच चुप्पी छाई रही। उस लड़की को काटूँगा नहीं, अब क्या करेगा? काटेगा, या नहीं काटेगा? एक बच्चा– काट लेगा। दूसरा बच्चा– नहीं काटेगा। बाक़ी बच्चे चुप बैठे रहे। चलो, आगे देखते हैं। इसमें आगे लिखा है– साँप ने सोचा, वह लड़की मेरी तरफ़ आ रही है। और आगे लिखा है– तब तो इसे काटना ही पड़ेगा। अब देखते हैं क्या होता है? साँप क्या सोचता है? साँप सोचता है, अगर मैं इसे काटूँगा तो यह चिल्ला पड़ेगी। आवाज़ सुन लोग दौड़कर आ जाएँगे और मेरी जमकर पिटाई करेंगे। और आगे लिखा है– साँप सोच रहा है कि लड़की को काटेगा तो वह चिल्लाएगी और लोग आ जाएँगे व उसे मार डालेंगे। तब क्या होगा? अब साँप क्या भाग जाएगा? और आगे लिखा है– साँप दूसरा रास्ता पकड़कर खिसक लिया। इस तरह से साँप रास्ते से भाग गया। यह कहानी तुम लोगों को कैसी लगी? बच्चे चुप रहे। किताब में क्या-क्या था? बच्चों ने बताया– साँप, लड़की, पेड़, सड़क, झाड़ी आदि। तभी स्कूल में इंटरवल की घण्टी लगी और सभी बच्चे खाने के लिए कक्षा से चले गए।

बच्चों के साथ किताबों पर बातचीत के सन्दर्भ में सबसे पहली बात यह समझने की है कि इन बच्चों के साथ मेरा पहली बार संवाद हुआ। बच्चे बहुत खुलकर बात नहीं रख पा रहे थे। यह इस बात पर निर्भर करता है कि उनके

साथ इस तरह की बातचीत क्या पहले हुई है। परन्तु यह ज़रूर है कि वे अपनी बात रखने का प्रयास ज़रूर कर रहे हैं। साथ ही इस बातचीत में यह भी समझा जा सकता है कि शुरुआती कक्षाओं में बच्चों के साथ किताबों पर बातचीत कैसे करें। किस तरह बच्चों के अनुभवों को किताबों से जोड़ें, यह महत्त्वपूर्ण बात है। अकसर होता यह है कि हम बच्चों को किताब दिखाते ज़रूर हैं और वे देखते भी हैं, लेकिन बच्चों के साथ हम बहुत बातचीत नहीं करते। इस कारण बच्चे किताब को एक सीमित दायरे में ही समझ पाते हैं। बच्चों में समझ विकसित करने के लिए यह ज़रूरी है कि बच्चों को उनके अनुभवों को जोड़ने का मौक़ा दिया जाए जिससे उन्हें इस बात का अहसास हो कि वे जो सुन-पढ़ रहे हैं वह बात उनके आसपास की ही है। इसके साथ ही उन्हें लिखित भाषा का भी अहसास कराया जाए। इसके अन्तर्गत उन्हें यह अहसास हो कि जो सुनाया जा रहा है वह यहाँ लिखा हुआ है। इससे उन्हें पता चलता है कि किताब का नाम कहाँ पर लिखा है? लेखक का नाम कहाँ लिखा हुआ है? वे यह भी सोच पाएँ कि किताब के मुखपृष्ठ पर जो चित्र बना है उससे सम्बन्धित कहानी ही आगे दी गई है। साथ ही उनसे चित्रों पर भी बात करनी चाहिए। बातचीत के दौरान उनसे इस तरह के सवाल पूछे जाएँ जो उन्हें आगे अनुमान लगाने का मौक़ा देते हों। इस प्रक्रिया में चित्र भी काफ़ी मदद करते हैं। यह पढ़ना सीखने की प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। इसके साथ हम यह भी ध्यान दे सकते हैं कि बच्चों के उत्तरों को सही या ग़लत के खाने में न बाँटें। सही की दिशा में कुछ संकेत अवश्य दिए जा सकते हैं। यहाँ हमें समझना होगा कि बच्चे पढ़ना सीख रहे हैं, उन्हें अपनी बात रखना ज़रूरी है। इस कारण ज़रूरी यह है कि वह अपने अनुभवों को जोड़ें और किताब को समझने का प्रयास करें। उनका बोलना इसलिए भी ज़रूरी है कि उससे मौखिक अभिव्यक्ति व कल्पनाशक्ति का विकास भी होता है। अन्त में, सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के लिए सुरुचिपूर्ण सामग्री होनी चाहिए और बच्चों के साथ शुरुआत से ही उसका उपयोग होना चाहिए तभी वे एक पाठक के रूप में विकसित हो पाएँगे।

कमलेश चन्द्र जोशी प्राथमिक शिक्षा से लम्बे समय से जुड़े हुए हैं। प्राथमिक शिक्षा से जुड़े विभिन्न विषयों– शिक्षक शिक्षा, बाल साहित्य, प्रारम्भिक भाषा एवं साक्षरता आदि में गहरी रुचि। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ऊधम सिंह नगर में कार्यरत।
सम्पर्क : kamlesh@azimpremjifoundation.org

पढ़ने–लिखने की प्रक्रियाओं में बाल डायरी

मंजू नौटियाल

"बाल डायरी यानी बच्चों की स्वयं की डायरी जिसमें वे अपने सुने हुए, सोचे हुए और देखे हुए अनुभवों को लिख सकते हैं, अर्थात वे इसमें लिखने हेतु स्वतंत्र हैं, यहाँ उनपर किसी भी प्रकार की बन्दिशें नहीं हैं और उनके लिखने के मुद्दे उनके घर, गाँव, परिवार, विद्यालय या समाज में मौजूद हैं। बस ज़रूरत उन्हें इस बात का अहसास दिलाने की है कि वे इन तमाम मुद्दों पर लिख सकते हैं। सं.

सीखना-सिखाना निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। हम जब जन्म लेते हैं, तब से कुछ-न-कुछ सीखते रहते हैं। हमें अपने जीवन के अनेकों पड़ावों से गुज़रते हुए बहुत सारी चीज़ें सीखनी होती हैं, जिनमें पढ़ना-लिखना सीखना भी काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। इसकी तैयारी बचपन से ही प्रारम्भ हो जाती है। शिक्षक, परिवार, विद्यालय और समाज आदि सभी लिखने में बच्चों की मदद कर रहे होते हैं, परन्तु एक शिक्षक के हिस्से यह ज़िम्मेदारी विशेष महत्त्व रखती है। प्रत्येक बच्चा भाषा के रूप में बहुत सारे शब्द और वाक्यों के साथ विद्यालय में आता है। यहाँ शिक्षक उसके शब्दों के संसार को ज्ञान से जोड़ने का प्रयास करता है। शिक्षक के लिए उस समय चुनौती होती है कि वह इस माला को किस तरह पिरोए कि अलग-अलग परिवेश से आए हुए इन बच्चों को एक स्तर पर ला सके, ताकि प्रत्येक बच्चे को उसकी कक्षानुसार सीखने के तय प्रतिफलों तक पहुँचाया जा सके।

मैं अपने विद्यालय में कक्षा 4 और 5 के बच्चों को भाषा पढ़ाती हूँ। इन बच्चों को, पढ़ना-लिखना सिखाते समय मैंने कुछ बातें ग़ौर कीं, जैसे– बच्चों को अगर पढ़ने को बोला जाए तो वे पढ़ तो लेते थे परन्तु उस पढ़े हुए से भाव समझने में उन्हें दिक़्क़तें आती थीं, और ठीक इसी तरह अगर उन्हें लिखने को बोला जाए तो वे बोर्ड या किताब से उतारकर लिख तो लेते थे परन्तु जब उन्हें ख़ुद से सोचकर लिखने को बोला जाए तो वे असहज महसूस करते थे। इन समस्याओं के कारण मेरे बच्चों की पढ़ने-लिखने में रुचि कम थी और वे इससे बचने का प्रयास करते थे। मैं इन समस्याओं के साथ शिक्षण कर ही रही थी कि मुझे माह सितम्बर 2019 में विभागीय पत्र से बुनियादी भाषा शिक्षण पर एक कार्यशाला में प्रतिभाग करने की सूचना मिली और मैंने कार्यशाला में प्रतिभाग किया।

जब मैं कार्यशाला से वापस विद्यालय आई तो मेरे सामने भाषा की मूलभूत दक्षताओं को सिखाने के कई तरीक़े थे, अर्थात दीवार पत्रिका, आज की बात, बाल अख़बार, पढ़ने की घण्टी, चित्रों पर बातचीत, कहानी शिक्षण, कविता शिक्षण, बाल डायरी आदि। इन सबपर विचार करके मैंने सोचा कि बच्चों को ऐसे तरीक़े से सिखाया जाए जिसमें वे स्वतंत्र रूप से पढ़-लिख सकें तो मुझे 'बाल डायरी' का विचार सबसे उम्दा लगा। बाल डायरी यानी बच्चों की स्वयं की डायरी जिसमें वे अपने सुने हुए, देखे हुए और सोचे हुए अनुभवों को लिख सकते हैं, अर्थात इसमें वे लिखने हेतु स्वतंत्र हैं, यहाँ उनपर किसी

भी प्रकार की बन्दिशें नहीं हैं और उनके लिखने के मुद्दे उनके घर, गाँव, परिवार और विद्यालय या समाज में मौजूद हैं। बस ज़रूरत उन्हें इस बात का आइडिया देने की है कि उन्हें क्या लिखना है, कैसे और कब लिखना है, आदि। इस प्रकार बाल डायरी से पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए निम्नानुसार कुछ उद्देश्य तय किए :

- बच्चों को स्वतंत्र लेखन के अवसर देना।
- बच्चों को पढ़ने-लिखने हेतु अलग-अलग प्रकार के मौक़े देना, यानी पाठ्यपुस्तक से हटकर अपने परिवेश में उपलब्ध विभिन्न सन्दर्भों पर लिखना और पढ़ना।
- बच्चों को चित्र, कहानी और कविता बनाने के मौक़े देना।
- विविध समस्याओं को समझते हुए उनपर पत्र लेखन करने का मौक़ा देना।
- यात्रा वृत्तान्त लिखने हेतु प्रेरित करना।
- बच्चों की संयुक्ताक्षर एवं मात्राओं पर समझ बनाते हुए उनके लेखन में सुधार करना।

उपर्युक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए मैंने बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने हेतु बाल डायरी के विचार को आज़माने की सोचा और कक्षा 4 व 5 के बच्चों के लिए एक योजना बनाई, जो इस प्रकार थी :

- सभी बच्चे अपनी एक डायरी बनाएँगे और उसमें अपनी-अपनी दिनचर्या लिखेंगे।
- धीरे-धीरे विद्यालय की दिनचर्या भी अपनी-अपनी डायरी में लिखेंगे।
- घर एवं विद्यालय की दिनचर्या साथ-साथ लिखना।
- कहानी, कविता, चित्र और विविध पाठों पर अपने विचार लिखना।
- विविध वस्तुओं की निर्माण प्रक्रिया को लिखवाना और चित्र बनवाना।
- संस्मरण, छुट्टियों का विवरण या यात्रा वृत्तान्त लिखवाना।
- डायरी में स्थानीय समाचार लिखवाना।
- विविध समस्याओं पर पत्र-लेखन करवाना।

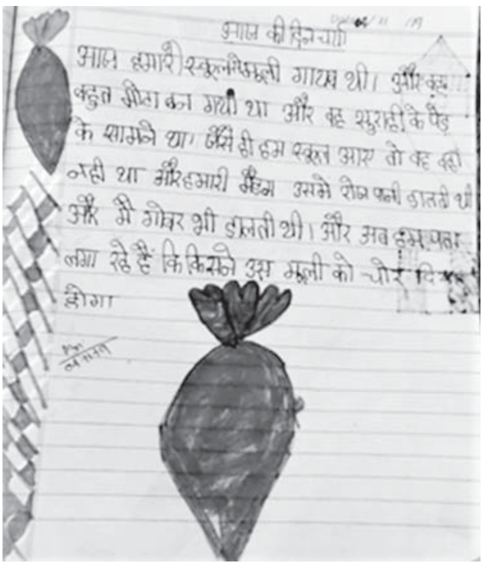
इस योजना पर माह सितम्बर से मार्च 2020 तक काम करने का सोचा और बच्चों के साथ निरन्तरता में कुछ गतिविधियाँ करने की कोशिश की गई जिनका विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

पढ़ना–लिखना सिखाने में बाल डायरी सम्बन्धी कुछ प्रक्रियाएँ

आओ लिखें अपनी डायरी : शुरुआती दौर में मैंने बच्चों से कहा कि चलो, हम सब अपनी एक-एक डायरी बनाते हैं जिसमें हम सभी जो कुछ काम दिनभर करेंगे, उसे अपनी दिनचर्या के रूप में डायरी में लिखेंगे। बच्चों को डायरी शब्द पसन्द आया और वे ख़ुशी-ख़ुशी तैयार हो गए, शायद डायरी उनके लिए नई चीज़ थी। बच्चों को पहले समझ नहीं आया कि इसमें क्या और कैसे लिखें। इसके लिए मैंने अपनी दिनचर्या बच्चों को लिखकर दिखाई और बच्चों के साथ पढ़ी। पढ़ने के बाद बच्चों के मन में भी डायरी लिखने का विचार आया और वो अगले ही दिन से डायरी लिखकर लाने लगे। शुरुआत में वे खाने-पीने, सोने, लिखने-पढ़ने और खेलने आदि पर डायरी लिखते। सितम्बर के महीने यही दिनचर्या चलती रही। इससे बच्चे विविध शब्दों जैसे घर, गाँव, डायरी, दिनचर्या, खेलना, कूदना, खाना, पीना, सोना, पढ़ना, लिखना आदि से परिचित हुए और साथ ही इन शब्दों को वे अपनी ज़िन्दगी की गतिविधियों से भी जोड़ रहे थे। शुरुआत में बच्चों के लिखने में बहुत सारी ग़लतियाँ थीं जिन्हें नज़रअन्दाज़ करते हुए उन्हें लिखने हेतु प्रोत्साहित किया गया और साथ ही ग़लत शब्दों को सही तरीक़े से लिखने और पढ़ने का अभ्यास बोर्ड पर करवाया गया।

डायरी में स्कूली गतिविधियाँ : डायरी लेखन को घर तक ही सीमित न रखते हुए स्कूली दिनचर्या के बारे में भी बच्चों को लिखने के लिए प्रेरित किया गया ताकि स्कूल में जो भी कार्य वे करते हैं उसे लिखित रूप दिया जा सके और वे इसे लिख सकें। इस प्रकार बच्चों ने स्कूली दिनचर्या में स्कूल की वे सारी बातें लिखीं जो उन्होंने कीं। जैसे– पढ़ने-लिखने, खेलने-कूदने, खाने-पीने, गप-शप, एक्सरसाइज़, गीत गाना व नाचना आदि। इसमें बच्चों ने छोटी-से-छोटी बातें अर्थात सुबह आकर ताला खोलना, प्रार्थना करना, व्यायाम करना, मध्यान्तर में हाथ धोना, खाना खाना और छुट्टी तक जो भी करते थे, वह सब लिखा। स्कूल में यदि कोई व्यक्ति आता, तो वे उसका वर्णन भी अपनी डायरी में करते थे।

आओ कहानी–कविता सुनें और बनाएँ : बच्चों को बहुत-सी कहानियाँ व कविताएँ हाव-भाव से सुनाई गईं और उसके बाद उनसे उनके पात्रों के बारे में सवाल-जवाब किया जाता, जैसे– क्या कहानी के पात्र ने सही किया? अगर वे उस कहानी के पात्र की जगह होते तो क्या करते? इस प्रकार बच्चे कहानी से जुड़ जाते और आगे उसपर कहानी बनाने लगते। वे जो बात बोल नहीं पाते वह उनकी लेखनी में दिख जाती। इसी प्रकार बच्चों ने विविध शब्दों से कहानियों का निर्माण भी किया। उन्हें बहुत सारे शब्द दिए गए जिनसे शुरुआत में वाक्य बनाने सिखाए गए और उसके बाद इन्हीं वाक्यों के मध्य सम्बन्ध बनाते हुए कहानी बुनना सिखाया गया। इस प्रकार बच्चे ख़ुद से बातें बना-बना कर कहानी बनाने लगे जिसे वे अपनी डायरी में लिखते थे।



एक दिन मैंने स्कूली दिनचर्या पर एक कविता बनाने को कहा, तो बच्चों ने इसपर कुछ इस तरह कविता बनाई :

प्राथमिक विद्यालय हमारा, है कितना अच्छा

हँसना, गाना, पढ़ना, है कितना अच्छा

अ, आ, इ, ई, क, का, कि, की सीखा सब है,

मैथ्स पढ़ते फटाफट, फटाफट

इंग्लिश पढ़ते How do you do सारे विषय पढ़ते हम,

प्राथमिक विद्यालय तो हमारा, है कितना अच्छा...

इसी तरह बहुत सारे शब्द बच्चों की डायरी से लिए गए और फिर उन्हीं शब्दों के तुकान्त शब्द बच्चों की मदद से बनाए गए जिनपर कविता बनाने के अभ्यास किए गए। नानी, पानी, रानी, धानी पर बच्चों ने तुकबन्दी कुछ इस प्रकार बनाई :

बड़ी सुन्दर है मेरी नानी, धारे से लाती है पानी

साड़ी पहनती है वह धानी, सब कहते हैं उसको रानी

लोककथा, लोकगीत एवं पखाणा लेखन : इसके साथ ही बच्चों को लोककथा, लोकगीत, पखाणा आदि लिखने को प्रेरित किया और उन्होंने अपने दादा-दादी से पूछकर लोककथा, लोकगीत, पखाणा आदि डायरी में लिखे। कुछ मैं उनको स्कूल में सुनाती, जिसे भी वे अपनी डायरी में लिखते, जैसे– मांगल-गीत, चौफला, लोकगीत, प्रार्थना, आदि।

जो घटता हुआ दिखे उसपर लिखना : माह अक्टूबर के दौरान विद्यालय में किचन गार्डन बन रहा था और स्कूल बिल्डिंग पर पेंट भी हो रहा था, तो बच्चों से इस बारे में लिखने को कहा गया और उन्होंने इन दोनों घटनाओं के बारे में जानकारी जुटाते हुए लिखा। इसमें बच्चों ने, किचन गार्डन क्या होता है, कहाँ बन रहा है, क्यों बना रहा है, कौन-कौन बना रहे हैं, कैसे बना रहे हैं, पेंट क्या होता है, कहाँ से मिलता है, क्यों किया जाता है, पेंट का काम कौन कर रहे हैं, आदि पक्षों को अपनी लेखनी में शामिल किया।

त्योहार, पकवान और मेलों पर लिखना : बच्चों को इस दौरान आने वाले त्योहारों, उनमें पकने वाले पकवान एवं विद्यालय व स्थानीय स्तर पर होने वाले मेलों के बारे में लिखने के अवसर दिए गए। इसमें बच्चों ने ख़ूब भागीदारी की, जैसे– संकट चौथ पर लिखते हुए उसमें बनाए जाने वाले लड्डू को बनाने की विधि लिखी, स्थानीय स्तर पर होने वाले मंसार मेले के बारे में लिखा, साथ ही बाल शोध मेले में जाकर मेले में क्या हुआ, वहाँ आए हुए विद्यालयों के बारे में, मेले में नई चीज़ क्या सीखी आदि के बारे में भी लिखा।

विविध वस्तुओं की निर्माण प्रक्रिया लिखवाना एवं चित्र बनवाना : विविध वस्तुओं जैसे– मुखौटा, बिग बुक, पेंसिल के छिलकों से आकृति, पेड़-पौधों की निर्माण कला, चित्रों को बनाकर उनपर वाक्य लिखना। बच्चों से कई बेकार वस्तुओं से कुछ भाषा एवं गणित की सहायक सामग्री बनवाई और उसको डायरी में लिखने को कहा, तो बच्चों ने जैसा उन वस्तुओं को बनाया उसका विवरण भी डायरी में लिखा। उन्होंने मुखौटा, बिग बुक, पेंसिल के छिलकों से फूल एवं फल, चीड़ की टहनी से छिपकली आदि बनाने की प्रक्रिया को लिखा। इन चित्रों पर बच्चों ने वाक्य भी बनाए।

अपनी मनपसन्द की चीज़ों के बारे में लिखना: बच्चों को अपनी मनपसन्द की चीज़ों के बारे में लिखने हेतु प्रेरित किया गया। इसमें उन्होंने मेरा प्यारा बस्ता, फल, फूल, अध्यापिका, दोस्त आदि के बारे में लिखा।





स्थानीय समाचार एवं पत्र लेखन : नवम्बर माह के दौरान बच्चों से कहा गया कि हमारे घर-गाँव में क्या हो रहा है, कौन क्या कर रहा है, खेती-बाड़ी और पशुपालन में क्या हो रहा होगा, बिजली, पानी, सड़क, रास्तों के क्या हाल-चाल हैं, आदि से सम्बन्धित बातों को भी हमें डायरी में लिखना चाहिए। यह आइडिया बच्चों को ठीक लगा और उन्होंने स्थानीय स्तर की छोटी-बड़ी बातों को लिखना शुरू किया। इसमें बहुत सारी स्थानीय समस्याएँ उभरकर आईं जैसे– ख़स्ताहाल सड़क और पानी की समस्या एवं इन्हीं समस्याओं को लेकर बच्चों ने पत्र लेखन किया जिसे बाद में जिला बेसिक शिक्षा एवं उप शिक्षा अधिकारी को भेजा गया। इसी तरह अपने गाँव के मेले में निमंत्रण हेतु अपने दोस्तों व रिश्तेदारों को भी बच्चों ने पत्र लिखे।

संस्मरण, छुट्टियों का ब्योरा एवं यात्रा वृत्तान्त लिखना : यादों को भी लिखा जा सकता है, इस बात की शुरुआत मैंने बच्चों के साथ अपनी कुछ यादें सुनाकर की। इसे बच्चों ने काफ़ी लगाव से सुना और लिखकर भी दिखाया। इसके बाद बच्चों ने भी अपने भूली-बिसरी बातों को लिखा।

इस बीच जाड़ों की छुट्टियाँ पड़ीं तो बच्चों को कहा गया कि वे जो कुछ करें, उसे डायरी में ज़रूर लिखें, और बच्चों ने वाक़ई में इस बीच भी लिखना जारी रखा, यह काफ़ी सुखद रहा। इन छुट्टियों में वे जहाँ-जहाँ गए वहाँ के यात्रा वृत्तान्त लिखकर लाए। एक बच्चे ने अपनी रूड़की यात्रा के बारे में लिखा।

वर्ण मात्रा एवं व्याकरण की समझ : बच्चों ने अपनी डायरी में उपर्युक्त बहुत सारी बातों को लिखा और इसमें उन्होंने कई नए शब्दों को सीखा व लिखा। इन शब्दों से बच्चों ने अलग-अलग मात्राओं के शब्दों को छाँटा, उन्हें पढ़ा और लिखा भी, इस प्रकार बने शब्दों से शब्द-जाल और शब्द पहेलियाँ भी बन गईं। कुछ शब्दों के विलोम और पर्यायवाची शब्द बनाए गए। डायरी के विवरणों में शामिल शब्दों से वाक्य रचना, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और एकवचन-बहुवचन, आदि से भी बच्चों को परिचित करवाया गया।

बच्चों का आकलन : लिखने में शुद्धता या अशुद्धता तो डायरी में दिख जाती थी। इसपर बच्चों के साथ बोर्ड पर बोलकर लिखने का अभ्यास किया जाता रहा, साथ ही आपसी सहमति से बच्चों से एक दूसरे की डायरी पढ़वाना भी लगातार चलता रहा, जिसमें बच्चे एक दूसरे को मदद करते हैं। आकलन हेतु बच्चों को बीच-बीच में श्रुतलेख, शब्दों से कहानी बनाना, अधूरी कहानी पूरी करना, कहानी-कविता बनाना व सुनाना, अपने अवलोकनों को लिखवाना आदि गतिविधियाँ की गईं। इनके माध्यम से निरन्तर जानने की कोशिश रही कि बच्चे क्या सीख रहे हैं और क्या सीखना अभी बाक़ी है।

कुछ चुनौतियाँ जो काम करते हुए समझ में आईं: बच्चों के साथ बाल डायरी को लेकर काम करते हुए कुछ दिक़्क़तें भी आईं जो इस प्रकार हैं :

- शुरू-शुरू में बच्चे लिखने को तैयार नहीं हुए क्योंकि उन्हें ये समझ में नहीं आ रहा था कि क्या लिखें और कैसे लिखें। यह इसलिए भी हो रहा था क्योंकि उन्हें लिखने का अभ्यास नहीं था।
- **बच्चों के लिखने में अशुद्धता** : बच्चे बहुत ज़्यादा अशुद्ध लिख रहे थे। इससे ऐसा लग रहा था कि अगर कोई इनकी डायरी देखेगा तो बोलेगा कि ये बच्चे कक्षा 4-5 में तो आ गए पर अभी तक शुद्ध लिखना भी नहीं आ रहा है।
- शुरू-शुरू में हर दिन एक जैसा लिखना ही हो पा रहा था जिससे बच्चों में एक क़िस्म का उबाऊपन दिख रहा था।
- डायरी के साथ-साथ पाठ्यक्रम को भी मैनेज करने, उससे सामंजस्य बैठाने में कुछ परेशानियाँ आईं।
- **डायरी के रख-रखाव में बच्चों की उदासीनता**: डायरी फाड़ देना, घर छोड़ देना, कभी लिखना कभी नहीं लिखना, आदि भी दिख रहा था।

इन चुनौतियों के समाधान हेतु शुरुआत मैंने ही की एवं पहले ख़ुद लिखकर दिखाया और धीरे-धीरे बच्चों से लिखवाया। शुरुआत घर की दिनचर्या से की और धीरे-धीरे स्कूली दिनचर्या और उसके बाद पढ़ने-लिखने सम्बन्धी गतिविधियों को डायरी से जोड़ते हुए आगे बढ़े। शुरू में बच्चे अशुद्ध लिखते थे, यहाँ धैर्य रखा और टॉपिक या मुद्दों को बदलते हुए लिखवाते-पढ़वाते गए, इससे उनका रुझान डायरी लेखन में बना रहा।

डायरी लेखन का बच्चों पर असर : डायरी लेखन ने विद्यालय में पढ़ना-लिखना सिखाने की प्रक्रियाओं को एक आधार दिया जिससे बच्चे इन प्रक्रियाओं में मन से शामिल हो पाए। बच्चों के सीखने के स्तर में कुछ बदलाव दिखे, जो इस प्रकार हैं :

- बच्चों में लिखने-पढ़ने के प्रति रुचि बढ़ी है, इस बात का प्रमाण उनकी डायरियाँ हैं जिसमें उन्होंने अपने लिखने-पढ़ने का अभ्यास किया हुआ है।

- बच्चे पढ़ने-लिखने का उपयोग अब स्थानीय सन्दर्भों में करने लगे हैं, क्योंकि अब उनकी लेखनी में उनका विद्यालय, घर, गाँव, परिवार, स्थानीय मेले, गीत, त्योहार आदि हैं।
- लिखने-पढ़ने में उनके मध्य एक प्रकार का अनुशासन दिखता है जिसमें वे एक दूसरे को सुनते हैं।
- बच्चों में मात्राओं की समझ विकसित हो पाई और वे अब काफ़ी हद तक शुद्ध लिख पा रहे हैं।
- डायरी में बच्चों ने बहुत सारे चित्र भी बनाए हैं और उसमें अपने मनपसन्द रंग भी भरे हैं, इससे उन्हें रंगों का ज्ञान भी अच्छे-से हो पाया है।
- बच्चे अब सुने, देखे हुए और सोचे हुए को लिख पा रहे हैं। जैसे— बच्चों के द्वारा लिखे गए संस्मरण, यात्रा वृत्तान्त और छुट्टी के ब्योरे, किचन गार्डन और पेंट वाली घटनाओं को लिखना आदि।
- शब्द भण्डार में वृद्धि के साथ-साथ व्याकरण की समझ भी विकसित हो पाई है।
- डायरी लेखन से बच्चों में दिनांक, दिन और समय की समझ अच्छे-से बन पाई है।
- आज बच्चे पत्र लेखन भी कर पा रहे हैं।

मुझे जो समझ में आया : बाल डायरी को लेकर मेरी अब जो समझ बन रही है, वह यह है कि बाल डायरी विद्यालय में पढ़ने-लिखने का माहौल बनाने हेतु एक बेहतर साधन है जिससे बच्चे समझ के साथ पढ़ना और लिखना सीख ही जाते हैं। कुछ और बातें, जिन्हें मैं समझ पाई, इस प्रकार हैं :

- बाल डायरी जीवन पर्यन्त उनके पास एक धरोहर है जिसे वे एक दस्तावेज़ के तौर पर अपने पास रख सकते हैं और अपने बचपन को बड़ी कक्षा में जाकर याद कर सकते हैं।
- बाल डायरी बच्चों के सामाजिक-सांस्कृतिक पक्षों को जानने का एक सशक्त माध्यम है। बच्चे डायरी में अपने घर, परिवार, गाँव, समाज के बारे में अपने विचार लिखते हैं, जिससे एक शिक्षक उनके मन की बात के साथ ही उनके घर-गाँव की परेशानियों को भी समझ सकता है।
- **डायरी अभिभावकों से जुड़ने का माध्यम हो सकती है** : मेरे वॉट्सएप स्टेटस को कुछ अभिभावकों ने देखा जिसमें मैंने बच्चों की डायरी के कुछ अंश डाले हुए थे, इससे वे बच्चों की पढ़ाई के बारे में जानने लगे हैं और अब स्कूल आकर ख़ुद सम्पर्क स्थापित करने लगे हैं।
- **बच्चों के स्वतंत्र लेखन हेतु बाल डायरी एक प्रेरणा है** : मैंने बच्चों से कहा कि अगर तुम्हें मेरा पढ़ाया हुआ कहीं पर समझ में न आए तो उसे भी डायरी में लिख सकते हो, और बच्चों ने इस बारे में भी बेझिझक होकर लिखा। इससे मुझे अपने पढ़ाने के तरीक़ों पर सोचने का मौक़ा मिला और कोशिश कर पाई कि उनके अनुरूप अच्छे-से समझा सकूँ।

मंजू नौटियाल 23 वर्षों से प्रारम्भिक कक्षाओं में शिक्षण कर रही हैं। वे पौड़ी जनपद के दूरस्थ क्षेत्र में स्थित राजकीय प्राथमिक विद्यालय सरासू में प्रधानाध्यापिका हैं। उन्हें बच्चों के साथ चर्चाएँ करना, खेलना और डायरी लिखना पसन्द है।

सम्पर्क : manjunautiyal100@gmail.com

जब बच्चों ने मापी दोस्ती!

नीतू सिंह

शिक्षा के सन्दर्भ में बनाए गए आयोगों, नीतियों और पाठ्यचर्या दस्तावेज़ों में बच्चों के लिए किताबें, पुस्तकालय और उसके सार्थक इस्तेमाल की वकालत की गई है। लेकिन घूम फिर कर बात बच्चों के लिए अच्छी पुस्तकों की उपलब्धता और स्कूल में पुस्तकालय के जीवन्त संचालन से जुड़ी व्यवहारिक समस्या पर आकर टिक जाती है। बच्चों के साथ पुस्तकों का योजनाबद्ध और जीवन्त इस्तेमाल शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों को तो पूरा करता ही है, बच्चों को साहित्य का एक सक्रिय पाठक भी बनाता है। नीतू सिंह ने अपने आलेख में पुस्तकालय की विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से बच्चों के साथ किए गए काम का अनुभव साझा किया है। सं.

एक सक्रिय और जीवन्त पुस्तकालय किसी समाज में सीखने-सिखाने के माहौल को मज़बूती प्रदान करता है। यह बच्चों में सृजनशीलता विकसित करने के लिए एक जगह भी मुहैया कराता है।

एनसीएफ़ 2005 में पुस्तकालयों को सीखने की एक महत्त्वपूर्ण जगह के रूप में सन्दर्भित किया गया है। इसमें यह प्रस्तावित है कि पुस्तकालय विद्यालय का एक अनिवार्य घटक होगा, जो सीखने के संसाधन प्रदान करने के साथ-साथ सक्रिय रूप से पढ़ने के विचार को मज़बूत भी करेगा। विभिन्न शिक्षा नीतियाँ बच्चों के विकास में जीवन्त पुस्तकालय की ज़रूरत को लगातार रेखांकित करती रही हैं। इसके बावजूद विगत कई दशकों से विद्यालयों के छात्र, हम जैसे वयस्क, शिक्षक आदि पुस्तकालय रहित जीवन जीते रहे हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में सभी स्तरों पर छात्रों के लिए आनन्ददायक और प्रेरणादायक पुस्तकें विकसित करने की ज़रूरत पर बल दिया गया है। साथ ही यह भी कहा गया है कि सभी तरह की पुस्तकों का स्थानीय और भारतीय भाषाओं में उच्च-गुणवत्ता वाला अनुवाद किया जाएगा। आवश्यकतानुसार तकनीकी सहायता के माध्यम से इनको स्कूल और स्थानीय सार्वजनिक पुस्तकालयों में बड़े पैमाने पर उपलब्ध कराया जाएगा।

पुस्तकों की उपलब्धता कुछ हद तक पढ़ने-पढ़ाने के प्रयासों में सहायक ज़रूर होगी, लेकिन बहुत सारे प्रश्न फिर भी अनुत्तरित रहेंगे। मसलन, उपलब्ध पुस्तकों को पाठक कैसे मिलेंगे? यह अकसर देखने को मिलता है कि कई विद्यालयों में पुस्तकों की उपलब्धता तो रहती है, लेकिन वहाँ पाठक नहीं होते। इस वजह से पुस्तकें अलमारियों में धूल खाती दिखती हैं। किसी विद्यालय के पुस्तकालय को जीवन्त बनाने के लिए अच्छी पुस्तकों की उपलब्धता के साथ-साथ बच्चों को इन पुस्तकों के साथ जोड़ने के प्रयासों पर बल दिए जाने की ज़रूरत है। यह जुड़ाव पुस्तकालय में पुस्तक-आधारित विभिन्न गतिविधियों के नियमित संचालन और संवाद के माध्यम से ही सम्भव हो पाएगा। इसमें कहानी सुनाना, कहानियों के चित्रों पर बातचीत, रंगमंच, आर्ट-क्राफ़्ट आदि गतिविधियाँ मददगार साबित हो सकती हैं।

किताबों से जोड़ने वाली गतिविधि : रीड अलाउड

बच्चों को किताबों से जोड़ने की बात आते ही हमारे मन में कई विचार आने लगते हैं। जैसे सुसज्जित लाइब्रेरी, किताबों की उपलब्धता, उन्हें रखने का स्थान, बैठक व्यवस्था, गतिविधि की जगह आदि। यक़ीन मानिए, जब हम इतना कुछ एक साथ सोचने लगते हैं तो कार्य शुरू करने में विलम्ब हो जाता है। मेरे साथ भी कुछ ऐसा ही हो रहा था। फिर मैंने तय किया कि अब और विलम्ब नहीं! मेरे पास किताबें थीं, एक स्कूल के बच्चे थे। मेरे विचार से यह शुरुआत करने के लिए काफ़ी था।

पहली बार जब मैं इस सिलसिले में विद्यालय की तीसरी कक्षा के बच्चों के साथ बातचीत कर रही थी, तो एक पल को लगा कि शायद मैं अपने उद्देश्य में सफल न हो पाऊँ! वजह स्पष्ट थी। उनसे बातचीत में यह पता चला कि स्कूल में लाइब्रेरी होने के बावजूद वे कभी लाइब्रेरी में नहीं गए थे। स्कूल की लाइब्रेरी अकसर बन्द रहती थी। प्राथमिक कक्षाओं के बच्चे तो लाइब्रेरी में बिलकुल भी नहीं जा सकते थे। उस स्कूल के शिक्षकों को इस बात का डर था कि बच्चे लाइब्रेरी में रखी चीज़ों को नुक़सान पहुँचा सकते हैं। स्कूल के बँधे-बँधाए पैटर्न में बच्चों को किताबों से जोड़ने का काम मुझे सचमुच ही मुश्किल लग रहा था। फिर भी किसी तरह शुरुआत तो करनी ही थी!

बच्चों के साथ बातचीत के क्रम को आगे बढ़ाने के लिए मैंने तय किया कि उनसे कहानियों पर बात की जाए। कहानियों का ज़िक्र आते ही बच्चों ने बताया कि स्कूल में न तो कहानी सुनाई जाती है और न पढ़ने को कहानी की किताबें ही दी जाती हैं। कुछ बच्चों का कहना था कि कभी-कभी घर में उनकी माँ कहानियाँ सुना देती हैं। जब मैंने एक बच्चे से कोई सुनी हुई कहानी सुनाने को कहा तो उसने 'मछली जल की रानी है' कविता सुनाई। इस कक्षा में कहानी और कविता को लेकर न तो कभी बात हुई होगी, न ही कोई काम। ऐसा मैंने अनुमान लगाया। मैंने तय किया कि इन बच्चों के साथ मैं लगातार रीड अलाउड गतिविधि को लेकर काम करूँगी जिसकी मदद से 'कहानी सुनाने' के साथ-साथ 'कहानियों पर चर्चा' भी हो पाएगी। कहानी चर्चा से बच्चों के साथ संवाद स्थापित करना सम्भव हो पाएगा जिसकी यहाँ ज़रूरत महसूस हो रही थी। मैंने रीड अलाउड करने के बारे में विचार तो ज़रूर किया, लेकिन मुझे नहीं पता था कि यह योजना किस तरह से काम करेगी। कुछ हफ़्तों तक मैं लगातार कहानियाँ सुनाती रही और उनपर चर्चा करती रही।

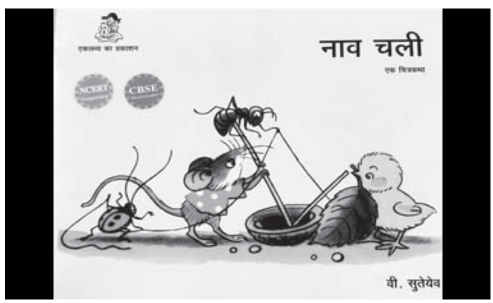
नियमित रूप से इस गतिविधि को कराने से कई तरह के अनुभवों से दो-चार होना पड़ रहा था जिन्हें मैं अपनी डायरी में दर्ज करती जा रही थी। उन्हीं में से कुछ अनुभव मैं यहाँ साझा कर रही हूँ।

अनुभव 1 : कहानी 'नाव चली'

आज स्कूल में तीसरी कक्षा के बच्चों को 'नाव चली' कहानी सुनाने की मेरी योजना थी। उसकी पूर्व तैयारी भी मैंने कर ली थी। क्या करना है? क्या सुनाना है? या क्या पूछना है? ये सोचते हुए मैं लाइब्रेरी पहुँची। बच्चे वहाँ पहले से मौजूद थे। उन्होंने बड़े ही उत्साह के साथ मेरा स्वागत किया और पूछा–

"आज कौन-सी कहानी सुनाएँगी आप?"

शायद इतनी जल्दी प्रत्युत्तर के लिए मैं तैयार नहीं थी। मैं महज़ मुस्कुराकर रह गई। मैंने उन्हें बैठने को कहा। फिर मैंने उनको एक बालगीत सुनाया जो कहानी के विषय से मिलता जुलता था–



नाव चली, नाव चली
नाव चली रे...
हम सब को लेकर गाँव चली रे...

इसे सभी बच्चों ने काफ़ी उत्साह से मिलकर गाया। उन्हें बहुत मज़ा आ रहा था। उन्होंने एक बार और गाने की ज़िद भी की।

मैंने कहानी पढ़ना शुरू करने से पहले 'नाव' विषय पर थोड़ी चर्चा करने का सोचा। कहानी सुनाने से पहले इससे माहौल बनाने में मदद मिलती है। वैसे बालगीत ने भी ठीक-ठाक माहौल तैयार कर ही दिया था। नाव पर चर्चा के लिहाज़ से मैंने कुछ सवाल बच्चों के सामने रखे। जैसे–

"क्या आपने कभी नाव देखी है?"

"क्या कभी नाव पर बैठने को मिला है?"

सवाल सपाट से थे। पर उनके उत्तर रोचक मिले। साथ ही जवाब देने का अन्दाज़ मज़ेदार।

ऋषि ने कहा, "हाँ देखा है, लकड़ी का होता है। मेरे गाँव में है। हम इस पार से उस पार जाते हैं।" इतने में हीर भी बोल पड़ी, "हाँ मैंने भी देखा है, चटाई की नाव गाँव में, और बैठी भी हूँ। बहुत मज़ा आया था।" बात आगे बढ़ी तो बच्चों के अनुभवों की बरसात शुरू हो गई। कल्पनाओं की उड़ान भी जारी थी। विक्की ने बताया, "हाँ हाँ, मैंने भी देखा है। मेरे गाँव में भी है और उस नाव में तो एक साथ बीस हज़ार लोग बैठते हैं (मैं यहाँ स्पष्ट कर दूँ उसने बीस हज़ार ही कहा था)। थोड़ी देर के बाद गीता कुछ याद करते हुए बोली, "मेरे गाँव में भी थी। पर अब नहीं है, क्योंकि तालाब सूख गया।"

फिर मैंने एक और सवाल पूछा, "क्या तुम लोगों ने कभी नाव बनाई है, यदि हाँ, तो कैसे?" एक साथ कई बच्चों ने अपने हाथ खड़े कर दिए। ऐसा लगा कि पूरी क्लास ही नाव बनाना जानती होगी। मेरे सवाल के कई जवाब थे। जैसे– काग़ज़ से, पत्ते से, पेड़ की टहनियों से और भी कुछ-कुछ...। कुछ देर तक यह बातचीत चलती रही। ऐसा लग रहा था हर बच्चा अपने हुनर को बताकर दर्ज कराना चाहता हो। इसी बीच मैंने किताब को अपने हाथ में लिया। उसके कवर को सामने रखते हुए अपनी हथेली से किताब के शीर्षक को ढँक लिया और बच्चों से पूछा कि किताब का शीर्षक क्या हो सकता है? बच्चों ने मुखपृष्ठ की तस्वीर को देखकर कई तरह के अनुमान लगाए। मसलन, चूजे की कहानी, तितली की कहानी, नाव की कहानी, जंगल की कहानी आदि। फिर मैंने शीर्षक से अपना हाथ हटाकर कहानी का नाम बताया और कहानी पढ़ना शुरू किया। कहानी पढ़ने के दौरान बच्चों से एक-दो सवाल भी किए। जैसे– क्या सारे जानवरों ने मिलकर नाव बना ली होगी? बच्चों ने तुरन्त कहा, "हाँ, बना ली होगी।" एक-दो बच्चों ने कहा, "नहीं बना पाए होंगे! क्योंकि इतने छोटे जानवर इतनी बड़ी नाव कैसे बना सकते हैं?" ख़ैर, बीच में ज़्यादा बातचीत न करते हुए मैंने कहानी पूरी की। कहानी पूरी होते ही बच्चों ने ज़ोरदार तालियाँ बजाईं। शायद उन्हें कहानी अच्छी लगी थी। ऐसा इसलिए कह रही हूँ क्योंकि इन बच्चों के साथ कहानी सुनाने के अलग-अलग अनुभव रहे। मसलन, जब उन्हें कहानी में ज़्यादा मज़ा नहीं आया तो उन्होंने ताली बजाई ही नहीं, या बजाई भी तो बड़ी कंजूसी से।

कहानी समाप्त होने पर मैंने उनसे कुछ और सवाल भी किए। जैसे– अगर जानवर मिलकर काम नहीं करते तो नाव बना पाते? क्या आपने कभी कोई काम समूह में किया है? उनके जवाब अलग-अलग थे। जैसे– कुछ ने कहा, "नहीं बना पाते क्योंकि नाव बनाने में मेहनत लगती है, अकेले से नहीं होगा।" एक ने कहा, "हमने एक बार मिलकर बण्डल बनाया था स्कूल में। बहुत मज़ा आया था।" दूसरे ने कहा, "नाव बनाना मुश्किल काम नहीं है, अकेले बना सकते हैं।"

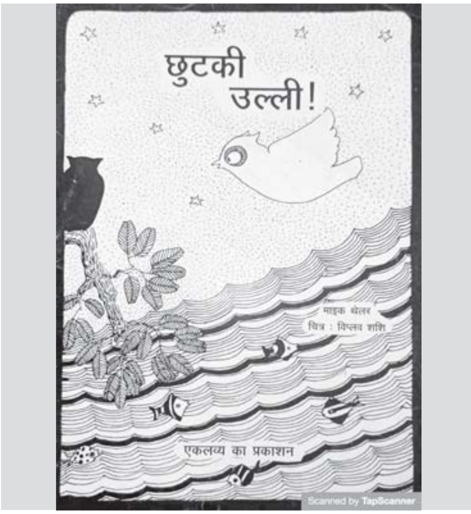
थोड़ी देर की चर्चा के बाद मैंने नाव बनाने की एक गतिविधि कराई। दो-दो बच्चों के जोड़ों ने मिलकर काग़ज़ की एक नाव बनाई। नाव बनाते वक़्त वे आपस में बात करते, एक

दूसरे को सुझाव देते कि नहीं, ऐसे बनेगा। कोई कहता, नहीं ऐसे। काग़ज़ को खोलते, दुबारा बनाते। हर बच्चा अपनी नाव बनाने में इस तरह डूबा था, जैसे उन्हें उसकी सवारी करनी हो। जब सबकी नाव तैयार हो गई तो मैंने बच्चों के साथ मिलकर उन सभी नावों को एक रस्सी में पिरो दिया और लाइब्रेरी के नोटिस बोर्ड पर लगा दिया। अपनी-अपनी नावों को नोटिस बोर्ड पर टँगा देखकर बच्चे इतने ख़ुश हुए कि उस दृश्य का वर्णन यहाँ शब्दों में करना शायद सम्भव नहीं हो पाए।

अनुभव 2 : छुटकी उल्ली

कुछ दिन बाद उसी कक्षा के बच्चों के साथ *छुटकी उल्ली* किताब पर रीड अलाउड करने की योजना बनी। हमेशा की तरह मैं अपनी तैयारी के साथ कक्षा में पहुँची। बच्चों ने चिल्लाकर मेरा स्वागत किया था। अब उन्हें कहानी सुनना अच्छा लगने लगा था। वे इस कक्षा का इन्तज़ार करने लगे थे। शुरुआत में बच्चों ने कविता कराने की ज़िद की। मैंने उन्हें 'सोन चिरईया' वाली कविता सुनाई। बच्चे भी मेरे साथ-साथ गा रहे थे। कहानी सुनाने के पूर्व मैंने उनसे कुछ सवालों पर चर्चा भी की। मैंने पूछा कि जब आपके मन में कोई सवाल आता है, आप किससे पूछते हैं?

बच्चों ने उत्तर में घर के सदस्यों और अपने शिक्षक के नाम बताए। फिर मैंने पूछा कि क्या आपको अपने सारे सवालों के जवाब मिल जाते हैं? उत्तर में कुछ बच्चों ने 'हाँ' और कुछ ने 'नहीं' कहा। मैंने फिर पूछा कि जब उत्तर नहीं मिलता है, तब क्या करते हैं? बच्चों ने कहा कि सोचते रहते हैं। किसी ने कहा, दोस्त से पूछते हैं?... थोड़ी चर्चा के बाद एक और सवाल उनके सामने रखा कि जानवर क्या-क्या करते हैं? क्या-क्या आपने देखा है? यह पूछते ही जवाबों की झड़ी लग गई– खेलते हैं, सोते हैं, खाते हैं, उदास होते हैं, आदि। फिर मैंने पूछा कि जानवर दिन में क्या और रात में क्या करते हैं? फिर से अनगिनत जवाब थे। दो-तीन बच्चों ने कहा कि चमगादड़ और उल्लू रात को नहीं सोते।



इस तरह धीरे-धीरे हम कहानी की तरफ़ बढ़ रहे थे।

जब बच्चों की कल्पनाएँ उड़ान भर रही थीं, तब मैंने कहानी के कवर पेज को दिखाते हुए उनसे अनुमान लगाने के लिए कहा। साथ ही उनसे पूछा कि यह कहानी किसकी होगी, क्या हुआ होगा कहानी में? कवर पेज देखकर बच्चे समझ गए कि कहानी उल्लू की है। किसी ने 'दो उल्लू की कहानी' कहा तो किसी ने 'छोटे उल्लू और बड़े उल्लू की कहानी', आदि। मैंने कहानी का नाम बताते हुए पढ़ना शुरू किया। बीच-बीच में दो-एक सवाल भी किए। जैसे– छुटकी उल्ली अगला सवाल क्या करेगी? बच्चों ने कई जवाब दिए। कुछ जवाब ऐसे थे जिन्हें सुनकर लगा कि उनके मन में जो सवाल हैं, वही सवाल बता रहे हों। यह कहते हुए कि छुटकी उल्ली अब यह पूछेगी।

मेरा अगला सवाल था कि क्या उसे अपने सवालों का जवाब मिलेगा? ज़्यादातर बच्चों ने कहा कि मिल जाएगा। फिर हम आगे बढ़े और कहानी पूरी की। कहानी समाप्त होते ही बच्चों ने हमेशा की तरह तालियाँ बजाईं।

रीड अलाउड के अन्त में मैंने कहानी को लेकर एक गतिविधि कराई और थोड़ी चर्चा की। चर्चा में मैंने पूछा कि छुटकी उल्ली की माँ हमेशा उसे ख़ुद से करके देखने को क्यों कहती

थी? बच्चों के जवाब कुछ इस तरह थे–

"ताकि वो ख़ुद ढूँढ़े जवाब",

"उसकी माँ तंग आ गई थी उसके सवालों से",

"उसकी माँ इसलिए ऐसा करती थी ताकि छुटकी उल्ली थक जाए और सो जाए",

"उसके सवाल मुश्किल थे इसलिए"।

गतिविधि कराने के लिए मैंने बच्चों को चार समूहों में बाँट दिया। हर समूह को एक कार्य दिया। पहले समूह को अपने हाथों से कक्षा की बेंच को मापने का, दूसरे को ब्लैकबोर्ड मापने का, तीसरे को कक्षा और चौथे समूह को दोस्ती मापने का काम दिया। कार्य बताते ही बच्चे अपने-अपने समूह के कार्यों में लग गए। काम को पहले करने और अव्वल आने की होड़ थी। बच्चों को मज़ा आ रहा था। सभी समूहों ने काम को प्रस्तुत किया और माप बताई। दुविधा तो चौथे समूह की थी कि दोस्ती को कैसे मापेंगे और कैसे बताएँगे? जब उन्होंने सारे समूहों को बताया कि उन्होंने दोस्ती मापी है, सब हँस पड़े और पूछा, कैसे मापी? दोनों बच्चे, जो प्रस्तुति दे रहे थे, गले लग गए और कहा, ऐसे।

इस कहानी का चुनाव करने से पहले मैं यह सोचकर थोड़ा डर रही थी कि पता नहीं बच्चों को कहानी अच्छी लगेगी या नहीं। क्योंकि इस किताब के चित्र ब्लैक एंड व्हाइट हैं। पर ऐसा नहीं हुआ और बच्चों ने ख़ूब रुचि दिखाई। चित्र रंगीन हों या ब्लैक एंड व्हाइट, कहानी के प्रभाव पर अधिक फ़र्क़ नहीं पड़ता अगर कहानी वाक़ई अच्छी हो और उसे प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया हो।

अनुभव समेटते हुए : कहानियाँ, बच्चे और पुस्तकालय

कोरोना की वजह से स्कूल बन्द होने से गतिविधि भी रुक गई। मुझे याद है जब मैं पहली बार इन बच्चों से मिली थी, ऐसा लगा था कि शायद इनकी दिलचस्पी कभी किताबों में न जगा पाऊँ। इन बच्चों का कहानियों और किताबों से दूर-दूर तक कोई वास्ता न था। पर थोड़े ही प्रयासों से कहानियों और किताबों ने अपना जादू कर ही दिया। स्कूल बन्द होने के पूर्व स्थिति ऐसी थी कि बच्चे लाइब्रेरी से जाना ही नहीं चाहते थे। मनोविश्लेषक ब्रूनो बेतलहाइम के हवाले से कृष्ण कुमार कहते हैं कि छोटे बच्चों के भावनात्मक विकास की कई गहरी ज़रूरतें नियमित रूप से कहानी सुनकर पूरी होती हैं। इसलिए कहानी सुनाने की गतिविधि पुस्तकालय में नियमित रूप से कराए जाने से बच्चों पर इसका सकारात्मक प्रभाव दिखता है। पुस्तकालय बच्चों के साथ एक अलग तरीक़े से संवाद करता है।

सन्दर्भ

1. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005)*, एनसीईआरटी, नई दिल्ली।
2. कृष्ण कुमार (1996), *बच्चे की भाषा और अध्यापक*, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
3. भारत सरकार (2020), *नेशनल एजुकेशन पॉलिसी*, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
4. *नाव चली*, एकलव्य प्रकाशन, भोपाल।
5. *छुटकी उल्ली*, एकलव्य प्रकाशन, भोपाल।

नीतू सिंह टाटा ट्रस्ट के पराग कार्यक्रम में लाइब्रेरी एडुकेटर्स कोर्स की संयोजक और फ़ैकल्टी के रूप में कार्यरत हैं। पिछले 10 वर्षों से शिक्षा-शास्त्र और भाषा के अध्ययन-अध्यापन के साथ-साथ वे बाल-साहित्य, शिक्षक-शिक्षा और बच्चों के पुस्तकालय के क्षेत्र से जुड़ी हुई हैं।

सम्पर्क : nitu.education@gmail.com

पढ़ना–लिखना और दीवार पत्रिका

संगीता फरासी

शुरुआती कक्षाओं में पढ़ना-लिखना सिखाना चुनौती भरा कार्य होता है। यदि पढ़ना-लिखना सिखाना परम्परागत तौर-तरीक़ों से हो रहा हो और वह बच्चों के सन्दर्भ से जुड़ा न हो तो यह चुनौती और भी बड़ी दिखाई पड़ती है। लेख में कुछ ऐसे तरीक़े सुझाए गए हैं जो शिक्षण को बच्चों की भागीदारी से अर्थपूर्ण बनाने का नज़रिया देते हैं। ख़ासकर 'दीवार पत्रिका' के माध्यम से यह सब कैसे किया जा सकता है, इन प्रयासों के बारे में लेख में विस्तार से चर्चा की गई है। इन कोशिशों में आने वाली चुनौतियों का भी ज़िक्र है। सं.

शुरुआती कक्षाओं यानी प्राथमिक स्तर पर बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाना, स्वयं में एक चुनौतीभरा कार्य है। इस स्तर पर बच्चों के अपने सन्दर्भ होते हैं, जिन्हें वे विद्यालयी प्रक्रियाओं या पाठ्यपुस्तकों में ढूँढ़ रहे होते हैं। जब उनके सन्दर्भों का जुड़ाव हमारी शिक्षण प्रक्रियाओं से नहीं हो पाता तो इसके परिणाम हमें विविध रूपों में दिखते हैं, जैसे किताबों के प्रति उनका रुझान कम होना, पढ़ने-लिखने को बोझ समझना, कक्षा में ध्यान न देना, दूसरों को ध्यान से न सुनना, यानी कुल मिलाकर बच्चों की पढ़ने में अरुचि।

उपर्युक्त के उपचार हेतु मैं 'दीवार पत्रिका' का प्रयोग कर बच्चों की पढ़ने के प्रति रुचि को जगाने का प्रयास कर रही थी। इसी बीच मुझे बुनियादी भाषा शिक्षण की एक कार्यशाला में प्रतिभाग करने का अवसर मिला। इसमें हमने भाषा सीखने में बातचीत का महत्त्व, दीवार पत्रिका, बाल डायरी, पढ़ने की घण्टी, बाल अख़बार और आज की बात जैसे महत्त्वपूर्ण विचारों और गतिविधियों पर चर्चा कर समझ बनाने का प्रयास किया था। इससे मुझे समझ में आया कि इन तमाम समस्याओं की जड़ में हमारी अरुचिकर शिक्षण प्रक्रिया ही है, जिसमें पाठ्यपुस्तक से रटकर याद किए हुए प्रश्नों के शीघ्र उत्तर देने को प्राथमिकता दी जाती है। इस कारण बच्चों का शिक्षण से जुड़ाव कम ही होता है। इसी बात ने मुझे सोचने को प्रेरित किया कि क्यों न पढ़ने-लिखने की प्रक्रियाओं में पाठ्यपुस्तकों के साथ-साथ स्थानीय सन्दर्भों और अन्य बाल पुस्तिकाओं का सहारा भी लिया जाए। इनपर बच्चों के साथ चर्चा-परिचर्चा करते हुए कुछ लिखना-पढ़ना और लिखे-पढ़े या रचे हुए को दीवार पत्रिका के रूप में संयोजित कर सामूहिक वाचन का अभ्यास करवाया जाए, तो वे पढ़ने-लिखने में रुचि ले सकेंगे।

दीवार पत्रिका बच्चों के मन की स्वतंत्र अभिव्यक्तियों, सृजनात्मकता या कल्पनाओं को निखारने का एक सार्थक माध्यम है। इसमें वे स्वयं अपने सन्दर्भों, पाठ्यपुस्तकों या अन्य किताबों से जुड़ी अपनी कल्पनाओं को विविध स्व-रचित रचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। दीवार पत्रिका में सामान्यतः चित्रों का संकलन, चित्र कथा, कविता, शब्द-जाल, वर्ग पहेली, मुहावरे, चुटकुले, लोकगीत, लोककथा, निबन्ध, पत्र, गणित पहेली, स्थानीय घटनाओं



का वर्णन आदि होते हैं। इन रचनाओं को एक कैलेंडरनुमा चार्ट पर संयोजित कर विद्यालय में कक्षाओं की दीवार पर लगाते हैं। उसे इस प्रकार लगाया जाता है कि आसानी से एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सके। बच्चों द्वारा इसका उपयोग प्रार्थना सभा के दौरान सामूहिक वाचन, प्रतिभा दिवस, छुट्टी के समय एवं स्वैच्छिक रूप से किया जाता है।

शिक्षा में सीखने-सिखाने के परम्परागत तौर-तरीक़े एवं परीक्षा की चली आ रही परिपाटी बच्चों को रटने की ओर धकेलती है, जिससे स्वयं सोचने-विचारने, पढ़ने-लिखने या अभिव्यक्ति के मौक़े उनके पास कम ही होते हैं। ऐसे में दीवार पत्रिका उनकी कल्पनाशीलता, मौलिक अभिव्यक्ति एवं सृजनात्मकता को उभारने का एक बढ़िया माध्यम हो सकती है, जिसमें भाषाई कौशल जैसे– सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना आदि का परिष्कृत होना निहित ही है। इस प्रकार बच्चों में भाषाई कौशलों को निखारने हेतु दीवार पत्रिका एक सशक्त माध्यम महसूस होता है जिसके लिए मैंने कुछ बातें तय कीं जो इस प्रकार हैं :

उद्देश्य :

- बच्चों में सृजनात्मकता के साथ निरन्तर पढ़ने-लिखने की आदत का विकास करना।
- पढ़ने-लिखने की गतिविधियों में स्थानीय सन्दर्भों को आधार बनाना ताकि बच्चों को पढ़ना-लिखना एक अलग कार्य न लगे और वे इसमें रुचि ले सकें।
- बच्चों के विचारों एवं भावनाओं को बातचीत की मदद से व्यक्त करवाना और साथ ही इन्हीं बातों को पढ़ना-लिखना सिखाने का आधार बनाना।
- बच्चों को पाठ्यपुस्तक, उनके द्वारा स्वरचित सामग्री और अन्य किताबों को पढ़ने के ख़ूब मौक़े देना और साथ ही पढ़े हुए पर उनके अनुभवों को बुलवाना एवं लिखवाना।
- बच्चों से निरन्तर पूछताछ करते रहना ताकि उनमें पढ़ने-लिखने के प्रति रुचि बनी रहे और कुछ नया करने की ओर बढ़ते रहें।

दीवार पत्रिका और इसके तहत होने वाली गतिविधियाँ काम कैसे करती हैं, अब इस बात की कोशिश होनी शेष थी जिसके लिए निम्नानुसार कार्ययोजना बनाई गई :

कक्षा 1 व 2 के लिए : शुरुआती कक्षाओं में बच्चों के साथ अब कुछ हटकर काम करने की शुरुआत की गई, जिसमें शुरुआती वर्णमाला सिखाने के बजाय उनसे स्थानीय सन्दर्भों या पाठ्यपुस्तकों के चित्रों पर ख़ूब बातचीत करके, उन्हीं की बातों को लिखना और फिर पढ़ने का अभ्यास करवाना, चित्र बनाने का अभ्यास करवाना, कहानी-कविता को हाव-भाव से सुनाने व लिखने का अभ्यास करवाना और इन्हीं से विविध वर्णों, मात्राओं, शब्दों और वाक्यों को पढ़ने-लिखने का अभ्यास करवाना।

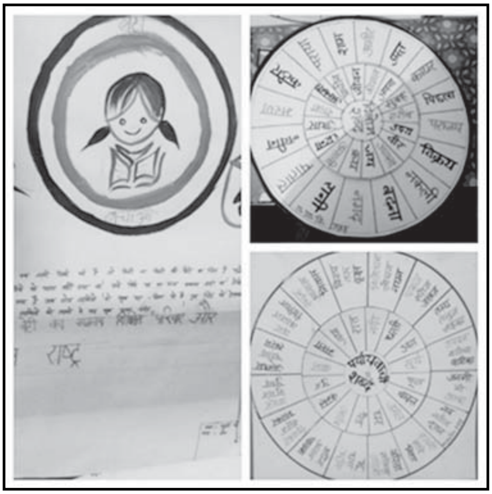
कक्षा 3, 4 व 5 के लिए : इन बच्चों के साथ कहानी-कविता को हाव-भाव से सुनाने व लिखने का अभ्यास करवाना, चित्र कहानी बनवाना, समझे हुए को लिखने का अभ्यास करवाना, सुने, देखे, सोचे हुए को लिखने हेतु प्रेरित करना, लिखे हुए से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया

आदि की पहचान करवाना, शब्द पहेली और विविध शब्दों से वाक्य बनवाना आदि।

उपरोक्त पढ़ने-लिखने की गतिविधियों के दौरान बच्चों द्वारा निर्मित विविध प्रकार की सामग्री को माहवार दीवार पत्रिका के रूप में संयोजित करना। इस योजना पर सितम्बर से मार्च तक काम होना तय किया गया जिसके तहत पढ़ने-लिखने हेतु अभी तक की गई कुछ प्रक्रियाएँ हैं :

चित्रों पर बातचीत : पाठ्यपुस्तक एवं अन्य किताबों से बहुत सारे रंग-बिरंगे चित्रों को बातचीत का आधार बनाया गया जिनपर बहुत सारे सवालों जैसे– इसमें आपको क्या-क्या दिख रहा है, कौन-कौन दिख रहे हैं, ये क्या कर रहे होंगे, क्यों कर रहे होंगे, आदि की मदद से चित्रों को जानने-समझने का प्रयास किया गया जिससे बालमन की विविध कल्पनाओं से ऐसी कहानियों का निर्माण हुआ जिनका न कोई सार था और न कोई अन्त, पर इन कहानियों में बच्चों की कल्पनाशीलता को उजागर करने के भरपूर मौक़े थे। इन कहानियों के संकलन में एक समस्या थी कि अभी बच्चे लिखित अभिव्यक्ति नहीं कर पा रहे थे तो यह समझ में आया कि बातचीत के साथ-साथ लिखने को लेकर भी काम करना चाहिए। इस गतिविधि में बच्चों से बातचीत के बाद ख़ूब चित्र बनवाए गए। उनके द्वारा बनाई गई कहानियों को चित्रों के माध्यम से दीवार पत्रिका पर उकेरना बच्चों के लिए एक रोचक कार्य हो गया, जहाँ अब रटने के बजाय बच्चे कहानी को अच्छी तरह से समझ जाते हैं।

आज की बात : बातचीत भाषा सीखने का आधार था जिसे चर्चा के साथ-साथ लिखित रूप भी दिया जाना चाहिए और इसके लिए बच्चों को इस बात का अहसास दिलाया जाना ज़रूरी था कि हम जो कुछ देखते, सुनते, बोलते या सोचते हैं उन तमाम बातों को लिखा भी जा सकता है। इसमें 'आज की बात' गतिविधि ने चमत्कारिक काम किया। इसमें हमारे द्वारा



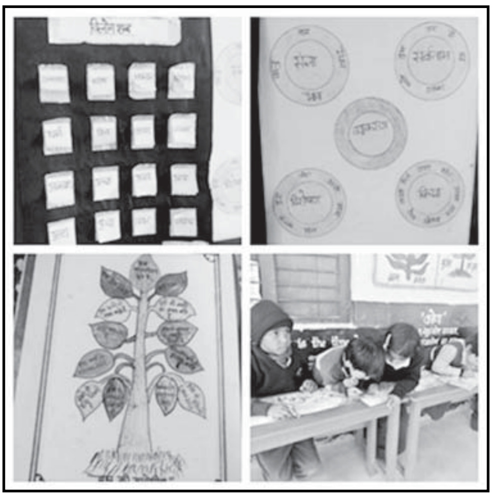
प्रत्येक दिन कक्षा में बच्चों के साथ ख़ूब सारी बात की जाती थी और बच्चे भी अपने बारे में ढेर सारी बातें बताते थे। इस बातचीत के दौरान किसी एक बच्चे की बात को आज की बात के रूप में मेरे द्वारा ब्लैकबोर्ड के निचले हिस्से में लिख दिया जाता था। अब इस लिखित बात को पहले बच्चे मेरे साथ पढ़ते थे और उसके बाद प्रत्येक बच्चे को उसे पढ़ने का मौक़ा दिया जाता था। उसके बाद सभी बच्चे इस आज की बात को अपनी-अपनी नोट बुक पर लिखते थे। इस प्रकार प्रत्येक दिन, प्रत्येक बच्चा अपनी बात बोलता था। और उनमें से बदल-बदल कर बच्चों के द्वारा कही गई बातों को आज की बात के रूप में लिखा और पढ़ा जाता था।

इस आज की बात को दिनभर में सात-आठ बार दोहराया जाता है और छुट्टी के समय भी बच्चे आज की बात को दोहराते हुए अपने-अपने घर की ओर जाते हैं। दूसरे दिन प्रार्थना सभा में भी उस वाक्य को दोहराया जाता है जिससे अधिकांश बच्चे उस वाक्य को लिखना व पढ़ना सीख जाते हैं। जैसे आज की बात में एक वाक्य था– "आज मैं सो नहीं पाया"। इस वाक्य को जब बच्चों ने पढ़ने-लिखने में दोहराया तो उन्होंने बहुत सारे वर्ण जैसे अ, ज, स, न, ह, प, और य के साथ-साथ आ, ओ, ई और ऐ की मात्रा को भी बोलना और लिखना सीखा। इस प्रकार जब बच्चे इन शब्दों को

पाठ्यपुस्तक या किसी अन्य किताब में देखते हैं तो वे इन शब्दों को पहचान पाते हैं। यह गतिविधि सचमुच में बड़ी कारगर साबित हुई, इससे बच्चे आत्मविश्वास के साथ अपनी बात को लिखने-बोलने और पढ़ने के लिए तत्पर हुए और साथ ही पढ़ने-लिखने में रुचि भी दिखाने लगे। यह भी देखने में आया कि इस गतिविधि में बच्चा अपने-आप को एक अध्यापक के रूप में भी महसूस कर रहा होता है क्योंकि उसकी बात को आज सभी बच्चों ने लिखा और पढ़ा है और वह स्वयं क्यों न लिखे, यह तो उसकी अपनी बात जो ठहरी। इस भाव ने बच्चों को लिखने हेतु प्रेरित किया। इस गतिविधि में बच्चों ने अपनी बात लिखने के साथ चित्र भी बनाए, जिन्हें दीवार पत्रिका के माध्यम से अन्य बच्चों को भी पढ़वाया गया।

पढ़ने की घण्टी : बच्चों को पढ़ने-लिखने के विशेष अवसर देना

कक्षा 1 व 2 के बच्चों के साथ उपरोक्त गतिविधियों के अलावा हमारे विद्यालय में उपलब्ध विविध रंग-बिरंगे चित्रों की किताबें पढ़ने को दी गईं, इन किताबों पर बातचीत में बच्चों ने ख़ूब रुचि दिखाई और एक आश्चर्यजनक अन्तर देखने में आया कि इन किताबों में बने चित्रों से, बच्चे बहुत ही सहज तरीक़े से कहानी की ओर बढ़ पा रहे थे। किताब पढ़ने की इस प्रक्रिया में



कक्षा एक के बच्चे भी मिला-मिला कर पढ़ने का प्रयास कर रहे हैं जो मेरे लिए एक सुखद अनुभव है। इस प्रकार लगातार पढ़ने व लिखने के अभ्यासों से बच्चों ने विविध प्रकार के चित्र बनाए, वाक्य व शब्द भी लिखे जिन्हें दीवार पत्रिका में स्थान मिला।

कक्षा 3 से 5 तक के बच्चों में एक आम समस्या थी कि बच्चे पाठ्यपुस्तक पढ़ तो लेते हैं पर उन्हें समझकर साझा करने में दिक़्क़त थी। जैसे– उन्हें पढ़ने को बोले जाने पर वे पढ़ तो लेते, पर जब उन्हें अपनी समझ को साझा करने को बोला जाता तो वे सहज महसूस नहीं करते थे। बच्चे समझ के साथ पढ़ें, इसके लिए पढ़ने की घण्टी के दौरान बच्चों को पहले-पहल विविध चित्र दिए गए और इन चित्रों पर बातचीत कर उनसे वाक्य लिखवाए गए। इन्हें मिलाकर बाद में कहानी के रूप में लिखा गया और इन्हीं वाक्यों से कुछ शब्दों को लेकर तुकबन्दी के माध्यम से कविता निर्माण का अभ्यास किया गया। अब बच्चों को उन्हीं के द्वारा रचित कहानियों और कविताओं को पढ़कर साझा करने को कहा गया तो पाया कि अब वे सहजता से कर पा रहे हैं। हालाँकि शुरुआती दौर में उन्हें कहानी और चित्रों के मध्य सम्बन्ध बैठाने में दिक़्क़तें आईं, पर निरन्तर अभ्यास से उन्हें मदद मिली और आज बच्चे विविध कहानी और कविताओं का निर्माण कर पा रहे हैं जिन्हें वे दीवार पत्रिका के माध्यम से प्रस्तुत कर रहे हैं।

इसी तरह पढ़ने की घण्टी के दौरान बच्चों को अपनी पसन्द की किताबें दी गईं और उनमें दिए चित्रों पर बातचीत से यह मदद मिली कि बच्चे धीरे-धीरे उसमें लिखी सामग्री को समझ के साथ पढ़ते हुए उनपर अपने स्वच्छन्द विचारों को चित्रों, शब्दों और वाक्यों में लिखने लगे हैं।

व्याकरण की समझ : पढ़ने की घण्टी बजते ही अब बच्चे किताबों को पढ़ने के लिए काफ़ी उत्सुक हैं और वे इन किताबों से बहुत प्रकार की गतिविधियों के माध्यम से विविध प्रकार के विलोम शब्द, पर्यायवाची शब्द, मुहावरे, संज्ञा,

सर्वनाम, क्रिया व विशेषण आदि के माध्यम से शब्द-जाल, वर्ग पहेली, शब्द वृक्ष जैसी सामग्री तैयार करते हैं, जिसे दीवार पत्रिका के माध्यम से प्रदर्शित किया जाता है।

सुने, देखे और सोचे हुए को लिखना : बच्चों में लिखने के प्रति समझ विकसित करने के लिए उन्हें डायरी लिखने के लिए प्रेरित किया गया, जिसमें वे अपनी दिनचर्या के साथ-साथ स्थानीय घटनाओं या त्योहारों के विवरण एवं अपने मन की बात लिखते हैं और फिर कक्षा में अपनी डायरी के अंश पढ़कर भी सुनाते हैं। इसके अलावा बच्चों ने अपने यात्रा संस्मरणों को भी लिखा।

हमारी दीवार पत्रिका : उपरोक्त पढ़ने-लिखने की प्रक्रियाओं के दौरान हमारे बच्चों द्वारा बहुत सारी सामग्री जैसे– विविध प्रकार की कहानियाँ, कविताएँ, नाना प्रकार के चित्र, शब्द एवं वाक्यों का संकलन, चित्र कहानियाँ, शब्द-जाल, शब्द पहेलियाँ, वर्ण-मात्रा जाल, शब्द वृक्ष, डायरी के अंश, यात्रा संस्मरण आदि तैयार की जाती है। यही सामग्री हम एकत्र कर रखते हैं जिसे महीने के अन्त में बच्चों के साथ मिलकर कैलेंडरनुमा चार्ट में संयोजित कर अपनी मासिक दीवार पत्रिका के रूप में तैयार करते हैं। इस पूरे कार्य को करने में हमारा प्रत्येक बच्चा ख़ुश एवं उत्साहित रहता है। दीवार पत्रिका में अपने द्वारा लिखे-पढ़े और रचे हुए लेखों को देखकर बच्चे प्रोत्साहित होते हैं और उसे सबके सामने प्रस्तुत करने हेतु लालायित भी रहते हैं। इस प्रकार दीवार पत्रिका का सामूहिक वाचन प्रार्थना सभा, छुट्टी के समय या प्रतिभा दिवस के दिन सभी बच्चों के सामने किया जाता है और उसके बाद इसे कक्षा-कक्षों में प्रदर्शित कर दिया जाता है जो कि कक्षा शिक्षण के दौरान बहुत सारी चीज़ों की पुनरावृत्ति में मददगार होती है और बच्चे भी समय-समय पर इसे पढ़ते रहते हैं।

कुछ चुनौतियाँ : इन तमाम प्रक्रियाओं को करते हुए कुछ चुनौतियाँ भी महसूस हुईं जो इस प्रकार हैं :

- शिक्षण के अलावा विद्यालय एवं विभाग के अन्य कार्यों में व्यस्त होने के कारण बच्चों के साथ गतिविधि-आधारित शिक्षण में निरन्तरता बनाए रखने में परेशानी होती है।
- बच्चों की अनुपस्थिति : अगर कोई बच्चा एक-दो दिन विद्यालय नहीं आता है, तो विगत दिनों में सीखी हुई चीज़ों को लेकर उसके साथ पुनः काम करना पड़ता है जो आगे बढ़ने में अवरोध पैदा करता है।
- कक्षा 1 में आने वाले बच्चों में विद्यालय के प्रति एक प्रकार का भय उन्हें गतिविधियों में शामिल नहीं होने देता।
- कक्षा एक में बच्चों को हिन्दी बोलने का अभ्यास भी कम ही होता है जिस कारण वे अपनी बात को खुलकर रखने में हिचकिचाते हैं।

इन चुनौतियों के साथ-साथ हमारा प्रयास रहा कि हम बच्चों के साथ उनकी भाषा में अधिक-से-अधिक बातचीत करते रहें ताकि वे विद्यालय में सहज महसूस करें। इसका परिणाम यह हुआ कि बच्चों का मेरे साथ बेहतर तालमेल बन पाया। अन्य कार्यों में व्यस्तता के साथ-साथ जो भी समय मिल पाया मैंने शिक्षण गतिविधियों में निरन्तरता लाने का प्रयास किया, जो सफल भी रहा।

बच्चों में जो बदलाव मैं महसूस कर पाई : इन गतिविधियों से बहुत सारे बदलाव मुझे बच्चों में दिखे जो इस प्रकार हैं :

- बच्चे लिखते-पढ़ते कुछ-न-कुछ (गीत, कहानी या चित्र) बना रहे होते हैं और अपनी दीवार पत्रिका को बनाने का इन्तज़ार करते हैं। इससे मुझे लगता है कि बच्चों में पढ़ने-लिखने के प्रति रुचि तो बढ़ी है।

- बच्चों में दूसरों को सुनने और अपनी बात को रखने के प्रति आत्मविश्वास में वृद्धि हुई है। इसका असर दीवार पत्रिका के सामूहिक वाचन के दौरान दिखा, जब वे इसे पढ़कर समझा रहे थे।
- बच्चे ख़ुद की कल्पना को उनके द्वारा बनाए गए चित्रों, कविताओं और कहानियों में दिखा पा रहे हैं।
- बच्चे सुने, देखे और महसूस किए अनुभवों को लिख पा रहे हैं, यह बात उनके डायरी लेखन और यात्रा वृत्तान्त से समझ में आती है।
- अपने अनुभवों को एक दूसरे से साझा करने की आदत विकसित हुई है, इस बात का अन्दाज़ा मुझे उनकी चर्चा-परिचर्चा से हुआ।

इन तमाम गतिविधियों से मुझे यह समझ में आ रहा है कि बच्चों के द्वारा रचित चीज़ों को सम्मान देने से बच्चों में पढ़ने-लिखने के प्रति रुचि बढ़ती है। दीवार पत्रिका इसके लिए एक बढ़िया माध्यम है जो विद्यालय में पढ़ने-लिखने की संस्कृति को बढ़ावा देने हेतु मददगार है। अपने नन्हे-मुन्ने बच्चों के हाथों से बनी दीवार पत्रिका को जब मैं दीवार पर मुस्कुराते हुए देखती हूँ तो मैं अपने बचपन की *नंदन* और *चम्पक* के किरदारों में खो जाती हूँ।

संगीता फरासी राजकीय प्राथमिक विद्यालय गहड़, ब्लॉक खिर्सू, श्रीनगर जिला पौड़ी गढ़वाल में शिक्षिका हैं। उनकी शिक्षा में होने वाले नवाचारों को अपने शिक्षण कार्य में अपनाने में गहरी दिलचस्पी है। वे शिक्षा से वंचित बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए अनवरत प्रयास करती रहती हैं।

सम्पर्क : spharasi333@gmail.com

पैकिंग कवर (रैपर) और पढ़ना-लिखना

श्रीदेवी

भाषा सीखना अधिकांशतः एक सहज प्रक्रिया है। बच्चे पढ़ना-लिखना भी सहज रूप से सीख सकते हैं यदि उन्हें पढ़ने-लिखने का सहज वातावरण मिले। बच्चे अपने आसपास उपलब्ध सामग्री को जानते हैं और उसका बारीक़ अवलोकन भी उनके पास रहता है। लेखिका ने बच्चों की इस क्षमता को पहचाना। उन्होंने बच्चे के आसपास आसानी से उपलब्ध सामग्री; खाद्य सामग्री और अन्य वस्तुओं के रैपर का पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए अर्थपूर्ण उपयोग किया। लेख में लेखिका ने अपने द्वारा किए गए इस काम के अनुभव साझा किए हैं। सं.

शहरी सरकारी विद्यालयों में अध्यापन कराने वाले शिक्षकों की कई अलग तरह की चुनौतियाँ होती हैं। इनमें व्यवस्थागत और बच्चे के परिवेश सम्बन्धित चुनौतियाँ भी शामिल हैं। बाज़ार जिस सघनता के साथ शहरी बच्चों के जीवन में हैं, तुलनात्मक रूप से ग्रामीण बच्चों के जीवन में कम हैं। बच्चों के पढ़ना-लिखना सीखने को लेकर आमतौर पर हर विद्यालय के शिक्षक चिन्तित ही रहते हैं। कार्यशालाओं के दौरान शिक्षकों के साथ हुई बातचीत से पता चलता है कि हर शिक्षक के पास चार-पाँच और कुछ के पास इससे ज़्यादा संख्या में ऐसे बच्चे रहते हैं जो पढ़ने-लिखने में कक्षा के अन्य साथियों की तुलना में पिछड़े होते हैं। हर शिक्षक को लगता है मेरी ही कक्षा के जो बच्चे नहीं सीख पाए हैं, इन्हें सिखाने के लिए कुछ तरीक़े जान पाऊँ या उनका उपयोग करूँ। सीखने के सन्दर्भ में विचार करें तो हम ये तो जानते हैं कि किस उम्र के बच्चों के सीखने के क्या चरण होते हैं और अब हम इस बात से भी अच्छी तरह वाकिफ़ हैं कि बच्चों के सीखने में उनके परिचित सन्दर्भों की भूमिका केन्द्र में होती है। कक्षा में इन सन्दर्भों के इर्द-गिर्द शिक्षण की प्रक्रिया कैसे कराएँ, इसपर भी विचार करना ज़रूरी है।

हम सब यह भी समझते हैं कि कभी भी कोई एक संसाधन किसी कौशल को (विशेषकर पढ़ना-लिखना) सीखने का एक मात्र समृद्ध स्रोत नहीं हो सकता। इसलिए पढ़ना-लिखना सिखाते समय शिक्षक को भी पाठ्यपुस्तक की आस्था से थोड़ा आगे बढ़ना होता है। रायपुर शहर के एक प्राथमिक विद्यालय की शिक्षिका ने कक्षा दूसरी के बच्चों के साथ ऐसा ही एक प्रयोग अपनी कक्षा में किया है। उनकी कक्षा में चार बच्चे ऐसे थे जिन्हें पढ़ने में बहुत मुश्किल होती थी। उनके लिए कुछ तरीक़ों पर विचार करते हुए जिन वस्तुओं का बच्चे घर में उपयोग करते हैं उनपर कक्षा में चर्चा की और लिखने की गतिविधियाँ आयोजित कीं जो बच्चों के लिए एक नए तरह का अनुभव रहा।

पहले दिन शिक्षिका ने बच्चों को कुछ रैपर दिखाए और पूछा कि ये क्या हैं? तीन-चार बच्चों ने बताया कि इसमें नमक मिलता है। एक

ने कहा, इसमें दही मिलता है। और बच्चों ने बहुत सारे रैपर उठाकर यह बताया कि किसमें क्या मिलता है। बच्चों के द्वारा बताई जा रही वस्तुओं को शिक्षिका ने दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया। और इसी तरह से चार्ट पर रैपर को चिपकाया और कक्षा में लगा दिया।

ऐसी वस्तुएँ जिन्हें खा सकते हैं।	ऐसी चीजें जिन्हें नहीं खा सकते हैं।
नमक	अगरबत्ती
पापड़	साबुन
जीरा	माचिस
दही	शैम्पू
सोन पापड़ी	

अगले दिन शिक्षिका ने बच्चों से पूछा, कल हम क्या कर रहे थे? बच्चों ने पहले दिन की पूरी कक्षागत गतिविधि बताई, जिसे एक-दो वाक्यों में बोर्ड पर लिख दिया। आज हम एक-एक चीज़, जिसका नाम लिखा था, के बारे में बताएँगे और उन्हें लिखेंगे। सबसे पहले उन्होंने नमक का रैपर उठाया। उसपर बच्चों से बातचीत शुरू की। शिक्षिका जैसे-जैसे प्रश्न पूछतीं, बच्चे जवाब देते जाते।

शिक्षिका : ये किस चीज़ का रैपर है?

बच्चे : ये नमक का पैकेट है।

शिक्षिका : अच्छा, थोड़ा सोचो कि रैपर और पैकेट में क्या अन्तर है?

बच्चे चुप रहे।

शिक्षिका : जब दुकान जाते हो तो दुकान वाले से क्या बोलते हो? मुझे नमक का रैपर देना या नमक का पैकेट देना?

बच्चे : मुझे नमक का पैकेट देना।

शिक्षिका : रैपर क्यों नहीं माँगते हो?

बच्चे : क्योंकि पैकेट में सामान भरा होता है, रैपर में सामान नहीं होता।

शिक्षिका : अभी जो मैं पकड़ी हूँ वह क्या है– नमक का पैकेट या नमक का रैपर?



चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

बच्चे : नमक का रैपर।

इस बार शिक्षिका ने बच्चों से नमक के उपयोग आदि पर बातचीत की। इसे बोर्ड पर लिखा और बच्चों को पढ़ने के लिए बुलाया। इसी तरह उन्होंने दो-तीन वस्तुओं के बारे में चर्चा कर उस बातचीत को बोर्ड पर लिखा और बच्चों के साथ पढ़ने पर काम किया। कुछ और रैपर बच्चों को दिए और उन्हें चार्ट पेपर पर लिखने के लिए कहा। बच्चों के द्वारा जो कुछ भी लिखा गया उसे कक्षा की दीवारों पर लगाया गया।

बच्चों के साथ इस पूरे काम को करने के दौरान शिक्षिका के बड़े रोचक अनुभव रहे। रैपर मँगाने पर बहुत-से बच्चे सिगरेट और गुटखे के रैपर लेकर आए। इनपर बच्चों से बात की और सेवन से स्वास्थ्य पर होने वाले दुष्प्रभाव बताए।

इस पूरी प्रक्रिया में शिक्षिका ने बच्चों को उनके जीवन से जुड़ी वस्तुओं को केन्द्र में रखकर बातचीत को आगे बढ़ाया। यही उनके पढ़ना और लिखना सीखने का आधार भी बनी। कक्षा में इस प्रक्रिया को करने के कारण कुछ उन बच्चों की, जो पाठ्यपुस्तक पढ़ाने के दौरान रुचि नहीं लेते थे, पढ़ने और लिखने की प्रक्रिया में सहभागिता बढ़ी है। वे दो बच्चे भी, जो विद्यालय नहीं आते थे, अब थोड़ा नियमित रूप से स्कूल आ रहे हैं।

बातें जिन्हें हमें (शिक्षक को) समझना चाहिए :

- बच्चों को पढ़ना-लिखना सीखना हमें एक विशेष काम लगता है लेकिन काफ़ी सहज बन सकता है।
- पढ़ने-लिखने के लिए हर बार किताब खोलना ज़रूरी नहीं है।
- वे जिन वस्तुओं का रोज़ उपयोग करते हैं उनके बारे में उनके अनुभव इस पढ़ने-लिखने को सार्थक सन्दर्भ प्रदान करते हैं, जिससे उन्हें पढ़ना-लिखना सीखने में मदद मिलती है।
- जो बच्चे पढ़ना-लिखना नहीं सीख पाए हैं उनके लिए इसे वैकल्पिक तरीक़े के रूप में भी देखा जा सकता है।

इस पूरे काम को करने के दौरान कुछ प्राप्तियाँ भी रही हैं :

- रैपरों के माध्यम से पढ़ना-लिखना सिखाने के प्रयास में बच्चों ने विशेष रुचि दिखाई।
- घर में उपयोग किए जाने वाले रैपरों पर बच्चों ने अधिक जानकारी साझा की।
- बच्चे जिन वस्तुओं का उपयोग अपने दैनिक जीवन में करते थे उनके बारे में लिखना उनके लिए नया अनुभव रहा।
- एक ही वस्तु के बारे में सब बच्चों ने अलग-अलग तरह की बातें साझा कीं।
- इस पूरे काम के दौरान बच्चों ने बहुत सारा काम ख़ुद से और समूह में कार्य किया।

इस पूरे काम को करने के बाद यह समझ पाई कि :

बच्चों को कुछ सिखाना बहुत आसान नहीं है। इसपर लगातार विचार करते रहना पड़ता है। आज के काम की कल के काम से निरन्तरता देखनी पड़ती है। कुछ करने के बाद उनके चेहरों पर एक मुस्कान दिखती है, जिसने मेरे काम को भी सार्थक बनाया है।

श्रीदेवी ने पण्डित रविशंकर शुक्ल महाविद्यालय से साहित्य और अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। पिछले पन्द्रह वर्षों से प्राथमिक शिक्षा में भाषा शिक्षण के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं। प्रमुख रूप से शिक्षक-शिक्षा, बाल साहित्य, और प्रारम्भिक साक्षरता में रुचि है। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, रायपुर छत्तीसगढ़ कार्यरत है।

सम्पर्क : sreedevi@azimpremjifoundation.org

सीखने की राह में पुस्तकालय का संग

सम्पूर्णानन्द जुयाल

औपचारिक पाठ्यक्रम से इतर पुस्तकों का वृहद संसार है। यह संसार पढ़ने के आनन्द से तो भरा है ही, एक परिपक्व पाठक बनने की राह भी बनाता है। जिसे हम सीखना कहते हैं वह दरअसल पुस्तकों के इस संसार के बिना सम्भव ही नहीं। पुस्तकालय के माध्यम से यह जीवन को अलग-अलग सन्दर्भों में समझने के मौक़े देता है। साहित्य का यह रस स्कूली जीवन को तो सुगम बनाता ही है जीवनभर के लिए एक सक्रिय पाठक भी बनाता है। इस आलेख में लेखक ने पुस्तकालय के इसी प्रभाव से जुड़े अपने अनुभवों को साझा किया है। सं.

"किताबें यदि बच्चों की पहुँच में हों तो वे निश्चित ही उसे टटोलते, देखते हैं, और साथ ही समझने की कोशिश भी करते हैं। यही कोशिश उन्हें किताबों की दुनिया से परिचित करवाती है, इसलिए हम बड़ों का दायित्व है कि किताबों तक उनकी पहुँच बनाएँ और साथ ही उन्हें बरतने में उनकी मदद भी करें।"

भाषा के सन्दर्भ में शुरुआती कक्षाओं में स्कूली शिक्षा का दायित्व क्या है? शायद बच्चों में भाषा के मूलभूत कौशलों, जैसे– सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना आदि का विकास करना, ताकि इन मूलभूत कौशलों के आधार पर वे विज्ञान, गणित, पर्यावरण अध्ययन जैसे विविध विषयों में अपनी समझ बना सकें और साथ ही अपने लिए दुनिया के मायने भी गढ़ पाएँ। इन भाषाई दक्षताओं के निमित्त कई बार आँकड़े बताते हैं कि फलाँ प्रतिशत बच्चे फलाँ कक्षा में पढ़ना-लिखना नहीं जानते। इसका एक मूलभूत कारण यह भी समझ में आता है कि विद्यालयों में भाषा शिक्षण की प्रक्रियाएँ ज़्यादातर पाठ्यपुस्तकों तक ही सीमित हैं, इनमें सामान्यतः उपलब्ध बाल साहित्य का अर्थपूर्ण उपयोग नहीं हो पा रहा है।

भाषाई दक्षताओं के विकास हेतु हमारे पास पाठ्यपुस्तकों के रूप में एक संसाधन मौजूद है ही, परन्तु अकसर मैंने अपने आसपास यह देखा और सुना है कि अभी तक पाठ्यपुस्तकें विद्यालय में नहीं पहुँच पाई हैं, अभी तो छप ही रही हैं, अब तो बहुत देर हो गई, इत्यादि, तो अब क्या पढ़ाएँ और कैसे पढ़ाएँ? जैसे यक्ष प्रश्न हमारे सामने होते हैं और समय निकला जा रहा होता है। समाधान के तौर पर कभी 'मिशन कोशिश' का कार्यक्रम आ जाता है व सीखने के प्रतिफलों पर ख़ूब माथापच्ची होती है। इसका परिणाम हमारे सामने है। पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए बहुत सारे कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं पर विद्यालयों में भाषा शिक्षण की प्रक्रियाओं की धुरी में पाठ्यपुस्तक ही देखने में आती है, और उसमें भी फ़ोकस अभ्यास-माला पर होता है, जिसमें लम्बे समय तक पढ़कर प्रश्नों के उत्तर याद करने तक ही पाठ्यपुस्तकों को सीमित कर दिया जाता है। क्या पाठ्यपुस्तकों के अलावा अन्य संसाधनों का उपयोग भी पढ़ने-लिखने की प्रक्रियाओं में किया जा सकता है? और अगर हाँ तो फिर कैसे? इस सम्बन्ध में पहली बात यह है कि पाठ्यपुस्तकें ज्ञान प्राप्त करने का केवल एक माध्यमभर हैं, सबकुछ नहीं हैं, इसके

अलावा हमारे परिवेश और उपलब्ध बाल साहित्य का उपयोग भी भाषा शिक्षण में किया जा सकता है।



पुस्तकालय

चार साल पहले जब मैं अपने इस विद्यालय में आया तो बहुत सारी भ्रान्तियों से रूबरू हुआ। अपने साथियों से विद्यालयों में उपलब्ध बाल साहित्य या पुस्तकालय के बारे में चर्चा-परिचर्चा होती रहती थी जिससे बाल साहित्य के उपयोग पर बहुत सारी धारणाओं के बारे में पता चला, जैसे– बच्चे तो किताबें फाड़ देते हैं, ले जाने पर वापस ही नहीं लाते हैं, किताबें खो जाती हैं, बच्चे किताबें नहीं पढ़ते केवल चित्र ही देखते हैं, बच्चों को ज़्यादा स्वतंत्रता देना बेकार है, अपनी पाठ्यपुस्तक ही पढ़ लें बहुत है, इत्यादि। ये सभी कारण बच्चों को किताबों से दूर रखने हेतु पर्याप्त थे। इन सब बातों के बीच ही निर्णय लिया कि ख़ुद कोशिश करके देखा जाए। और पहले क़दम के रूप में पुस्तकालय को संगठित किया गया जिसके लिए पूर्व तैयारी के तौर पर कुछ कार्य इस प्रकार किए गए :

- अलग-अलग अलमारियों में रखी गई किताबों को एक जगह एकत्र किया गया और बच्चों की मदद से उन्हें साफ़ किया गया।
- पुरानी व नई किताबों को छाँटकर अलग-अलग रखा गया।
- चित्रों वाली किताबों व टेक्स्ट वाली किताबों को अलग-अलग किया गया।
- अब कक्षा स्तर के अनुसार किताबों को छाँटकर अलग रखा गया।
- एक कक्ष में इन किताबों को अलमारियों में एवं विभिन्न डोरियों पर सुसज्जित किया गया ताकि बाल पुस्तकालय के रूप में इनको व्यवस्थित किया जा सके।

इस प्रकार विद्यालय में उपलब्ध बाल साहित्य को बाल पुस्तकालय के रूप में व्यवस्थित तो कर दिया परन्तु अब सवाल यह था कि इन किताबों का उपयोग पढ़ने-लिखने हेतु कैसे किया जाए और इसके लिए कुछ बातें निम्नवत तय की गईं :

- बच्चों में पुस्तकों के रखरखाव के प्रति संवेदनशीलता लाना, ताकि किताबों का सदुपयोग बिना किसी क्षति के किया जा सके।
- बच्चों को उनके स्तरानुसार उपलब्ध बाल साहित्य को पढ़कर अपनी समझ साझा करने व लिखने के अवसर देना।
- बच्चों से उनके पढ़े व लिखे पर निरन्तर बातचीत करना।

पुस्तकालय उपयोग हेतु कार्य योजना : उपर्युक्त बातों को संज्ञान में लेते हुए एक कार्य योजना तैयार की गई जिसमें कुछ प्रमुख बिन्दुओं, जैसे– पुस्तकालय उपयोग पर बच्चों से संवाद, कक्षाओं के अनुसार किताबों का वितरण, पुस्तकालय के नियमित उपयोग हेतु पढ़ने की घण्टी एवं पढ़ने का कोना, समूह चर्चा-परिचर्चा के साथ-साथ एक दूसरे से

समझ को साझा करना, कक्षाओं में पढ़ने का कोना विकसित करना, आदि पर काम करने का सोचा गया।

बच्चों ने ली ज़िम्मेदारी : पुस्तकालय हेतु किताबों का एकत्रीकरण, साफ़-सफ़ाई, पुनर्गठन और निर्माण या किताबों का रख-रखाव, वितरण, लेनदेन रजिस्टर मेंटेन करना और पढ़ने-लिखने में किताबों का उपयोग आदि सभी प्रक्रियाओं में बच्चों ने ख़ूब भागीदारी निभाई। इसमें बच्चों के साथ किताबों के महत्त्व और पुस्तकालय के रखरखाव को लेकर काफ़ी बातचीत की गई और साथ ही उन्हें किताबों के रख-रखाव, वितरण, लेनदेन रजिस्टर को मेंटेन करने जैसी कुछ ज़िम्मेदारियाँ सौंपी गईं। इसका परिणाम यह रहा कि बच्चों में पुस्तकालय के प्रति अपनेपन की भावना विकसित हो पाई और वे आज भी अपनी ज़िम्मेदारियों को बख़ूबी निभा रहे हैं।

किताबों का स्तरीकरण : हमारे विद्यालय में आज लगभग 500 किताबें उपलब्ध हैं, जिनमें बहुत सारी किताबें पुरानी हैं और कुछ नई किताबें हमने अलग-अलग स्रोतों से जुटाई हैं। इन किताबों को अभी हमने दो स्तरों में बाँटा है। कक्षा 1 व 2 के



लिए ऐसी पुस्तकों का चयन किया गया जिनमें चित्र ज़्यादा और लिखावट कम व जो अपेक्षाकृत बड़े फोंट में हों, साथ ही चित्र ख़ूब रंग-बिरंगे हों, और ठीक इसी तरह कक्षा 3 से 5 के लिए चित्रों के साथ-साथ पर्याप्त लिखावट, बड़े फोंट और रंगीन चित्रों के साथ-साथ श्वेत-श्याम चित्र वाली किताबें भी रखी गईं।

पढ़ने-लिखने की प्रक्रियाओं में पुस्तकालय

पढ़ने का कोना : बच्चों के लिए पढ़ने का एक कोना होना बहुत ज़रूरी है। यह बच्चों में पढ़ने की आज़ादी और स्वामित्व की भावना पैदा करने के लिए कारगर होता है। एक पाठक बनने की प्रक्रिया में किताबों की उपलब्धता के साथ ही स्वतंत्रतापूर्वक पढ़ने का माहौल बनाना और पढ़े हुए पर संवाद के अवसर बनाना बेहद आवश्यक है।

हमारे स्कूल में प्रत्येक कक्षा में एक पढ़ने का कोना है। इसमें इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता है कि किताबें बच्चों की पहुँच में हों। किताबें डोरी में लटकी हैं व लोहे के डिस्प्ले बॉक्स में भी हैं जिसकी जाली से किताबें झाँकती रहती हैं। पुस्तक वितरण हेतु प्रत्येक कक्षा में दो बच्चों को ज़िम्मेदारी दी गई है। उनके पास लेखा-जोखा रखने के लिए रजिस्टर भी है जिसमें बच्चों के नाम, तिथि, हस्ताक्षर आदि होते हैं। बच्चे मध्यान्तर में भी किताबें ले सकते हैं। घर ले जाना हो तो छुट्टी के पश्चात नाम दर्ज कर ले जा सकते हैं।

आप कुछ बच्चों को सहज ही धीरे व कुछ तेज़ आवाज़ में कहानी, कविता पढ़ते और चित्रों पर बतियाते देख सकते हैं। इस स्वच्छन्द वातावरण से पाठ्यपुस्तकों में रुचि रखने वाले और रुचि न रखने वाले विद्यार्थी दोनों को ही फ़ायदा पहुँचा है। उनकी पढ़ने की गति बढ़ी है व कहानी, कविता का विश्लेषण भी वे अपने ढंग व स्तरानुरूप करने लगे हैं। अभिव्यक्ति का मौक़ा देने से उनका आत्मविश्वास बढ़ा है। वे खुलकर अपने विचार रख पाते हैं। हमारे



विद्यालय में हिन्दी व अँग्रेज़ी दोनों भाषाओं का बाल साहित्य मौजूद है। मैंने यह भी महसूस किया कि बाल साहित्य में वे ख़ूब रुचि लेते हैं और आपस में भी ढेर सारी बातें करते हैं व मुझे भी बताना चाहते हैं। हालाँकि पुस्तकों का रखरखाव और वितरण थोड़े समय व अतिरिक्त फ़ोकस की माँग करता है, पर आख़िर हम भी तो यही चाहते हैं कि बच्चों में पढ़ने, लिखने व समझने के कौशलों का विकास हो और पुस्तकालय इसमें शानदार अनुभव के रूप में मेरे समक्ष है। मैं आज यह कह सकता हूँ कि प्रारम्भिक कक्षाओं में पुस्तकालय व बाल साहित्य का प्रयोग बच्चे के भाषाई विकास में एक स्वत: अनुभूत प्रभावी उपकरण है।

पढ़ने की घण्टी : अभी पढ़ने की घण्टी कक्षा के अन्दर स्थापित पढ़ने के कोने में ही संचालित की जाती है। इसे अब आगे पुस्तकालय में अलग से प्रतिदिन संचालित करने के बारे में सोचा जा रहा है। बच्चों के उत्साह व कार्यशालाओं से बनी समझ से पढ़ने की घण्टी के नाम से सप्ताह में एक दिन शनिवार को एक घण्टा केवल बच्चों को पढ़ने के लिए दिया जा रहा है। इस दिन बच्चे अपनी रुचि से कहानियाँ, कविताएँ आदि पढ़ते हैं, और एक दूसरे से साझा करते हैं। किन्तु ऐसा नहीं है कि अन्य दिनों में ये पढ़ना साझा करना मना है या मौक़ा नहीं दिया जाता। परन्तु शनिवार के दिन ये पढ़ना संगठित रूप में पढ़ने की घण्टी के निमित्त होता है, जिसमें निम्न गतिविधियाँ संचालित होती हैं :

- **चित्रों पर बातचीत** : पढ़ने की शुरुआत बच्चों से किताबों में छपे चित्रों पर बातचीत से की जाती है। बच्चों के साथ किताबों के चित्र लेकर उनके सामने बैठना, शुरुआत में उनसे चित्रों पर सवाल-जवाब करना, जैसे– देखो तो इसमें क्या-क्या दिख रहा है, कौन-कौन होंगे ये, ये क्या-क्या कर रहे होंगे, आदि। शुरुआत में बच्चे उन चित्रों के बारे में उसी क्रम में बताते हैं जिस तरह से वे बने हैं, जैसे– एक चिड़िया है, एक लड़का है, एक पेड़ है... आदि। किन्तु उनसे यह पूछने पर कि ये भी बताओ वो क्या-क्या कर रहे हैं? तब बच्चे उन चित्रों को विस्तार देना शुरू करते हैं। इस प्रकार चित्र पठन की प्रक्रिया से बच्चे अब ख़ूब बातचीत कर रहे हैं। किताबों से उनका एक तरह का जुड़ाव बढ़ता हुआ दिख रहा है। चित्र पठन की गतिविधि में उन बच्चों पर ज़्यादा ध्यान दिया जाता है जो दूसरे बच्चों से कम बात कर रहे होते हैं।

- **समूह में पढ़ना** : समूह बनाकर बच्चों को पढ़ने का टास्क दिया जाता है जिसमें वे एक दूसरे की मदद करने के साथ-साथ आपस में समझ भी रहे होते हैं और सामूहिक तौर अपना टास्क भी पूरा करते हैं।

- **व्यक्तिगत पढ़ना** : एक दूसरे को पढ़ता-लिखता देखकर बच्चे स्वयं भी पढ़ने-लिखने को प्रोत्साहित हो रहे होते हैं, इस बात का ख़्याल रखते हुए उन्हें व्यक्तिगत पठन के मौक़े दिए जाते हैं।

- **चित्र बनाना** : जैसा कि बच्चों को चित्र बनाना बहुत पसन्द होता है तो उनकी इस रुचि को ध्यान में रखते हुए उन्हें अपने

पढ़े-लिखे पर चित्र बनाने को प्रेरित किया जाता है, जिसमें वे अपनी किताब की समझ को विविध चित्र-कहानी या कविता के रूप में पेश करते हैं।

- **कहानी-कविता लिखना :** बच्चे किताब से पढ़ी विषयवस्तु, जैसे– कहानी या कविता को अपनी समझ से लिखते हैं।

पढ़े-लिखे हुए को साझा करना : बच्चों के द्वारा पढ़ी गई कहानी व कविता या अन्य प्रकार की बातों को साझा करने के लिए प्रार्थना सभा का उपयोग किया जाता है। बच्चे अपनी पढ़ी गई बातों को प्रार्थना सभा में सभी के सामने रखते हैं। इसका असर ये देखने को मिला कि जो बच्चे पहले से उस कहानी को पढ़ या सुना चुके हैं वो बीच-बीच में बोलकर प्रस्तुत करने वाले साथी की मदद करते हैं। कभी-कभी यह भी देखने को मिला कि बच्चे ये भी कह देते हैं कि सर, इसने ग़लत बोला, यानी उसमें कुछ मिसिंग था। इस प्रकार बच्चे एक दूसरे से सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का हिस्सा बनते हैं। बच्चों को एक दूसरे से अपने लिए ली गई पुस्तक के चित्रों के बारे में एक दूसरे को बताने को भी कहा जाता है।

घर के लिए पुस्तकें : इसके अलावा छुट्टी के समय बच्चे किताबों को पढ़ने के लिए घर ले जाते हैं। जिसे चाहिए वो किताबों को अपने नाम पर रजिस्टर में दर्ज करवा लेता है, और दो या तीन दिन बाद उसे पढ़कर वापस कर देता है। इस पूरे लेनदेन के काम को बच्चे ही संचालित कर रहे हैं।

बच्चों के द्वारा नियमित उपयोग किए जाने के लिए पुस्तकालय हमेशा ही खुला रहता है, और इसका संचालन बच्चे ख़ुद ही करते हैं। इस प्रकार, जिस किसी बच्चे को किताब की ज़रूरत होती है वो किसी भी समय पुस्तकालय संचालित करने वाली टीम के पास जाकर किताबों को अलमारी या डोरी में टँगी किताबों में से निकाल कर ले जाता है। ऐसा कभी भी किया जा सकता है। बच्चे अब किताबों को ख़ुद ही निकालते और रखते हैं। इस सम्पूर्ण कार्य में सभी शिक्षक साथी सहयोग करते हैं।

बच्चों के साथ किताबों पर बातचीत के कुछ अनुभव

1. **आरुषि, कक्षा 2 :** आरुषि ने 'अप्पू और माना' की दोस्ती से सम्बन्धित कहानी पढ़ी और बताया कि उसे अप्पू हाथी और माना (लड़के) की दोस्ती अच्छी लगी। आरुषि ने कहा कि उसे जानवर बहुत पसन्द हैं व वह उनको प्यार करती है।
2. **कशिश, कक्षा 5** : कशिश ने 'मनमौजी कौआ' कहानी पढ़ी। इस कहानी के सम्बन्ध में उसने बताया कि एक मनमौजी कौआ होता है जो एक दिन राजा के सिंहासन पर जाकर बैठ जाता है। तब राजा उसे सज़ा के तौर पर दलदल में काँटों में फेंक देता है एवं और भी सज़ाएँ देता है पर कौआ हमेशा मुस्कुराता रहता है। कशिश को यह पसन्द आया कि कौआ डरा नहीं और उसने हर मुसीबत को हँसते-हँसते झेला और अन्त में मुक्त हुआ।
3. **नेहा, कक्षा 4 :** नेहा ने 'छोटा-सा मोटा-सा लोटा' पढ़ी। उसे लोटे पर कविता पसन्द आई।
4. **स्वर्णिका, कक्षा 5 :** स्वर्णिका इसी वर्ष लॉकडाउन में अँग्रेज़ी माध्यम के एक स्कूल से हमारे विद्यालय आई है। स्वर्णिका ने कई कहानियाँ पढ़ीं। उसमें से एक थी- 'My life — The tale of a butterfly'. उसने तितली के अण्डे देने से लेकर लार्वा, पंख निकलने व उड़ने तक का जीवनचक्र ख़ूब मज़े से सुनाया। उसने 'valveti' का अर्थ भी पूछा, जो मैंने बताया– वेलवेट जैसा मुलायम।
5. **अंशुमन, कक्षा 3 : अंशुमन ने 'एक आँख वाली चिड़िया'** कहानी पढ़ी। इस कहानी में अंशुमन ने बताया कि एक आँख वाली चिड़िया जाल में फँस जाती है। वह मदद के लिए पुकारती है पर कोई जानवर उसकी मदद नहीं करता। सब पास से गुज़र जाते हैं। ऐसे में पशु पालक (ग्वाले) उसकी मदद करते हैं। अंशुमन ने कहा कि हमें ज़रूरतमन्दों की मदद करनी चाहिए।

6. **ख़ुशी, कक्षा 4 :** ख़ुशी ने 'बर्फ़ीली बूँद' कहानी पढ़ी, जिसमें उसने बताया कि राजा की बेगम को चींटी काट लेती है। तब एक मंत्री जो मेहनती है, वह मामले की तह तक जाकर पता करता है कि वह चींटी कौन है। यहाँ अंशुमन को गहराई से हल निकालना पसन्द आया।

बच्चों पर प्रभाव

बच्चों तक किताबों की पहुँच बनाने व परिचित कराने का कार्य करते हुए मुझे उनमें कुछ बदलाव दिखे जो इस प्रकार हैं :

- **पढ़ने-लिखने की आदत का विकास :** किताबों तक पहुँच होने के कारण प्रत्येक बच्चा किताबें ले जाने लगा, इससे उनकी कविता, कहानियों की किताबों को पढ़ने की रुचि बढ़ने लगी। बच्चे कहानी के पात्रों पर चर्चा करते हैं, जैसे– कौन-सा पात्र बेहतर था और क्यों, कौन-सा ख़राब और क्यों, कहानी का दूसरा शीर्षक, अगर आप उस पात्र की जगह होते तो क्या करते, आदि। बच्चे काफ़ी देर तक कहानी पर चर्चा करना चाहते हैं। इस प्रक्रिया में वे बच्चे भी शामिल होते हैं जो कक्षा में कम बोलना पसन्द करते हैं। इस प्रकार आत्मविश्वास बढ़ाने में भी पुस्तकालय मददगार साबित हुआ और बच्चों में पढ़ने-लिखने की आदत विकसित हो पा रही है।
- **ज़िम्मेदारी निभाने की भावना विकसित हुई:** कुछ बच्चों को पुस्तकें बाँटने, लिखने और सँभालने की ज़िम्मेदारी मिलने से उनमें स्वानुशासन की भावना आई। अब वे किताबों का रखरखाव करना अपनी ज़िम्मेदारी समझते हैं।
- **शब्द भण्डार में वृद्धि :** उनके शब्द भण्डार में बढ़ोत्तरी हो रही है। वे नए शब्दों का अर्थ जानने के लिए अपने साथियों के अलावा शिक्षकों से पूछते हुए अर्थ ग्रहण करते हैं।
- **किताबों के प्रति स्वामित्व** : पुस्तकों को सँभालने का भाव आया है और अब वे पुस्तकों को सम्मान देने लगे हैं। पुस्तकों का फटना या ग़ायब होना लगभग बन्द हो गया है।
- **अभिभावकों से मदद :** घर ले जाने की स्वतंत्रता मिलने से उन्होंने माता-पिता के साथ पुस्तकों पर बातचीत की है व अपने मन की जिज्ञासाओं को शान्त किया है। माता-पिता को पालक-शिक्षक मीटिंग में बताया गया था कि बच्चों को पाठ्यपुस्तक के अलावा इन किताबों को अवश्य पढ़ने दें।
- **एक दूसरे से साझा करने की संस्कृति का विकास :** कहानी पर चर्चा करने से कहानी और अच्छे-से याद हो पाई। साथ ही अन्य साथियों से भूल सुधार के अवसर मिले हैं क्योंकि एक ही कहानी 4-5 छात्रों ने पढ़ी होती है। बच्चों की एक दूसरे को कहानी सुनाने की आदत बन पा रही है।
- **ख़ुद की कहानी-कविता :** कक्षा शिक्षण पाठ्यपुस्तक-केन्द्रित नहीं रह गया है, अब शिक्षण में अन्य किताबों का इस्तेमाल भी हो पा रहा है। ये बाल साहित्य बच्चों को पूरी दुनिया की सैर कराता है। यह उनमें स्वतंत्र चिन्तन, पढ़ने का आनन्द व स्वयं पढ़कर ज्ञान-निर्माण करने हेतु प्रेरित करता है। बच्चों ने ख़ुद के अनुभवों को कहानी-कविता के रूप में भी बुना है।
- **भय-मुक्त शिक्षा :** शिक्षा का अधिकार अधिनियम के क्लॉज़ 'लर्निंग विदाउट फियर' को बल प्रदान करता है।
- **देखे व सुने को लिखना** : बच्चे अपनी कॉपी में भी किसी देखी हुई घटना को अपने शब्दों में लिखने लगे हैं। शैक्षिक भ्रमण, गाँव की शादी, छुट्टियों में यात्रा का विवरण, आदि वे लिख लेते हैं।
- **व्याकरण की समझ :** संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रिया-विशेषण वाले शब्दों

को छाँटना या उनका वर्गीकरण करना जानने लगे हैं।

- **अन्य विषयों से जुड़ाव बढ़ता दिख रहा है :** हिन्दी भाषा में समझ बढ़ने से अन्य विषयों से भी जुड़ाव बढ़ा है, जैसे– 'लुकिंग अराउंड' में सामान्य ज्ञान, विज्ञान और देश-विदेश की जानकारी, आदि को समझने लगे हैं। विदेशों की भी कई कहानियाँ पुस्तकालय में मौजूद हैं, इनमें भी बच्चे रुचि लेने लगे हैं। *गणित के खेल, चकमक, आओ गणित को रोचक बनाएँ,* आदि पुस्तकों से गणित विषय में रुचि बढ़ी है।

बच्चों के पढ़े हुए पर बातचीत करने, सवाल के माध्यम से चर्चा को आगे बढ़ाने और पढ़े हुए के बारे में उनकी प्रतिक्रिया का स्वागत करने से बच्चे एक बार फिर उस पाठ सामग्री पर लौटकर चिन्तन करते हैं, उसकी बारीक़ परतों पर विचार करते हैं या सवालों के माध्यम से गहराई में जाकर सोचते हैं। इससे पढ़ने की गम्भीरता बनती है और पढ़े हुए पर व्यवस्थित रूप से अभिव्यक्ति कर पाने का कौशल विकसित होता है। इस तरह, शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों को पाने के प्रयास में पुस्तकालय एक बड़े संसाधन के रूप में हमारे पास मौजूद है।

सम्पूर्णानन्द जुयाल राजकीय आदर्श प्राथमिक विद्यालय, ल्वाली, विकासखण्ड पौड़ी, पट्टी गगवाड़स्यूं, ज़िला पौड़ी गढ़वाल में शिक्षक हैं। कोविड काल में उन्होंने पूरे साल घुमन्तु समुदाय के बच्चों के बीच पढ़ना-लिखना सिखाने का कार्य किया। नवोदय विद्यालय में प्रवेश दिलाने के लिए बच्चों की तैयारी में सहयोग करते हैं। उनकी पढ़ने, संगीत, लेखन और समाजसेवा में विशेष रुचि है।
सम्पर्क : snjuyal123@gmail.com

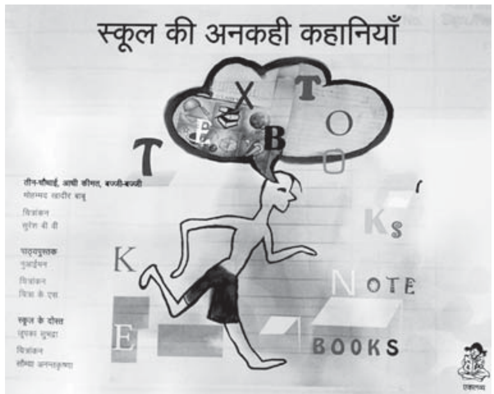
स्कूल की अनकही कहानियाँ अब अनकही नहीं

प्रभात

साहित्य यह मौक़े देता है कि हम अनकही बातों को कह और सुन पाएँ। कम कही और कम सुनी जानी वाली बातों को उनके पूरेपन में, पूरी जीवन्तता और विश्वास के साथ एक सहज विस्तार दे पाएँ। बाल साहित्य के प्रकाशन की दुनिया में पिछले दो दशकों से ये प्रयास तेज़ हुए हैं। इस आलेख में प्रभात ने एकलव्य प्रकाशन की 'डिफरेंट टेल्स' शृंखला के एक कहानी संकलन *स्कूल की अनकही कहानियाँ* और एक अन्य किताब *प्यारी मैडम* के बहाने इन अनकहे विषयों और जीवन चरित्रों का विश्लेषण किया है। सं.

स्कूल की अनकही कहानियाँ 'डिफरेंट टेल्स' शृंखला के तहत प्रकाशित हुई किताब है। ये 'टेल्स' किन मायनों में 'डिफरेंट' हैं, इस बारे में किताब के बैक कवर पर लिखा है– 'डिफरेंट टेल्स क्षेत्रीय भाषा की कहानियाँ ढूँढ़-ढूँढ़ कर निकालती है, ऐसी कहानियाँ जो ज़िन्दगी की बातें करती हैं। ऐसे समुदायों की कहानियाँ जिनके बारे में बच्चों की किताबों में बहुत कम पढ़ने को मिलता है।'... इस किताब की तीनों कहानियों को पढ़कर भी ये बात खरी उतरती है और इस शृंखला के तहत प्रकाशित होकर धूम मचा चुकी किताब *सिर का सालन* को पढ़ने के बाद तो कोई शक-सुबहा बचता ही नहीं है। *सिर का सालन* में खदीर बाबू ने जो भाषा रची है और ग़ुलाम मोहम्मद शेख के जिन अद्‌भुत और रहस्यमयी चित्रों से वो किताब सजी है, इस संयोजन ने किताब को अनुपम बना दिया है। पढ़कर लगता है कि यह वाक़ई एक डिफरेंट टेल है।

खदीर बाबू तेलुगु भाषा के प्रमुख लेखक हैं। उन्होंने तेलुगु में लोक साहित्य के संकलन, सम्पादन और पुनर्लेखन का काम भी किया है। *स्कूल की अनकही कहानियाँ* संकलन की तीन कहानियों में पहली कहानी खदीर बाबू की ही लिखी हुई है। कहानी का नाम है– 'तीन



चौथाई, आधी क़ीमत, बज्जी बज्जी'। यह एक सातवीं कक्षा पास कर आठवीं में आए बच्चे के आन्तरिक मन की मार्मिक और मस्त कहानी है। मार्मिक इसलिए कि वह बच्चा तीन चौथाई दाम की किताबों को आधी क़ीमत पर पाने के लिए कितना सोचता है, कितने तरह के गणित लगाता है और किस-किस तरह के अचूक प्रयास करता है, उस 'ग़रीबीली ग़रीबी' को खदीर बाबू ने रोमांचक ढंग से प्रस्तुत कर भारत के गाँवों और जन-सामान्य के बीच छिपे उस चरित्र को उद्‌घाटित कर दिया है जिसे आप सहज ही हर कहीं पा सकते हैं। परिस्थितियों ने एक बच्चे को कम उम्र में ही वयस्कों की तरह सोचने, समझने और बरताव करने वाला बना

दिया है। दूसरी ओर, यही कहानी मस्त इसलिए लगती है कि वह बच्चा उसकी जीवन स्थितियों में आई मुश्किलों पर न तो उदास होता है और न ही किसी तरह की छिछली भावुकता के लिए उसके मन में कोई जगह है। बल्कि वह विपरीत परिस्थिति का स्वागत करता है और उसका सामना करने के लिए ख़ुद को तैयार रखता है। वह कहता है– 'जिन माँ-बाप ने हमें जन्म दिया, उन्होंने छठवीं या सातवीं कक्षा में भी मुझे नई पाठ्यपुस्तकें दिलवाने की परवाह नहीं की। मैंने हमेशा पुरानी पुस्तकों से काम चलाया। अब वो लोग तो मुझे पाठ्यपुस्तकें दिलवाएँगे नहीं, तो मैंने सोचा, क्यों न किसी ऐसे लड़के से किताबें माँग ली जाएँ जो अब उसके काम नहीं आ रहीं।... इस कोशिश में मेरी मुलाक़ात एक सेट्टी लड़के से हुई जिसका नाम गाडेमसेट्टी रमेश था और जो मेरे घर के पास ही रहता था।' फिर वह पूरा क़िस्सा है कि कैसे उसने उसकी लगभग नई किताबों को आधे दामों पर लिया है। जब गाडेमसेट्टी किताबें देने से इंकार करते हुए कहता है 'सवाल ही नहीं उठता। कितने जतन से हमने अपनी किताबों को रखा है, आधी क़ीमत में नहीं।...' तब सातवीं पास बच्चे के दिमाग़ में जो चलता है उसे खदीर बाबू की भेद्य नज़र ने पकड़ लिया है। वह सोचता है, 'समझ में नहीं आया क्या जवाब दूँ। चुपचाप उसे देखता रहा और सिर खुजाता रहा।... देखने में वह दुबला-पतला और सींकिया लगता है मानो अभी हवा में घुल जाएगा, लेकिन एक किलो चने खा जाता है। उसकी जेब में चने भरे रहते हैं जिन्हें वह दिनभर चबाता रहता है।' यहाँ इस बच्चे के चरित्र की एक ऊँचाई समझ में आती है। उसे यह मलाल नहीं है कि उसके पास खाने को चने नहीं हैं। वह ज़िन्दगी के इस रंग को बिना किसी दयनीय भाव के देख रहा है और यह सोचते हुए अवलोकन का आनन्द भी लेता है कि 'जब वह हँसता है, चने के सफ़ेद-सफ़ेद टुकड़े उसके काले-काले मसूड़ों पर चिपके दिखाई देते हैं।' उसका यह सोचना कहीं-न-कहीं गाडेमसेट्टी के ज़रा बेशरमी से खाने को भी इंगित कर देता है।

जिस कुशलता से वह दो तिहाई क़ीमत की किताब आधी क़ीमत में ख़रीदता है, उसी विवेकपूर्ण कुशलता से उसे अपने लिए लेपाक्षी नोटबुक्स का भी इन्तज़ाम करना है, क्योंकि माता-पिता तो कुछ मदद करने वाले हैं नहीं। इसके लिए उसकी नज़र ठेकेदार के लड़के मलकोंडइया पर है। वह उसके पास जाता है और एक-से-एक तर्क पेश करने के बाद कहता है, 'मलकोंडइया! तुम्हें नोटबुकों की समस्या पता नहीं है।... तुम मुझे साथ ले चलना, मैं तुम्हें अच्छी वाली दिलवा दूँगा।'

मलकोंडइया तो जैसे उसके बुद्धिमत्तापूर्ण तर्कों में फँसने को तैयार ही बैठा था। कहता है, 'हाय!हाय! तुमने मुझे बचा लिया। ठीक है चलो।'

फिर वह मलकोंडइया को बढ़िया वाली नोटबुक दिलवाता है। यहाँ एक मर्मस्पर्शी बात लेखक के चरित्र ने कही है, 'नोटबुकों के मोटे पुट्ठे देखकर और काग़ज़ की ख़ुशबू को महसूस कर बड़ी ख़ुशी हो रही थी। लेकिन यह ख़ुशी मेरे लिए नहीं थी।'

यह राज्य सत्ता पर भी एक बेहतरीन व्यंग्य है कि वह राज्य के तमाम बच्चों के लिए समान रूप से समान तरह की नोटबुक तक मुहैया कराने को लेकर कितनी बेपरवाह है। बहरहाल, वह मलकोंडइया के लिए रद्दी हो चुकी पुरानी नोटबुकों के बचे हुए पन्नों से अपने लिए नोटबुक तैयार कर शिक्षा के रण में उतरने की सशक्त तैयारी करता है।

इस चरित्र की ख़ास बात यही है कि यह कभी कमज़ोर नहीं पड़ता है। रद्दी नोटबुकों से अपने लिए नोटबुक बनाने के बाद वह कहता है, 'सिलने के बाद उन्हें मैं अपनी नाक के नज़दीक लाया। उनमें पुराने काग़ज़ की मस्त ख़ुशबू आ रही थी। लेपाक्षी नोटबुक तालाब में जाकर डूब मरें, हमारी नोटबुक क्या उनसे कोई कम है!'

उसे मालूम है नवीं में भी उसे गाडेमसेट्टी की ही किताबें हासिल करनी हैं और उसे विश्वास है कि वह उन्हें हासिल करके रहेगा, इसमें यह विश्वास भी निहित है कि पढ़ाई की इन सीढ़ियों

को वह इसी हौसले से चढ़ते रहेगा। सो वह गाडेमसेट्टी की किताबों को देखकर कहता है, 'मुझे लगा ये मेरी ही बच्चियाँ हैं जो पराए घर रहने जा रही हैं, लेकिन सालभर बाद फिर मेरे घर आ जाएँगी। इसलिए मैं गाडेमसेट्टी रमेश के साथ उन्हें छोड़ने उसके घर तक गया।'

ऐसा दमदार जीवन्त चरित्र रचने के लिए खदीर बाबू को सलाम।

2

नुआईमन द्वारा लिखित 'पाठ्यपुस्तक' कहानी अधिकांश राज्यों की पाठ्यपुस्तकों की तरह ही एक बच्चे के स्कूली शिक्षा के सफ़र की दुखभरी कहानी है।

स्कूल के पहले दिन के लिए बच्चे के मन में तरोताज़ा उमंगों के जो रंग हैं, धीरे-धीरे उनपर एक अवसाद भरी धूल छाने लगती है। उमंग के रंग दबते चले जाते हैं।



चित्र : 'पाठ्यपुस्तक' कहानी से

लेखक ने साहिर के स्कूल जाने के पहले दिन का अनुपम चित्र खींचा है– 'वह चल नहीं रहा था, फुदक रहा था। वह ख़ुश था लेकिन जल्दी में भी था। बारिश आ गई तो? उसकी नई कमीज़ गन्दी हो गई तो? क्या अप्पा उसे रोज़ स्कूल छोड़ने आएँगे? न ही आएँ तो ठीक रहे। बड़े भैया-दीदी के साथ हँसते-खेलते हुए स्कूल आने में ज़्यादा मज़ा आएगा।'

जिस साहिर ने स्कूल के पहले दिन सोचा था कि 'अब वह बड़ा हो गया है।' वह नहीं जानता था कि उसके सपनों का स्कूल उसे नहीं मिल रहा है बल्कि एक ऐसी जगह उसे मिलने जा रही है जहाँ बमुश्किल ही वह अपने-आप को ख़ुश पाएगा।

नुआईमन लिखते हैं– 'साल-दर-साल अध्यापक उसकी स्लेट पर लिखे गए अबूझ शब्दों पर सही और ग़लत का निशान लगाते रहे और इसी तरह साहिर छठी कक्षा में पहुँच गया। कभी-कभार वह टीचर द्वारा पिटाई लगाने से दुखी भी हो जाता। स्कूल के सपने जो वह देखता था उसमें पिटाई की कोई जगह नहीं थी।' जिस देश में न नेता कहीं वक़्त पर पहुँचते हैं, न अफ़सर, न ही प्रायः शिक्षक, उस देश में किसी-किसी दिन दस मिनट की देरी हो जाने पर साहिर को 'अन्य अध्यापकों के सामने लताड़ा जाता'।

'स्कूल और मदरसे के अलावा एक और दुनिया थी, जिसे साहिर प्यार करता था। वह थी– दादी माँ की कहानी और क़िस्सों की दुनिया।' इन क़िस्से-कहानियों को सुन-सुन कर साहिर के विवेकी हो चुके ज़ेहन में एक दिन यह बात आती है– 'ये कहानियाँ और गीत हमारी पाठ्यपुस्तक में क्यों नहीं हैं?' साहिर की यह समझ पाठ्यपुस्तक की सीमाओं को रेखांकित करती है। एक किशोर बच्चे को भी आसानी से समझ में आ जाने वाली बात पाठ्यपुस्तकों तक को दलगत राजनीति से नहीं बख़्शने वाली सरकारों को समझ में नहीं आती है। पाठ्यपुस्तक के बीच छड़ी रखकर कक्षा में प्रवेश करने वाले शिक्षकों से उम्मीद ही क्या की जाए। यहाँ सवाल यह भी उठता है कि किसने बनाया हमारे शिक्षकों को ऐसा? क्यों उनके पढ़ाने के तौर-तरीक़ों से समझ-आधारित शिक्षण ग़ायब है? क्यों उनका ज़ोर परीक्षा-केन्द्रित शिक्षण पर रहता है? ऐसी कूढ़मगज शिक्षा व्यवस्था किस तरह के नागरिकों का निर्माण कर सकती है? तरह-तरह के भीतरी और बाहरी दुष्चक्रों में फँसी शिक्षा व्यवस्था से निकलने वाले देश का भविष्य क्या हो सकता है? ऐसे अनेक प्रश्न 'पाठ्यपुस्तक' कहानी को पढ़कर हमारे ज़ेहन में कौंधते हैं।

हालाँकि अपने अन्त की ओर बढ़ते-बढ़ते कहानी में थोड़ा सायासपन दिखाई देने लगता

है जहाँ साहिर यह प्रश्न उठाता है कि 'सर, पूरी पुस्तक में एक भी मुस्लिम नाम नहीं है।' सवाल वाज़िब है और ज़रूर पूछे जाने योग्य है लेकिन साहिर जैसे छोटे बच्चे के द्वारा पूछा जाना इस ज़बरदस्त विश्वसनीय चरित्र से कुछ अतिरिक्त माँग करने जैसा लगता है।

3

'स्कूल के दोस्त' जूपाका सुभद्रा लिखित एक शानदार कहानी है। यह सुवर्णा और श्रीलता नाम की दो लड़कियों की कहानी है जो अब माध्यमिक में पढ़ने के लिए अपने गाँव से पड़ोस के गाँव में जाती हैं। इस कहानी में कई बातें सांकेतिक हैं जो कहानी पढ़ते हुए पाठक को आसानी से समझ आ जाती हैं। आसानी से समझ में आना ही इन संकेतों की ख़ूबसूरती है। जैसे कि लेखिका चाहतीं तो इन दोस्तों को केवल दोस्त या गाँव की दोस्त भी कह सकती थीं लेकिन इन्हें स्कूल के दोस्त कहा। स्कूल यानी वह संवैधानिक जगह जहाँ सब समान हैं, जाति, धर्म, लिंगभेद जैसी बातों के लिए कोई जगह नहीं है। जबकि भारतीय ग्रामीण परिवेश में आज भी जातिगत ऊँच-नीच की जड़ें पूरी तरह उखड़ नहीं पाई हैं। धार्मिक भेदभाव को पनपाने में हमारे समय की धूर्त राजनीति कोई कोर कसर बाक़ी नहीं छोड़ रही है। यह विडम्बना ही है कि आज की राजनीतिक ताक़तें हमारे संवैधानिक मूल्यों की ही जड़ें काटने पर तुली हैं। ऐसे में 'स्कूल के दोस्त' जैसी कहानी की समसामयिकता और प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है।

कहानी एक सपने की तरह खुलती है जहाँ दो होनहार बालिकाएँ गाँव में प्राथमिक शिक्षा पूरी कर चुकी हैं और अब उन्हें माध्यमिक शिक्षा के लिए पड़ोस के गाँव जाना है। गाँव में लड़कियों की शिक्षा के प्रति सोच का आलम आज भी यह है कि 'किसी परिवार ने अपनी लड़कियों को पढ़ने के लिए बाहर नहीं भेजा था। गाँव के स्कूल में तो इसलिए भेज देते थे कि स्कूल जाने के साथ-साथ वे घर की देखभाल भी आसानी से कर सकती थीं।' श्रीलता और सुवर्णा दोनों के पिता पहली बार लड़कियों को पड़ोस के गाँव में पढ़ने भेजने का साहस दिखाते हैं। यह कम-से-कम उस छोटे-से गाँव में एक नन्हीं क्रान्ति से कम बात नहीं है। श्रीलता के पिता पोशालु जिन्हें गाँव में पोशन्ना कहकर पुकारा जाता है, और सुवर्णा के पिता सम्बन्ना के बीच की उधेड़बुन भी बड़ी रोचक है। सम्बन्ना एक बुनकर हैं और इतने सम्पन्न हैं कि उनकी पत्नी अपनी बेटी के लिए तीन-तीन स्कूल ड्रेस सिलवाकर रख सकती है। श्रीलता के पिता पोशन्ना आधा एकड़ सूखी ज़मीन के मालिक हैं और उन पति-पत्नी को घर चलाने के लिए दिहाड़ी मज़दूरी करनी पड़ती है। सम्बन्ना को अपनी बेटी को आगे पढ़ाने के लिए श्रीलता का साथ चाहिए सो वे पोशालु को समझाते हैं कि, 'पीढ़ी-दर-पीढ़ी क्या तुम काँदा कीचड़ में हाथ घुसेड़े रहोगे और जीने की ख़ातिर अपने बैलों को कोंचते रहोगे?' पोशालु को बात समझ में आ जाती है कि, 'बेटी, मेहनत मजूरी करके पीली पड़ जाए इससे तो अच्छा है कन्धे पर बस्ता टाँगे, हँसते-उछलते स्कूल जाए।'


चित्र : 'स्कूल के दोस्त' कहानी से

स्कूल एक संवैधानिक जगह है जहाँ भेद के लिए जगह नहीं है इसलिए गाँव में जात-पाँत, ऊँच-नीच के बावजूद, 'घर से लाया खाना वे मिल-बाँटकर खातीं। दोनों एक दूसरे को अपने मनके, चेन, चूड़ी और बिन्दी दे देतीं।' लेकिन ध्यान दें इस लेकिन पर कि 'गाँव लौटने पर दोनों लहसुन की कलियों की तरह चुपचाप अपने-अपने घर चली जातीं।' ये पंक्तियाँ बताती हैं कि वे समानता के सुख को किस तरह चुपचाप सहेज रही थीं। इस सुख पर पहाड़ टूटता है जब सुवर्णा झण्डा फहराए जाने के दिन अपनी तीन में से एक ड्रेस गाँव की आँख से छिपाकर अपनी दोस्त श्रीलता को दे देती है। और जब सुवर्णा की

माँ के सामने यह भेद खुल जाता है तो सुन्दर सपने से शुरू हुई कहानी एक दु:स्वप्न में बदल जाती है। सुवर्णा की माँ ने श्रीलता की पहनी हुई ड्रेस को घर से बाहर फेंक दिया। इतना ही नहीं, वह कहती है, 'दोस्ती स्कूल में होती है हमारे गाँव में नहीं। नई की नई ड्रेस बरबाद कर दी। अब जला दे उसे।... चुपचाप क्यों खड़ी है? डाल उसपर घासलेट और जला दे उसे।' कहानी में जहाँ और जिस जीवन्त तरह से यह दारुण प्रसंग आता है, लगता है जैसे समानता के अधिकार को जला दिए जाने की बात हो रही है।

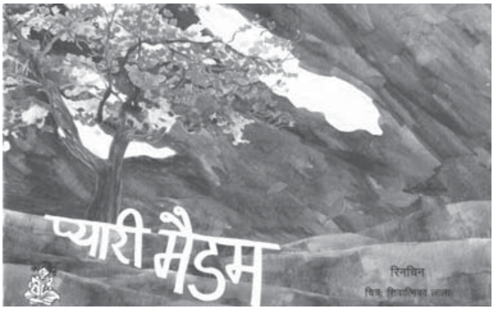
'सुवर्णा जो अब तक रो रही थी, फुर्ती से लपकी, ड्रेस का बण्डल उठाया और श्रीलता के घर की तरफ़ दौड़ गई।'

'सुवर्णा की माँ देखती रह गई। वह अपनी बेटी का पीछा नहीं कर सकती थी।' कहने की ज़रूरत नहीं कि साहित्य का यही तरीक़ा है, वह इसी तरह से मुक्ति की साँस देता है।

4

प्यारी मैडम किताब का ये नाम इतना सुन्दर है कि आपको उम्मीद से भर देता है। किताब पत्र शैली में लिखी गई है। पत्रों की डायरी के पन्नों पर प्रस्तुति भी किताब को आकर्षक बनाती है। किताब की लेखिका रिनचिन को मैं उनकी बेमिसाल किताब *मैं तो बिल्ली हूँ* से जानता हूँ। जो उन्होंने मूलतः अँग्रेज़ी में लिखी है और एकलव्य ने उसका हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित किया है। लेखिका के अलावा रिनचिन का एक और परिचय है कि वे एक्टिविस्ट हैं। इस नाते जल, जंगल, ज़मीन को लेकर उनकी पक्षधरता और सरोकार बहुत स्पष्ट हैं। वे हाशिए पर डाल दिए गए लोगों के अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं।

प्यारी मैडम किताब की बालिका अपनी प्यारी मैडम को वयस्क चिन्तन से भरे पत्र लिखती है। इस बालिका की माँ भी एक एक्टिविस्ट हैं जो गाँव-गाँव में मीटिंग और चक्काजाम में भागीदारी करती हैं। वह आदिवासियों की ज़मीनें छीनने पर तुली कम्पनियों के ख़िलाफ़ संघर्षरत हैं। जब हम पत्र-दर-पत्र इस किताब से गुज़रते हैं तो समझ में आता है कि लेखिका का अपना चिन्तन कहानी की बालिका में आरोपित हो गया है। इस वजह से कहानी में जो सायासपन और बनावटीपन आया उसके चलते किरदार की विश्वसनीयता खोती चली गई। इस किताब को पढ़ने वाला पाठक कहानी को पढ़ता तो है पर कहानी के आस्वाद से वंचित ही रहता है।



5

चारों ही कहानियों का चित्रांकन और प्रस्तुति नायाब हैं। इनके कलाकारों को सलाम। एकलव्य ने जब स्कूल की अनकही कहानियों को प्रकाशित कर ही दिया है तो ज़ाहिर है अब ये अनकही नहीं रह गई हैं। ये ज़्यादा-से-ज़्यादा शिक्षकों और अभिभावकों तक पहुँचें और उनमें अपने बच्चों के अन्दरूनी विवेकी, कोमल और सुन्दर संसार को समझने की ललक जगे, यही कामना है। अनकही कहानियों की इस नायाब श्रृंखला का प्रकाशन एकलव्य ने किया है और इस दुर्लभ कहानी श्रृंखला का कुशल सम्पादन सुशील शुक्ल ने किया है। प्रिय लेखक स्वयंप्रकाशजी जो अब हमारी यादों ही में रह गए, कहने की ज़रूरत नहीं कि उन्होंने अनकही कहानियों के अनुवाद का अनुपम गद्य गोदा है।

प्रभात शिक्षा के क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से कार्य कर रहे हैं। दो कविता संग्रह *अपनों में नहीं रह पाने का गीत* साहित्य अकादमी से व *जीवन के दिन* राजकमल से प्रकाशित। बच्चों के लिए कविता, कहानियों की कई किताबें प्रकाशित। विभिन्न लोक भाषाओं में बच्चों के लिए ढेर सारी किताबों का पुनर्लेखन-सम्पादन। 'युवा कविता समय सम्मान', 2012, सृजनात्मक साहित्य पुरस्कार, 2010, बिग लिटिल बुक अवॉर्ड- 2019।

सम्पर्क : prabhaaat@gmail.com

"उस दिन से आज तक रुकी नहीं हूँ"

शिक्षिका रीता मंडल से पुरुषोत्तम ठाकुर की बातचीत



कोरोना काल के संकट के समय कई ज़िम्मेदार लोग सिर्फ़ अपने और परिवार के बारे में सोचकर घर के अन्दर दुबके हुए थे। दूसरी ओर कई लोग अपनी परवाह किए बिना समाज की ज़रूरत को महसूस कर सामने आए, सहायता का हाथ बढ़ाया और अपनी ज़िम्मेदारी निभाई, इनमें हमारे शासकीय स्कूलों के शिक्षक प्रमुख हैं। ऐसी ही एक शिक्षिका हैं, श्रीमती रीता मंडल।

रीता मंडल ने बच्चों के प्रति ज़िम्मेदारी निभाते हुए कोरोना काल में भी अपना काम निरन्तर जारी रखा हुआ है। हमने उनसे उनकी जीवन यात्रा, शिक्षा और शिक्षक बनने के सफ़र से लेकर उनके द्वारा किए जा रहे नवाचार और कोरोना काल में एक शिक्षक के अनुभव, ऑनलाइन कक्षा से लेकर मोहल्ला कक्षा के अनुभव के बारे में लम्बी बातचीत की है।

पुरुषोत्तम : नमस्कार, अपने बारे में बताएँ।

रीता : नमस्कार, वर्तमान में, मैं पीजी उमाठे पूर्व माध्यमिक कन्या शाला, शांति नगर, विकासखण्ड धरसीवां, रायपुर में शिक्षिका हूँ। मेरा जन्म स्थान बालको है, जो कोरबा ज़िले में आता है। छत्तीसगढ़ का यह ज़िला विद्युत कम्पनी, बालको संयंत्र और नेशनल थर्मल पावर कॉरपोरेशन (एनटीपीसी) के लिए भी जाना जाता है।

मेरे पापा बालको एल्युमीनियम कम्पनी में नौकरी करते थे। हम तीन भाई-बहिन हैं और हमने एमजीएम स्कूल बालको से पढ़ाई



की है। पढ़ाई के दौरान मैंने कोई ट्यूशन या कोचिंग क्लासेस नहीं लीं, सब स्वयं ही किया। और मेरा मानना है कि जब बच्चे ख़ुद पढ़ते हैं तो अवधारणाएँ ज़्यादा स्पष्ट होती हैं। बारहवीं के बाद मैंने कोरबा महाविद्यालय से गणित में स्नातक एवं स्नातकोत्तर किया और फिर बिलासपुर से बीएड। संगीत और नृत्य में भी मेरी रुचि है। मैं बंगाली परिवार से हूँ। घर में बंगाली और हिन्दी का ही ज़्यादा उपयोग होता था। अँग्रेज़ी माध्यम के स्कूल में पढ़ने से अँग्रेज़ी भाषा सीखी।

पुरुषोत्तम : बालको में जहाँ आपका बचपन गुज़रा वहाँ का परिवेश कैसा था?

रीता : बालको का माहौल बहुत अच्छा था पर प्रतियोगिता की भावना वहाँ काफ़ी थी। जैसे, पापा के दोस्त के बच्चे और हम एक ही कक्षा में हैं और उनका बेटा अच्छे नम्बर लाया है, तो पापा हमको उसका उदाहरण देते थे।

इससे मैं दबाव महसूस करती थी। मुझे इस बात के लिए टेंशन नहीं होता था कि मैं कितने नम्बर लाई, बल्कि यह टेंशन रहता कि पापा के दोस्त के बच्चे कितने नम्बर लाए। मैं अब अपने स्कूल के बच्चों के अंकों की तुलना नहीं करती, क्योंकि हर बच्चे का पढ़ने का अपना एक तरीक़ा होता है, उसकी समझ व रुचि भी अलग होती है। मैंने अपने बचपन में यह सीख ली है। उस समय तो नहीं कह पाई कि पापा आप ग़लत सोचते हैं, अब मैं अपने बच्चों के बीच ये चीज़ नहीं लाती।

पुरुषोत्तम : आपने शिक्षिका बनना क्यों चुना?

रीता : मैंने घर में मदद देने के लिए छोटी कक्षाओं के बच्चों को पढ़ाना काफ़ी पहले शुरू कर दिया था। बच्चे हमेशा बोलते थे कि मेम, आपके समझाने का तरीक़ा बहुत अच्छा है। मेरे समझाने का तरीक़ा अच्छा है और बच्चे इसे समझ पाते हैं तो मुझे शिक्षक ही बनना चाहिए, यह मैंने ठान लिया। फिर मेरे सभी शिक्षक भी मुझे प्रोत्साहित करते थे, कि आपके अन्दर शिक्षक के सारे गुण हैं, यदि आप शिक्षक बनती हैं तो स्कूल के बच्चे इसका लाभ ज़रूर उठा सकेंगे।

मैं पहली बार बीएड के लिए बालको से बाहर निकली। इतने साल हम माता-पिता के साथ ही थे और अब बिलासपुर में एक हॉस्टल की लाइफ़ गुज़ारनी थी।

पुरुषोत्तम : अपने बीएड के अनुभव के बारे में बताएँ।

रीता : बिलासपुर से बीएड की पढ़ाई करना मेरे जीवन का एक अलग ही पड़ाव था। सुबह 5 बजे कॉलेज के मैदान में पहुँच जाना होता था। 10 मिनट लेट होने पर पूरे मैदान के 10 चक्कर लगाने होते थे। पर मैंने बीएड के उस एक साल में बहुत कुछ सीखा– बच्चों को, उनके मनोविज्ञान को जानना, आदि। इंटर्नशिप के दौरान पहली बार सरकारी स्कूलों में गई, यह बहुत ही अलग अनुभव था। मैं एक प्राइवेट स्कूल से पढ़ी हूँ, वहाँ का परिवेश, चारदीवारी, भवन, पानी की व्यवस्था सबकुछ बहुत अलग था। जब सरकारी स्कूल में पढ़ाने के लिए गई तो स्कूलों की बहुत ही विपरीत छवि देखी। पर चूँकि मुझे पता था कि यहाँ मुझे दो-तीन महीने के लिए ही आना है, अतः मैंने ज़्यादा नहीं सोचा।

बीएड के बाद कोरबा की पूर्व माध्यमिक शाला, लालघाट में मेरी पोस्टिंग हुई। वह उन्नत शाला थी, कक्षा छठवीं अभी खुली ही थी और इसमें कुल 35 बच्चे थे। मेरा नज़रिया और अनुभव अँग्रेज़ी स्कूल का था, जबकि यहाँ हिन्दी माध्यम के शासकीय स्कूल थे। यहाँ मध्याह्न भोजन पकता है, बच्चे अपनी-अपनी थाली लाते हैं, और खाते हैं। मैंने देखा कि वे दिनभर एक ही ड्रेस पहने रहते हैं। बच्चे जिस तरीक़े से स्कूल आते, उसे देखकर मैं बहुत ही परेशान थी कि मैं कैसे कर पाऊँगी, क्योंकि बच्चों को पढ़ाना है तो उनके साथ घुलना-मिलना भी पड़ेगा और ये मैं कैसे करूँगी? धीरे-धीरे मैंने उनका परिवेश जाना, उनके माता-पिता की समस्याएँ जानीं, उनका पूरा जीवन देखा, और कई बार उनकी बस्तियों में गई। मैंने देखा कि ये कैसे घरों में रहते हैं, कैसे गुज़र-बसर करते हैं, क्यों ऐसे हैं, नहाते क्यों नहीं, रोज़ कपड़े क्यों नहीं बदलते? मैंने पाया कि उनकी आर्थिक स्थिति बहुत ही ख़राब थी। उस दिन मैंने ठाना कि मुझे इन बच्चों के साथ काम करना है।

पुरुषोत्तम : आपने स्कूल को कैसे समझा? इन बच्चों के साथ, उनके माता-पिता के साथ और स्कूल में अपने सहयोगियों के साथ काम को आगे कैसे ले गईं?

रीता : इस शाला में हम तीन शिक्षकों की नियुक्ति हुई थी। तीनों शिक्षक ग़ैर-सरकारी स्कूलों से पढ़कर आए थे। यह स्कूल और इसका परिवेश बहुत अलग था। पर हम तीनों ही युवा थे। हमारे अन्दर एक ज़ज़्बा था कि कुछ बेहतर करेंगे। जैसा कि मैंने कहा, माध्यमिक स्तर पर कक्षा छठवीं ही थी और हम तीन थे। तय किया कि एक शिक्षक छठवीं कक्षा में जाएगा बाक़ी दो शिक्षक प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों के साथ मिलकर काम करेंगे। मैंने गणित और अँग्रेज़ी का ज़िम्मा लिया, दूसरी शिक्षिका ने हिन्दी का और एक अन्य शिक्षिका ने पर्यावरण पर काम किया।

पुरुषोत्तम : आपने कैसे पढ़ाया?

रीता : मैं सभी अल्फ़ाबेट (वर्णमाला) एक ही दिन में पढ़ाने का नहीं सोचती थी। एक-एक अल्फ़ाबेट पर हम हफ़्तेभर काम करते ताकि उस अल्फ़ाबेट से सम्बन्धित जो भी समझ है वो बच्चों में बने। ऐसा नहीं कि वो सिर्फ़ 'ए फॉर एप्पल' पर ही रुक जाएँ, बल्कि 'ए फॉर एरोप्लेन' भी होता है, यह भी जानें। इसके लिए मैं बहुत-से चित्र भी उनके साथ साझा करती, उनपर बात करती। मैंने पास के आँगनवाड़ी केन्द्र की दीदी से बात कर वहाँ भी काम किया। तीन साल तक कोरबा में काम करने के बाद मेरी पोस्टिंग पीजी उमाठे गर्ल्स स्कूल, रायपुर में हो गई। यहाँ आकर मुझे ऐसा लगा कि जैसा मैं चाहती थी वैसा कुछ मैं कर पाई। मैं चाहती थी कि लड़कियाँ कराटे सीखें, पॉक्सो बॉक्स हमारे स्कूल में लगाया। बच्चियों को गुड टच और बेड टच से सम्बन्धित कई सारी चीज़ें बताईं। 2010 में बच्चों के लिए एक्स्ट्रा एक्टिविटी, टीएलएम और अन्य प्रोजेक्टों पर काम करना शुरू किया। दूसरे संकुल के स्कूलों में भी अपना टीएलएम लेकर जाती थी। वहाँ बच्चों के साथ-साथ कुछ शिक्षकों ने भी टीएलएम बनाना शुरू कर दिया, तो इस प्रकार से सीखने-सिखाने का सिलसिला जो 2010 से शुरू हुआ वो आगे बढ़ता गया है। रात में दो बजे तक अपने टीएलएम बनाती रहती हूँ तो घर में कई बार हमारी लड़ाई भी होती है।

पुरुषोत्तम : अभी कोरोना काल में आपका अनुभव कैसा रहा?

रीता : मार्च 23, 2020 से ये कोविड का दौर शुरू हुआ। स्कूल भी अचानक बन्द हो गए, उस समय कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें? कुछ दिन तो हम ख़ुद भी घर में ही थे। एक डर था मन में, और पढ़ाई के बारे में कोई सोच भी नहीं रहा था। उस समय ऐसा था कि कोरोना से बचो और अपनी जान बचाओ। अप्रैल-मई-जून, ये तीन महीने गर्मी की छुट्टियों जैसे थे। सब घर में थे और बच्चों को भी जनरल प्रमोशन दे दिए गए। सोचा था जुलाई में स्कूल खुल जाएँगे, पर ऐसा नहीं हुआ। हमारे बच्चों का वॉट्सएप

ग्रुप बना ही हुआ था और बच्चे जनरल प्रमोशन पा चुके थे। मैं नए कोर्स से सम्बन्धित यानी नई कक्षा से सम्बन्धित कुछ-कुछ वीडियो ग्रुप में डाल देती थी। वॉट्सएप ग्रुप बनाने की योजना तो बाद में आई, हमने पहले से ही ग्रुप बनाए हुए थे। इनमें हम अपनी अध्ययन सामग्री के वीडियो, एवं ख़ुद के बनाए वीडियो डाल देते थे और फिर एक हफ़्ता उसपर ही चर्चा चलती थी। बच्चे उसपर होमवर्क करके भेज देते थे।

पुरुषोत्तम : मतलब ऑनलाइन कक्षाएँ शुरू होने से पहले ही आपने पहल कर दी थी?



रीता : हाँ, हम उससे पहले से ही वॉट्सएप पर सामग्री डाल रहे हैं। कुछ बच्चों के यहाँ एंड्राइड फ़ोन था तो हमने उपयोग करना शुरू कर दिया था। कुछ अन्य शिक्षक भी अपने सामग्री डालने लगे थे और साथ ही यू-ट्यूब का लिंक भी डाल देते थे। उसके बाद 'पढ़ई तुंहर द्वार' योजना आई, www.cgschool.in वाला पोर्टल है, और उस समय भी हर शिक्षक वेबेक्स से कक्षाएँ लेते थे। एससीईआरटी से जो कक्षाएँ संचालित होती थीं वो कम ही थीं। उसके बाद एससीईआरटी से सूचना आई कि यदि किसी को गणित या कोई और ऑनलाइन कक्षा लेनी है तो उसकी मदद की जाएगी। मैंने लगन से सीखा। उस समय कोई बाध्यता नहीं थी कि आपको ऑनलाइन कक्षाएँ लेनी ही हैं, जो लेना चाहे वो ले सकता है। पर मैंने सोचा कि अगर ऐसा कोई माध्यम है, जिससे हम बच्चों को ऑनलाइन पढ़ा सकते हैं, तो मैं ज़रूर उसको सीखूँगी। हमारे ज़िले में तब ऑनलाइन कक्षाएँ शुरू नहीं हुई थीं, पर मैंने अपनी कक्षाएँ लेना शुरू कर दिया। हम वॉट्सएप पर बच्चों को कुछ चीज़ें तो भेज पाते थे पर लाइव वीडियो नहीं हो पाता था, और वेबेक्स के माध्यम से ये सम्भव था, बच्चे दिलचस्पी लेने लगे। मैंने बहुत सारे समूहों में अपने लिंक डालने शुरू किए और लगभग 110-120 बच्चे मेरी कक्षाओं में जुड़ते थे। चिन्ता यह थी कि मेरे स्कूल के बच्चे ज़्यादा नहीं जुड़ पा रहे थे। वेबेक्स क्या है, उनको समझ नहीं आ रहा था और उस समय हम बच्चों के सीधे सम्पर्क में नहीं थे। मैं अपने फ़ोन में गणित करती थी उनसे कहती कि आप अपने प्ले स्टोर से वेबेक्स को डाउनलोड करिए और अपना ईमेल आदि डालिए, पर बहुत-से बच्चे नहीं कर पा रहे थे। फिर मैंने सोचा कि जो बच्चियाँ कर लेती हैं, उनकी मदद ली जाए। मैंने उन बच्चियों को वार्ड लीडर बनाया। लीडर को बोला कि वो बच्चों से सम्पर्क करे और उनके फ़ोन में ख़ुद वेबेक्स डाउनलोड करे। वार्ड लीडर वाली प्रक्रिया का बहुत अच्छा रिजल्ट मिला और मेरे यहाँ के 60-65 प्रतिशत बच्चे जुड़ने लगे। ऑनलाइन कक्षा अच्छी चलने लगी। फिर मैंने पीपीटी बनाना भी सीखा। एक और मुख्य दिक़्क़त यह थी कि कई बच्चों के पास स्मार्टफ़ोन नहीं थे। अगर थे भी तो तीन-चार भाई-बहिन होने से उन्हें नहीं मिलता, फिर कई बच्चों के पास स्मार्टफ़ोन है, इंटरनेट है, पर रिचार्ज नहीं करा पाते। कई के फ़ोन माता-पिता साथ ले जाते हैं, और इन वजहों से बच्चे कक्षा में जुड़ना चाहते हुए भी जुड़ नहीं पाते। तब मैंने मोहल्ला कक्षा के बारे में सोचा। मेरा अपना स्कूल शांति नगर से बहुत दूर था तो मैंने

अपने घर के पास कबीर नगर बस्ती में अटल आवास, और वाल्मीकि नगर में मोहल्ला कक्षा का काम शुरू किया।

पुरुषोत्तम : ये मोहल्ला कक्षा शुरू हो गई थी जब सरकार ने इसे शुरू किया था?

रीता : जी। लाउडस्पीकर कक्षाएँ अधिकतर गाँवों में ही संचालित थीं, क्योंकि शहर में बिना अनुमति के नहीं बजा सकते थे। अतः सोचा कि मैं ख़ुद बच्चों को इकट्ठा कर उस मोहल्ले में जाकर पढ़ा सकूँ। कबीर मोहल्ले में, वाल्मीकि नगर और अटल आवास दो जगह मुझे ऐसी लगीं और मैंने सोचा उनके साथ काम करूँ। वहाँ एक मितानिन दीदी, आँगनवाड़ी सहायिका से मेरा परिचय था, उन्होंने मेरी मदद की। बच्चों को लाना शुरू किया और वहीं पर हमने दरी बिछाकर बच्चों के साथ काम करना शुरू किया। मैं कविता एक्शन करके पढ़ाती तो बच्चों को ख़ूब मज़ा आने लगा और काफ़ी छोटे बच्चे जिन्होंने अभी स्कूल जाना भी शुरू नहीं किया था, वो भी आने लगे। प्राइवेट स्कूलों के बच्चे भी आने लगे। ऐसे में कुछ परेशानी भी हुई क्योंकि अलग-अलग स्कूल और कक्षाओं के बच्चे एक साथ आने लगे थे।

मैंने सोचा ऐसी कुछ चीज़ें की जाएँ जो हर कक्षा के लिए लाभदायक हों और किसी-न-किसी अवधारणा से जाकर जुड़ जाती हों। मैंने आकार, सन्धि, उपसर्ग, प्रत्यय आदि से सम्बन्धित कुछ गतिविधियाँ सोचीं। जब बच्चे बढ़ गए और उनके अभिभावक भी आने लगे तो जगह कम पड़ने लगी। वहाँ के पार्षद से बात की और उन्होंने कबीर नगर का सामुदायिक भवन मुझे दिलाया। तब अटल आवास के साथ-साथ मैंने वाल्मीकि नगर के कबीर नगर स्कूल के प्रधान पाठक अजय शर्मा को फ़ोन किया कि यहाँ अब मेरे पास पर्याप्त जगह है और आप अपने स्कूल के बच्चों को यहाँ भेज सकते हैं। उन्होंने सब बच्चों के समूह में मोहल्ला कक्षा के बारे में मैसेज डाला और फिर वो बच्चे भी मेरे पास आने लगे। इस प्रकार मोहल्ला कक्षा संचालित हुई, और सामग्री देने का जो सिलसिला शुरू हुआ उससे



मुझे एक बहुत अच्छा नाम भी मिला— 'पेटी वाली दीदी'। बच्चे और उनके अभिभावक मुझे प्यार से उस नाम से बुलाने लगे।

मैंने ख़ुद भी सीखा और बच्चों के साथ जुड़ाव इतने वर्षों में पहले कभी नहीं हुआ क्योंकि मैंने इस बार अलग-अलग स्कूलों और विभिन्न परिवेश से आने वाले बच्चों के साथ काम किया।

पुरुषोत्तम : जिन स्कूलों के बच्चे आ रहे थे उनके और आपके सहयोगी शिक्षक भी आपके साथ जुड़े या नहीं?

रीता : मैंने किसी को फ़ोर्स नहीं किया। मैंने कबीर नगर के स्कूल में ज़रूर कहा था कि आप भी आइए और मेरी मदद करिए, क्योंकि बच्चे बढ़ते जा रहे थे और 60-70 बच्चों को अकेले सँभालना मुश्किल था पर कोविड के चलते कोई तैयार नहीं हुआ। कई शिक्षकों की ड्यूटी भी कोविड में लगी हुई थी, आँगनवाड़ी की सहायिका मितानिन दीदी ने मेरा सपोर्ट किया। उनको भी काम पर जाना पड़ता था, तो उनकी बेटी ने मेरा सहयोग किया। शिक्षा मित्र ने भी मुझे सहयोग किया। मैं 1000 रुपए मासिक उनके खाते में डालती थी और वो मुझे दो-ढाई घण्टे का समय देते थे।

मेरी कक्षा पहले कबीर नगर में ही शुरू हुई थी। मुझे ख़राब लगता था कि मैं जिस स्कूल में हूँ वहाँ के बच्चे मोहल्ला कक्षा से लाभान्वित नहीं हो रहे हैं। मैंने बीएड करने वाली कुछ बच्चियों, जो शांति नगर के आसपास रहती थीं, से बात की। इस तरह कुल चार शिक्षा मित्र मेरे साथ थे जो कक्षाएँ चला रहे थे।

पुरुषोत्तम : आपको या आपके परिवार को डर नहीं लगता था?

रीता : मुझे नहीं लगता था, मैं पूरी एहतियात रखती थी। वापस आकर नहाना, कपड़े धोना, चार महीने तक बहुत किया। उसके बाद यह कुछ कम हुआ, क्योंकि कई बार जब बच्चे आना बन्द कर देते थे तो मुझे मोहल्ले में जाना पड़ता था। वहाँ औरतें बाहर बैठी रहती थीं, मैं उनसे पूछती कि यहाँ कोई केस तो नहीं है! वो बोलतीं, "एती कोरोना नइं आए, कोरोना आएबर डरथे, हम ठंडा फ्रिज के खाना नइं खाथोन, हम तो ताजा हवा, ताजा खाना खाथोंन।" उनकी बात सुनकर मुझे ख़ुद लगता था कि इनका आत्मविश्वास इतना मज़बूत है! अच्छा भी लगता था कि वो लोग डरते नहीं हैं। वो अपने बच्चों को भेजने में ज़रा भी नहीं हिचकिचाए, बस ये ही कि वो केयरलेस रहते थे। शुरू-शुरू में मास्क नहीं लगाते थे, मैंने उनको मास्क वितरित किए। मोहल्ला कक्षा का सफ़र शुरू किया था कबीर नगर से, विगत पाँच महीनों से चला रही थी, अब ये बताते हुए ख़ुशी हो रही है कि उन पूरी कक्षाओं को वहाँ के शिक्षकों ने शाला के प्रांगण में ही चलाना शुरू कर दिया है। सुबह 8-9 प्राइमरी और 9-10 मिडिल के, कुल 130 बच्चे वहाँ आने लगे हैं। मुझे बहुत ही ख़ुशी है कि जिस सफ़र को शुरू किया, वहाँ के शिक्षक भी अब उसे मान्यता दे रहे हैं। ये बच्चे पढ़ाई से जुड़े हुए थे और अब इनको निरन्तर जोड़कर रखना है। मेरा आगे भी यही सपना है कि शांति नगर के आसपास मैं इस तर्ज पर इतनी ही अच्छी एक मोहल्ला कक्षा चला सकूँ। अभी भी नूरानी चौक और तेलीबाँधा में कक्षाएँ चल रही हैं पर उसमें बच्चे कम हैं। मैं चाहती हूँ कि जिस तरह कबीर नगर के सामुदायिक भवन में 70-80 बच्चे पढ़ते थे, वैसे ही यहाँ भी ज़्यादा बच्चे आएँ और इन प्रयासों का लाभ उठाएँ। कोशिशें जारी हैं।

शंकर नगर में सेक्टर 2 में दुर्गा मैदान है, वहाँ भी जगह देखकर आई हूँ। अभी उसकी साफ़-सफ़ाई हो रही है और सबका साथ रहा तो वहाँ भी मोहल्ला कक्षाएँ जल्दी शुरू हो जाएँगी।

मेरा सपना है कि अपनी शाला में एक गणित लैब बना सकूँ। अभी लॉकडाउन में मैंने बच्चों के लिए टीएलएम बनाए हैं। मुझे अपनी शाला में गणित प्रयोगशाला के लिए कमरा मिले इसके लिए मैंने प्राचार्य महोदया से बात भी की है। स्कूल में एक ऐसी गणित लैब बने जिसमें हर अवधारणा से सम्बन्धित टीएलएम, एक्टिविटी, खेल हो और उस लैब में दूसरे स्कूलों के शिक्षक भी आएँ, देखें, और उसे बनाने के लिए प्रेरित हों। यदि कोई शिक्षक यहाँ से टीएलएम ले जाना चाहे तो लाइब्रेरी की किताबों की तरह ही हमें उसे देने में भी ख़ुशी होगी।

पुरुषोत्तम : आपके कक्षा-कक्ष कैसे हैं?

रीता : कक्षा में बच्चों को गणित थोड़ा कठिन लगता है, क्योंकि जो बच्चे मुझे कक्षा 6 में मिलते हैं, कई बार उनकी प्राथमिक कक्षा की अवधारणा भी स्पष्ट नहीं होती है। मेरी कोशिश रहती है कि हमेशा इस वर्ष के ज्ञान को पूर्व वर्ष के ज्ञान से जोड़ते हुए पढ़ाऊँ।

यदि मुझे बच्चे को लघुत्तम समापवर्त्य पढ़ाना है तो मैं बच्चों को भाग करना और पहाड़े सिखा पाऊँ। मेरी कोशिश रहती है कि हर पाठ को सभी बच्चे अच्छे-से समझें क्योंकि कोर्स को जल्दी से आगे बढ़ाने के लिए पढ़ाने पर बच्चे की अवधारणा की समझ कहीं-न-कहीं छूटी रह जाती है और हमें आगे की बातों को पढ़ाने में तकलीफ़ होती है। कई बार अन्तिम समय में अतिरिक्त कक्षाएँ लेनी पड़ती हैं। कई विषयों का कोर्स जल्दी ख़त्म हो जाता है तो उन विषयों के शिक्षक गणित के लिए अपनी कक्षा दे देते हैं।

मेरा मानना है कि जब ये बच्चे कक्षा 9 में जाएँ तो वहाँ के शिक्षक बोलें कि हाँ, ये बच्चे सीखकर आए हैं।



एक बार मेरे स्कूल में रोटरी क्लब के कुछ लोग आए थे, उन्होंने कक्षा 6, 7 और 8 के बच्चों के साथ सर्वे किया कि आपका सबसे प्रिय विषय कौन-सा है? सबसे ज़्यादा बच्चों ने कहा, हमें गणित पसन्द है! मेरे लिए सबसे ख़ुशी की बात है कि गणित जैसे विषय को बच्चे अपना सबसे पसन्दीदा विषय बता रहे हैं, यानी उन्हें कहीं-न-कहीं रोचकता महसूस हुई होगी! मैं अपनी कक्षा का वातावरण हल्का और ख़ुशनुमा रखती हूँ ताकि बच्चे मेरे साथ हमेशा सहजता से रहें।

पुरुषोत्तम : और अँग्रेज़ी के बारे में?

रीता : अँग्रेज़ी में भी नवाचार की कई कोशिशें की हैं। सबसे ज़्यादा दिक़्क़त आती है बच्चे के घर के माहौल में अँग्रेज़ी नहीं होने की। उनके लिए कक्षा 6, 7 और 8 की अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तकें ही अँग्रेज़ी का पूरा संसार हैं। और उन्हें उस संसार से परिचित कराना बहुत ही चैलेंजिंग है। मैंने मेरी कक्षा में जितनी भी चीज़ें, जैसे– टेबल, कुर्सी, डस्टर, चाक, बोर्ड, डेस्क, पेन, पेंसिल और क्लास के बाहर पेड़, स्टेज आदि, दिखती हैं, सब पर नाम लिख दिए ताकि, जब कोई कुछ पूछे तो बच्चे रिएक्ट तो करें। मेरा पहला उद्देश्य था कि बच्चे अँग्रेज़ी के प्रति कम्फर्टेबल हों। जैसे, पेड़ पर 'Tree' लिखा तो बच्चे जब खेलते, घूमते हुए इन चीज़ों को देखते तो अपने दोस्तों, सहेलियों से चर्चा करते कि ये क्या लिखा है? स्पैलिंग के बारे में बात करते, इसके अर्थ पूछते। धीरे-धीरे जब बच्चों ने क्लास में एक-एक पैराग्राफ़ पढ़ना शुरू किया, उनके अन्दर कॉन्फिडेंस आया कि वे भी अँग्रेज़ी पढ़ सकते हैं। यह विषय भी हमारे दैनिक जीवन से जुड़ा हुआ है और कहीं-न-कहीं उपयोग करना है। बच्चों को कम्प्यूटर सिखाते वक़्त भी बताती हूँ कि कम्प्यूटर में अँग्रेज़ी का महत्त्व है, कम्प्यूटर में यदि उन्हें आगे कुछ करना होगा तो अँग्रेज़ी से मदद मिलेगी। जब कहीं जॉब के लिए जाना है तो भी साक्षात्कार में अँग्रेज़ी में ही सवाल पूछे जाते हैं और प्रतियोगी परीक्षा में भी कुछ प्रश्न अँग्रेज़ी के होते ही हैं, ये सब मैंने उनको बताया तो कुछ बच्चों को लगा कि हाँ, हमें अँग्रेज़ी सीखनी चाहिए।

पुरुषोत्तम : यह जो समय है, ये बच्चों और आपके लिए कितना चुनौतीपूर्ण है?

रीता : काफ़ी चुनौतीपूर्ण है। जितनी भी चीज़ें कर रहे हैं वो सब स्वेच्छा से कर रहे हैं, चाहे मोहल्ला कक्षा हो या कुछ और। टेक्निकली भी जो हम सीख रहे हैं, वह भी ख़ुद की प्रेरणा या ज़रूरत से कर रहे हैं। हमें इसमें बहुत ज़्यादा समय देना पड़ रहा है। जब सामान्य तौर पर स्कूल चलते हैं तब भी इतना समय पढ़ाई के लिए नहीं देते थे जितना आज दे रहे हैं। घर को मैनेज करना, मोहल्ला कक्षा, ऑनलाइन कक्षा और साथ में ख़ुद भी सीखना मेरे लिए तो बहुत ही चैलेंजिंग व लाभप्रद रहा, मैंने बहुत सीखा। साथ ही जो बच्चे पढ़ाई कर रहे हैं, उनकी भी कुछ वाज़िब समस्याएँ हैं, जिनको हम नज़रन्दाज़ नहीं कर सकते। बच्चे भी इनको फेस कर रहे हैं, उनके लिए भी ये समय चैलेंजिंग रहा है।

पुरुषोत्तम : हम लोग किसी-न-किसी से प्रेरित होते हैं तो आपको बचपन से लेकर आज तक किन लोगों से प्रेरणा मिली और आपके

कामों में वो किस तरह रिफ्लेक्ट कर रहा है?

रीता : जी, बिलकुल! मैंने अपने शिक्षकों से भी बहुत कुछ सीखा, ख़ासकर जैसा मैंने बताया कि जब मैं बीएड कर रही थी मैंने सीखा कि एक शिक्षक की क्या भूमिका होती है, उसका क्या महत्त्व है। पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम के लिए मेरे मन में बहुत सम्मान है, उनसे बहुत प्रभावित हूँ। मुझे पढ़ना बहुत पसन्द है। अभी ज़रूर किताबों से थोड़ी दूर हो गई हूँ पर आजकल मोबाइल में ही बहुत कुछ है, उसी से पढ़ती हूँ। यू-ट्यूब से मुझे नई चीज़ें सीखना और करना बहुत अच्छा लगता है।

पुरुषोत्तम : बच्चों के साथ इस तरह काम करना है, इस विचार को पुख़्ता करने में आपको किस-किस ने मदद की?

रीता : टेक्नोलॉजी का उपयोग करते हुए बच्चों के साथ कैसे काम करना है, इस सन्दर्भ में मेरे बिलासपुर के एक साथी शिक्षक ने बहुत सहयोग किया। लेकिन जैसा कि मैंने बताया फ़ोन के द्वारा बहुत बच्चे जुड़ नहीं पा रहे थे। तब मैंने इन बच्चों और इनके अभिभावकों से मिलना तय किया। मैंने पाया कि बच्चे और अभिभावक भी चाहते थे कि सीखने-सिखाने का कुछ काम शुरू हो और तब मैंने मोहल्ले में ही छोटे-छोटे समूह में बच्चों को बुलाकर काम करने का निश्चय किया। कोविड के दौरान शिक्षा के काम को जारी कैसे रखना है इसकी गाइडलाइन भी आ चुकी थी, थोड़ी मदद उससे भी मिली।

पुरुषोत्तम : स्कूल खुलने के बाद क्या करना होगा? आगे की क्या योजना है?

रीता : हमें स्कूल खुलने का इन्तज़ार है। मोहल्ला कक्षा, ऑनलाइन कक्षा, सबकुछ हो रहा है पर फिर भी हमें लग रहा है कि कुछ पीछे छूटा हुआ है। कक्षा-कक्ष गतिविधियाँ, अन्त:क्रिया, अन्तर्सम्बन्ध नहीं हैं, और इन माध्यमों से हो भी नहीं सकते। हम इतनी मेहनत कर रहे हैं तब भी लगता है जल्दी स्कूल खुलें और हम बच्चों को फिर से उस परिवेश में ले आएँ। टेक्नोलॉजी के माध्यम से लगभग 30% बच्चे ही हमसे जुड़ पाए हैं। कुछ बच्चे मोहल्ला कक्षाओं में आते थे लेकिन वहाँ कक्षानुसार काम नहीं हो पाता था। तो ऐसे बहुत-से बच्चे हैं जो जुड़ ही नहीं पाए। स्कूल खुलने के बाद सभी बच्चों के लिए एक ऐसा संक्षिप्त पाठ्यक्रम बनाना होगा, जिससे उनको गणित की अपनी अवधारणाओं को दोहराने में मदद मिले। चूँकि मैं गणित पढ़ाती हूँ तो मैंने गणित के बारे में ही सोचा है।

पुरुषोत्तम : धन्यवाद।

श्रीमती रीता मंडल, पीजी उमाठे पूर्व माध्यमिक कन्या शाला शांति नगर, रायपुर, छत्तीसगढ़ में शिक्षिका हैं। उन्हें किताबें पढ़ने के साथ-साथ गायन, नृत्य, साहित्य और क्रिएटिव कार्यों में रुचि है। गणित जैसे विषय को बच्चों के लिए रुचिकर बनाने के लिए पढ़ाई के तरीक़ों में अनेक बदलाव किए। 2020 में इन्हें शून्य निवेश नवाचार के लिए दिल्ली में मानव संसाधन विकास मंत्रालय से सम्मान, 2018 में रायपुर ज़िला मोस्ट पॉपुलर टीचर का अवॉर्ड तथा 2019 में मुख्यमंत्री गौरव अलंकरण के अन्तर्गत ज्ञानदीप पुरस्कार प्राप्त हुआ।

सम्पर्क : reetamondal182@gmail.com

पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर, 2012 से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ जुड़े हैं। वह रिसोर्स पर्सन, कम्युनिकेशन एंड एनगेजमेंट के बतौर धमतरी स्थित ज़िला संस्थान में कार्यरत हैं। फ़ाउण्डेशन से जुड़ने से पहले पुरुषोत्तम का 20 साल का पत्रकारिता का अनुभव है जिसमें 7 साल एनडीटीवी इंडिया के राज्य प्रतिनिधि के बतौर भुवनेश्वर से रिपोर्टिंग की है। अभी भी वह *PARI* और *डाउन टू अर्थ* जैसी पत्रिकाओं में शिक्षा और ग्रामीण भारत की कहानियाँ लिखते हैं।

सम्पर्क : purusottam.thakur@azimpremjifoundation.org

बच्चों में पढ़ना–लिखना सीखने और बुनियादी गणितीय क्षमताओं के विविध आयाम

चुनौतियाँ और सम्भावित समाधान

पत्रिका की संवाद श्रृंखला की यह छठवीं परिचर्चा है। संवाद का विषय है 'बुनियादी साक्षरता और बुनियादी, संख्यात्मक और अन्य गणितीय ज्ञान' शिक्षा के सन्दर्भ में यह विषय बहुत महत्त्व का है व प्रारम्भिक शिक्षा में बेहतरी के लिए किए जाने वाले प्रयासों के केन्द्र में है। इस अंक में हम इस संवाद का पहला भाग प्रकाशित कर रहें हैं। संवाद का दूसरा भाग अगले अंक में प्रकाशित करेंगे। सं.

रजनी : आप सभी का इस वेबिनार में स्वागत है। वेबिनार का विषय है– 'बुनियादी साक्षरता और बुनियादी, संख्यात्मक और अन्य गणितीय ज्ञान'। इस संवाद में सितारगंज प्राथमिक विद्यालय ऊधम सिंह नगर से संगीता, शासकीय प्राथमिक शाला बालमगोड़ा, रायगढ़, छत्तीसगढ़ के शिक्षक संतोष और प्राथमिक विद्यालय अभंगपुर, छत्तीसगढ़ से योगेश्वरी साहू हैं। अन्य साथी हैं– अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन धमतरी से अर्धेन्दु शेखर, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से ही अशोक प्रसाद जो श्रीनगर, पौड़ी से हैं। जगदंबा प्रसाद राजकीय इंटर कॉलेज नैचोली, चंबा से और अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के सिरोही स्थित स्कूल से पल्लवी चतुर्वेदी हैं। इस संवाद के सूत्रधार अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय से हृदयकान्त दीवान हैं। वे संवाद का सन्दर्भ रखेंगे।

हृदयकान्त दीवान : 'बुनियादी साक्षरता और बुनियादी, संख्यात्मक और अन्य गणितीय ज्ञान' का मसला बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यदि बच्चा शुरुआती कक्षाओं में पढ़ना–लिखना सीख ले और बुनियादी गणितीय क्षमताएँ हासिल कर ले तो वह सीखने में काफी आत्मनिर्भर हो जाता है। इस मसले को *एनईपी 2020* में भी रेखांकित किया गया है। हम अगर सोचें कि एक बच्चा जो स्कूल आने से पहले बहुत कुछ कर सकता है मतलब वो नया ज्ञान रच सकता है, नई चीज़ें समझ सकता है, वो किसी चीज़ की कल्पना कर सकता है जो उसके सामने नहीं है, नए सन्दर्भों में नए वाक्य बना सकता है, चीज़ों के बीच में सम्बन्ध ढूँढ़ सकता है, किसी चीज़ का कारण पहचान सकता है, सामाजिक रिश्तों को किस तरह से निभाना है, किस तरह से रिश्तों का इस्तेमाल करना है, यह सब भी वह सीख जाता है और वह हर समय इन सबका इस्तेमाल करता है। इसी तरह अगर गणित के सन्दर्भ में देखें तो वह गिन पाता है, मात्रा समझता है, समझता है कि ज़्यादा कौन–सा है, वज़न के हिसाब से भी, आकार में भी, और गिनती में भी। वो एक जगह से दूसरी जगह पहुँच सकता है, किस चीज़ को कहाँ रखना है समझ सकता है, किस चीज़ को कैसे घुमाकर निकालना है, आदि बहुत सारी चीज़ें वो कर सकता है।

बहुत से लोग यह भी कहते हैं कि गणितीय और भाषाई क्षमताएँ एक दूसरे को सुदृढ़ करती हैं, पोषित करती हैं और इसीलिए इन दोनों को एकत्रित रूप में हम लोगों को बच्चे के साथ बातचीत में शामिल करना चाहिए। हम यह जानते हैं कि एक छोटा बच्चा एक निश्चित विकास क्रम में तो लगभग बढ़ता है लेकिन उसका कोई

तिथिवार नियोजन नहीं होता। मतलब ऐसा नहीं है कि सभी बच्चे एक साल की उम्र में आकर बोलना शुरू कर दें या सभी बच्चे आठ महीने में चलना शुरू कर दें। हालाँकि सब बच्चे बोलना और चलना सीख जाते हैं। लेकिन उसमें एक तरह से विविधता होती है कि कौन-सी चीज़ कोई बच्चा पहले करता है और कितने समय में करता है। बच्चा जब स्कूल आता है तब उसके पास ये सब होता है। हमने यह भी देखा कि इन चीज़ों को हासिल करने की उसकी क्षमता में फ़र्क़ होता है और स्कूल आकर उसको इन सबको, औपचारिक रूप से गणित को, सीखना होता है। उसको पढ़ना, पढ़कर समझना और लिखना एवं लिखकर समझना सीखना होता है। हम लोगों का काफ़ी समय से यही प्रश्न रहा है कि स्कूल में ये कैसे हो पाएगा?

जगदंबा प्रसाद : मैं गणित का अध्यापक हूँ। मैंने बुनियादी संख्यात्मक और गणितीय समझ पर अपने टॉपिक को केन्द्रित किया है। दरअसल हम गणित के क्षेत्र में किसी भी छोटे बच्चे को, चाहे वो अंकों से सम्बन्धित हो या दक्षताओं से पहले हो या वो जोड़ना, घटाना या तुलना करना हो, इन सारी चीज़ों के बारे में बताते हैं तो हमारे सामने यह सबसे बड़ी समस्या आती है कि शिक्षा से सम्बन्धित जितने भी हितधारक (stakeholders) हैं, चाहे वो माता-पिता हों, बच्चे या अध्यापक हों, वो ऐसा मानते हैं कि गणित कठिन है। शायद यह सिस्टम भी ऐसा रहा है। उस चीज़ के लिए आधारभूत समझ, चाहे वो संख्यात्मक हो, हिसाब (calculation) के बारे में, अथवा जोड़ या घटाने के बारे में हो, उस चीज़ के लिए हमको चारों ओर एक ऐसा वातावरण तैयार करना चाहिए जो कि स्वाभाविक हो, जहाँ पर बच्चा अपनी बात आसानी से कह सके और उस वातावरण से ख़ुद ही सीख सके। हम देखते हैं कि अर्जन (acquisition) शब्द भाषा से ज़्यादा सम्बन्धित है, लेकिन जैसे कि अभी सर ने कहा था कि ये अलगाव (isolation) में नहीं होता है, ये भाषा के साथ जुड़ा होता है। जब बच्चे को हम कोई निर्देशित संरक्षक (guided mentor) या टीचर के रूप में किसी भी बात को समझाने की कोशिश करते हैं वहाँ हम बच्चे का अधिगम करवाएँ वो अर्जन के साथ होना चाहिए। मेरा कहने का अर्थ यह है कि बच्चे के चारों ओर हम ऐसा वातावरण तैयार करें कि उसको स्वाभाविक अनुभव हो, कहीं से भी उसको गणित समझने या समझाने में, अपनी बात को रखने, उसको अभिव्यक्त करने या उस वातावरण से सीखने में बिलकुल परेशानी न हो। जब गणित की आधारभूत संक्रियाओं, चाहे वो जोड़ की हो, लिखने या घटाने की हो या किसी भी गणितीय ऑपरेशन की बात हो तो हम उसके चारों ओर सिखाने का एक ऐसा वातावरण तैयार करें कि बच्चा वहाँ से ख़ुद-ब-ख़ुद सीख सके, वातावरण से सहभागिता (interact) कर सके और इसके लिए टीचर के तौर पर मेरा ये उत्तरदायित्व बनता है कि हमें बच्चे की अभिवृत्ति (attitude), उसके संज्ञानात्मक स्तर के आधार पर सबकुछ तय करना चाहिए और जैसा कि अभी सर ने कहा भी था कि बच्चा बहुत सारी चीज़ें जानता भी है, लेकिन हम लोगों को यह देखना है कि हमें बच्चे के किस ज्ञानक्षेत्र (domain) को आगे लाना



चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

है? गणित कोई लिखने की ही तकनीक नहीं है, यह मौखिक में भी आती है, निर्माण (construction) में भी आती है, क्रियाओं (activities), चित्रकारी में भी आती है। हमें यह भी देखना है कि बच्चा किन क्षेत्रों में ज़्यादा दक्षताओं को रखता है और गणित के माध्यम से हमें इनमें से किन क्षेत्रों को आगे लाना चाहिए। एक शिक्षक के तौर पर मैं सोचता

हूँ कि गणित में एक और समस्या ये आती है कि हम बच्चे को पहले अमूर्त बात बताते हैं। हम ये पहले बताते हैं कि पहले 1 लिखो, फिर 2 लिखो, फिर 3 लिखो और फिर उसको ठोस रूप में लाने की कोशिश करते हैं। जैसे-जैसे शिक्षा में सुधार हुआ है और हम लोगों ने बातों को समझना शुरू किया है तो अब काफ़ी लोगों ने पहले ठोस रूप और बाद में अमूर्त रूप की तरफ़ ले जाने का प्रयास करना शुरू कर दिया है।

यह भी कि गणित शब्द का प्रयोग अलगाव में बिलकुल नहीं होगा, वो हिन्दी के साथ भी सम्बन्धित होगा, भाषा के साथ भी, भौतिकी (Physics) एवं रसायन विज्ञान (Chemistry) के साथ भी और उस बच्चे के संज्ञानात्मक स्तर और पूर्व ज्ञान के हिसाब से भी होगा।

मेरा अनुभव है कि अमूर्त और ठोस दोनों एक साथ चलना चाहिए। यानी ऐसा नहीं कि पहले आप ठोस के साथ अनुभव ही देते रहें और फिर बाद में अमूर्त पर आएँ। हम दोनों को एक साथ लेकर सिखाने की कोशिश करें, यह केवल संख्यात्मक ज्ञान में ही नहीं, जोड़ में भी ऐसा हो सकता है, घटाने और गुणा में भी ऐसा ही कर सकते हैं। जैसे एक चित्र में बच्चे को 1 लिखना है, क्योंकि उसमें 1 पेड़ है लेकिन बच्चा अपनी समझ के अनुसार, अपने संज्ञानात्मक स्तर के अनुसार 3 भी लिख सकता है क्योंकि उसे पेड़ की 3 डालियाँ दिखाई दे रही हैं। हमें बच्चे के सामने ऐसी आकृतियाँ प्रस्तुत करने से बचना चाहिए। हमें बच्चे के स्तर पर जाकर सोचना पड़ेगा। एक और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जब हम वातावरण की बात कर रहे हैं तो स्वाभाविक तौर पर उसकी सीखने की प्रक्रिया (learning) करानी होगी, हमें गणित की भाषा को ऐसा करना पड़ेगा कि बच्चा ख़ुद-ब-ख़ुद सीख सके। वातावरण का अर्थ सिर्फ़ चार दीवारों के अन्दर से नहीं है बल्कि उसका अर्थ है कि हम उसको कक्षा से बाहर भी ले जाएँ। हम उसको सड़क पर, खेत में, फ़ील्ड पर, कहीं पर भी ले जा सकते हैं। बच्चे अपनी सभी इन्द्रियों को, ख़ासकर अपनी आँख भी सक्रिय रखें, और जुबान भी सक्रिय रहे और उनके हाथ भी। मतलब लिखने की प्रक्रिया जो कि हम लिखने की तकनीक से कर सकते हैं, उन सबको सामूहिक रूप से एकीकृत कर सकें। बच्चा सुन क्या रहा है, सुनने के अनुसार प्रतिक्रिया क्या दे रहा है, बोल क्या रहा है और लिख क्या रहा है, इन सारी चीज़ों को वो एकीकृत कर काम कर सके। हमारे जो टूल हों, एक तो वो कच्ची सामग्री (raw material) से बने हों, स्थानीय (local) हों, कम लागत वाले और आकर्षक हों, ताकि उम्र के हिसाब से वो बच्चे को अपनी ओर खींच सकें। रंगीन हों, गत्यात्मक हों, चलते-फिरते और इंटरैक्टिव हों, वो टूल ख़ुद-ब-ख़ुद बच्चे को कुछ समझा सकें और बच्चा उनसे कुछ बात कर सके। ये टूल स्थानीयता पर आधारित होने चाहिए। ऐसा न हो कि मैं गढ़वाल में पढ़ा रहा हूँ और उस टूल के लिए मुझे सहारनपुर या दिल्ली जाना पड़े। इन सारी बातों को ध्यान में रखते हुए हमें बच्चे के साथ गणितीय समझ को विकसित करने की पहल करनी चाहिए।

वातावरण का अर्थ सिर्फ़ चार दीवारों के अन्दर से नहीं है बल्कि उसका अर्थ है कि हम बच्चे को कक्षा से बाहर भी ले जाएँ। हम उसको सड़क पर, खेत में, फ़ील्ड पर, कहीं पर भी ले जा सकते हैं। बच्चे अपनी सभी इन्द्रियों को, ख़ासकर अपनी आँख भी सक्रिय रखें, और जुबान भी सक्रिय रहे और उनके हाथ भी।

हृदयकान्त दीवान : आपने दो-तीन सवाल रखे हैं। पहला सवाल गणित की मुश्किल के बारे में है। हमने पहले भी बात की थी कि गणित में स्वाभाविक तौर पर बच्चा बहुत कुछ सीख लेता है, फिर भी ऐसा क्यों महसूस होता है कि गणित मुश्किल है। दूसरा, कुछ ऐसी चीज़ों की ज़रूरत होती है जो कि सीखने को प्रोत्साहित करें। उसके बारे में भी आपने कुछ बातें कही हैं। तीसरा, आपने कहा है कि एक सन्दर्भ और

ठोस चीज़ें होनी चाहिए जिनके आधार पर हम धीरे-धीरे अमूर्तता की तरफ़ बढ़ें।

संगीता : जैसी कि अभी बात हुई कि बच्चे बहुत कुछ सीखकर हमारे पास आते हैं, उनमें बहुत कुछ समझ होती है। जब बच्चा छोटा होता है तो वह बहुत कुछ बोलना जानता है। वह अपनी टूटी-फूटी भाषा में बहुत सारी बातें बोलता है, कहता है और वो जो कुछ भी कहता है ऐसा नहीं है कि निरर्थक हो, उसमें एक सन्दर्भ होता है, अर्थ होता है। लेकिन फिर भी जब वह विद्यालय आता है तो हम उसको टुकड़ों में सिखाना और पढ़ाना शुरू करते हैं। हम रटने को ही सिखाना मानते थे, अक्षर ज्ञान मात्रा तक ही सीमित था। लेकिन अब उसमें और भी बहुत चीज़ें शामिल हैं। जब वो पढ़ने जाए तो यह नहीं है कि सिर्फ़ उसको अक्षर ज्ञान हो गया तो उसका सीखना हो गया। पढ़ना पढ़कर सीखा जाता है। इसलिए उसको पढ़ने के लिए बहुत सारी किताबों की भी आवश्यकता होती है।



चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

जब हम पढ़ने की बात करते हैं तो पढ़ने के मायने क्या हैं, जैसे– अंक की सूचनाओं को पढ़ पाना, उनको समझना, अर्थ गढ़ना, विचार बुनना, अपने विचार जोड़ना, ऐसी बहुत सारी बातें इसमें समाहित हैं। इस तरह से पढ़ना एक रचनात्मक प्रक्रिया है। जब हम उसको सिखाने की तरफ़ आगे बढ़ते हैं तो यह होना चाहिए, और मैं यह करती भी हूँ कि मैं उसकी पढ़ने में रुचि जगा सकूँ क्योंकि जब उसकी पढ़ने में रुचि जागेगी, वो आगे कुछ सीखने के लिए प्रेरित होगा। जब उसमें रुचि जागृत होगी तो वो किसी भी चीज़ को पढ़ सकेगा, समझ सकेगा, उसका अर्थ गढ़ पाएगा। और सबसे बड़ी बात, हमने देखा कि शुरुआत में जब बच्चा विद्यालय आता है तो अपनी भाषा में ही बोलता है, लेकिन धीरे-धीरे हम उसको विद्यालय के नियम और क़ायदे-क़ानून में बाँधकर सिखाना शुरू करते हैं। जिस भाषा का हम विद्यालय में उपयोग करते हैं वो एक मानक भाषा होती है और बच्चे के पास अपनी एक भाषा होती है। मानक भाषा और बच्चे की मातृभाषा में फ़र्क़ होने की वजह से बच्चे को अर्थ ग्रहण में दिक़्क़त होती है। जब अर्थ ग्रहण नहीं होता और समझ नहीं बनती है, तो इससे उसमें एक अरुचि पैदा हो जाती है। इसलिए सबसे पहले तो उसकी भाषा को कक्षा में स्थान दिया जाना चाहिए और उसके अनुभवों को वहाँ पर शामिल किया जाना चाहिए। उसकी अभिव्यक्ति को कक्षा में लाया जाए जिससे वह अपने अनुभवों को रख सके। जब उसकी भाषा एवं उसके अनुभवों को कक्षा में लाया जाएगा और उसको जब अवसर मिलेगा तो उसकी सीखने के प्रति रुचि भी बनेगी और सीखना भी पुख़्ता तरीक़े से सीख पाएगा।

कई लोगों ने कहा है और मेरा भी मानना है कि पढ़ना पढ़कर सीखा जाता है। पढ़ना केवल एक किताब या पाठ्यपुस्तक से नहीं सीखा जा सकता, बल्कि इसके लिए बहुत सारे बाल साहित्य की ज़रूरत होती है। एक बच्चा जब बाल साहित्य पढ़ता है तो वह कुछ अर्थ गढ़ता है और उसमें वह अपने-आप को पाता है। वह ख़ुद को उसके साथ जोड़ता है और इस प्रक्रिया में वह भाषा सीखने की तरफ़ अग्रसर होता है। इस क्रम में वो बहुत सारी अभिव्यक्ति, चाहे मौखिक हो (मौखिक रूप से तो वो शुरू से देता ही रहता है) या लिखित, व्यक्त करता है। पहले सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना को हम क्रमबद्ध

तरीक़े से देखते थे। लेकिन जब हम सन्दर्भ की बात करते हैं और सन्दर्भ के द्वारा बच्चों के सीखने की बात करते हैं तो वो एक स्वाभाविक गति और रुचि से होता है। इसमें हम पढ़ने और लिखने को अलग-अलग नहीं देखते हैं। उसका सुनना, पढ़ना और बोलना सब एक साथ चलता है। जब उसको बहुत सारी किताबें मिलती हैं तो वो उनमें रुचि लेना शुरू करता है और धीरे-धीरे वह पढ़ना सीखता है। इस तरह से वह एक अच्छा पाठक बनने की ओर अग्रसर होता है। जब बुनियादी साक्षरता की बात करते हैं तो गणित की भी बात की जाती रही है। शिक्षा का एक उद्देश्य है, विषयगत दीवार को तोड़ना। हम भाषा को केवल हिन्दी के रूप में रखकर नहीं देख सकते, उसमें अन्य विषयों का जुड़ाव भी होता है। चाहे गणित हो, पर्यावरण विज्ञान, विज्ञान, या सामाजिक विज्ञान हो, बिना भाषा सीखे उन सब विषयों को भी सीखना दुष्कर होगा।

इसलिए बच्चों की एक भाषा में पुख़्ता समझ होने से तथा उस भाषा में समझ और पढ़ सकने के कौशलों को अर्जित करने से वह अन्य भाषाओं को भी सीखने में सक्षम होता है। मान लीजिए कि जब हम किसी भी कहानी पर चर्चा कर रहे हैं– चाहे वह 'मिठाई' या 'फूली रोटी' या 'गुलगुले' है– तो उसमें कहीं-न-कहीं गणित भी शामिल होता है और उसमें उसका आसपास का परिवेश भी शामिल है। इसी तरह, अगर हम पेड़ से सम्बन्धित कहानी की बात कर रहे हैं तो उसमें भी बच्चा उस कहानी को तो पढ़ ही रहा है, साथ ही वह अपने आसपास के पेड़ों से और अपने आसपास के वातावरण से भी ख़ुद को जोड़ पाता है। पहले की पढ़ाने की प्रक्रिया के अनुसार हम पाठ्यपुस्तक के 'झूला' पाठ को पढ़ाकर या सुनाकर उसके अभ्यास की तरफ़ बढ़ जाएँगे तो उसमें बच्चे की रुचि नहीं होगी। वह उसको उस तरह से नहीं समझ पाएगा जिस तरह से वह अपने अनुभवों को जोड़कर समझ पाएगा। जैसे– झूले के विषय में अगर बच्चों के अनुभवों को कक्षा में लाया जाए तो वे उसको अधिक अच्छे-से समझ पाएँगे। बच्चे के अनुभवों को जब कक्षा में लाया जाता है तो बच्चा अपने-आप को सम्मानित भी महसूस करता है और दोगुने उत्साह के साथ सीखने की ओर अग्रसर होता है। ऐसी ही मातृभाषा की बात है कि हम बच्चे को पढ़ा रहे हैं और कह रहे हैं कि ये मानक भाषा है और मानक भाषा को समझाने के लिए हमें शब्दार्थ का सहारा लेना पड़ता है जिसमें उसको कठिनाई होती है। लेकिन यदि मान लीजिए कि हम 'तीन साथी' कहानी पढ़ा रहे हैं और उसमें वाक्य है कि 'हाथी डाली झुकाता और बकरी पत्ते खाती थी', लेकिन अगर बच्चा उसको यह पढ़ रहा है कि 'हाथी डाली लचाता और बकरी पत्ते खाती' तो 'झुकाता' की जगह 'लचाता' पढ़ने से उसका अर्थ कहीं बाधित नहीं हो रहा है। इसी तरह 'छुप्पम-छुप्पाई' की जगह 'लुका-छिपी' तथा 'पलटना' की जगह 'लौटना' कहने से कहीं भी उसका अर्थ नहीं बदल रहा है। इस तरह से उनके अनुभवों को, उनकी भाषा को अगर हम कक्षा में शामिल करके उनको सिखाते हैं तो उनका सीखना और अधिक सुदृढ़ होता है।

> पढ़ने की प्रक्रिया में अनुमान लगाना एक प्रमुख अंग है। अनुमान लगाना पढ़ने की कुंजी है। बच्चे को अगर अक्षर पढ़ना नहीं भी आ रहा होता है तो अनुमान के सहारे वो आगे की कहानी पढ़ता जाता है और इस तरह अनुमान के सहारे पढ़ते-पढ़ते वह पढ़ना सीख जाता है।

दूसरी बात यह है कि पढ़ने की प्रक्रिया में अनुमान लगाना एक प्रमुख अंग है। अनुमान लगाना पढ़ने की कुंजी है। बच्चे को अगर अक्षर पढ़ना नहीं भी आ रहा होता है तो अनुमान के सहारे वो आगे की कहानी पढ़ता जाता है और इस तरह अनुमान के सहारे पढ़ते-पढ़ते वह पढ़ना

सीख जाता है। इसी तरह से और भी कुछ चीज़ें हैं, जैसे– अगर उसमें पढ़ने की उत्सुकता जगानी है, रुचि पैदा करनी है, उसको पाठक बनने की ओर अग्रसर करना है, अभिव्यक्ति का मौक़ा देना है तो इन सबके लिए एक समृद्ध और प्रिंट रिच वातावरण चाहिए जिसके लिए पुस्तकालय या पढ़ने के कोने की हम बात करते हैं, जो बच्चों को इस तरह के अवसर देने में या पढ़ना सीखने में सरलता प्रदान करते हैं। बच्चे भी उन पुस्तकों को पढ़ते हुए, समझते हुए, कल्पनाएँ या तर्क करते हुए पढ़ने की ओर अग्रसर होते हैं। जब हम चाहते हैं कि बच्चे में प्रारम्भिक अवस्था या कक्षा 1, 2 से ही पढ़ने में रुचि उत्पन्न हो, इसके लिए शिक्षक को भी जागरूक होना आवश्यक है कि वह एक योजना के तहत एक सैद्धान्तिक समझ बनाते हुए कार्य करे।


चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

हृदयकान्त दीवान : कुछ बातें बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। जैसा कि आपने कहा कि सीखना टुकड़ों में नहीं होना चाहिए। सीखना एक व्यापक प्रक्रिया है। यह मात्र अक्षर पहचान नहीं है। दूसरी बात आपने कही कि कक्षा में जो नियमबद्धता है मानक भाषा के इस्तेमाल की, उसको थोड़ा ढीला करना चाहिए। बच्चे की भाषा के लिए कक्षा में जगह होनी चाहिए। यह भी कि पढ़ने में धीरे-धीरे अनुमान लगाने से बच्चा पढ़ना शुरू करता है तो उसके लिए एक सन्दर्भ और प्रिंट रिच वातावरण चाहिए, साथ ही एक ऐसा माहौल कक्षा में मिले जिसमें बच्चे बार-बार अनुमान लगाते-लगाते पढ़ने का अभ्यास कर सकें, बिना पूर्णतः सही के आग्रह के। हम पढ़ना, लिखना, सुनना, बोलना इन सबको अलग-अलग देखते हैं, इनको ऐसे नहीं देखकर एकत्रित रूप में देखना चाहिए। चूँकि भाषा हमारे सम्पूर्ण जीवन का, हमारी सम्पूर्णता का हिस्सा है और इसलिए उसको समग्रता से देखना बहुत ज़रूरी है।

योगेश्वरी : पहली कक्षा से बच्चे हमारे स्कूल में आते हैं और उनको भाषा की जानकारी होती है, चाहे वह अपनी ही भाषा क्यों न बोलें। जैसे अगर बच्चा छत्तीसगढ़ का है तो वो छत्तीसगढ़ी बोलेगा। उनको बहुत सारा ज्ञान होता है, वो निरर्थक बातें नहीं करते हैं। उनको बुनियादी समझ भी होती है। छोटे-छोटे शब्दों की जानकारी उनको होती है और अपने अनुभवों को वे जोड़ते हैं। जो बच्चा प्री नर्सरी करके आता है मतलब कि वो आँगनवाड़ी से बहुत कुछ सीखकर आता है चाहे वह गणित में हो, हिन्दी में हो या छत्तीसगढ़ी भाषा हो। हम उनको कक्षा में कविता सुनाने को कहते हैं तो वो अपनी भाषा में सुनाता है। अगर हिचकिचाहट है तो वो थोड़ा पीछे हो जाता है। बुनियादी साक्षरता जैसे कि सात साल का बच्चा जो स्कूल आता है, वो मोबाइल चलाना जानता है। अगर गूगल में उसे अपनी कोई बात रखनी होती है तो वो गूगल में सिर्फ़ एक बार बोलता है। वो जानता है कि अगर माइक में हम बोलेंगे तो वो टाइप करेगा और खोजेगा। यहाँ वो जान रहा है कि हम जो बोलेंगे उसकी खोज होगी और उसको हम पढ़ सकते हैं, लिख सकते हैं। दूसरा, बच्चे कार्टून देखना ज़्यादा पसन्द करते हैं। अगर हम स्कूल में उनसे पूछते हैं कि कौन-सा कार्टून चरित्र उनको पसन्द है और उसका कोई डायलॉग बोलो तो वह उसको ध्यान में रखते हुए बोलता है। अगर वो टीवी देख रहा है और स्कूल में आकर उसको बता रहा है तो उसको भाषा का ज्ञान है। चाहे वह हिन्दी हो या छत्तीसगढ़ी। पढ़ना एक रचनात्मक प्रक्रिया है, ये हम सब जानते ही हैं। साथ ही ऐसे कई और उदाहरण

हैं जो हम स्कूल में काम में लेते हैं। जैसे कि हम अगर स्कूल में कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम या वार्षिकोत्सव आयोजित करते हैं और अगर हम उनको बोलते हैं कि कोई भी डांस वहाँ करें तो बच्चे पहले सीखकर आते हैं और फिर उसको दिखाते हैं। छत्तीसगढ़ी भाषा को वो समझते हैं इसलिए वो उसपर ज़ोर देते हैं।

इसी तरह गणित में मूर्त से अमूर्त की तरफ़ चलने पर ज़ोर देना चाहिए न कि अमूर्त से मूर्त की ओर। उदाहरणत:, अगर बच्चे को गणित का ज्ञान कराना है तो पहले उनको संख्या के बारे में नहीं बताते, ठोस वस्तुओं का अनुभव कराते हैं। जैसे, उनको पहाड़े रटाते नहीं हैं, हम पहाड़े बनाने पर ज़ोर देते हैं। यही प्रक्रिया हम पहले ठोस वस्तुओं के साथ करेंगे फिर अंकों के साथ। साथ ही अगर बच्चों में रुपए की समझ बतानी है तो इससे सम्बन्धित ज्ञान को व्यवहारिक जीवन से जोड़ना होगा। रुपए को समझाने के लिए हमें उन्हें रुपया या सिक्का दिखाना है। साथ ही बाज़ार का खेल खेलकर या घर का अभिनय करके भी हम उनके गणित के ज्ञान के लिए रुचि उत्पन्न करते हैं। दूसरा अगर गणित सिखाना है तो हमें इसे निरन्तर अभ्यास में लाना है। जैसे कि घर में रोटी बनाई गई हैं तो कितनी रोटी फूली हैं और कितनी नहीं। इसमें आपको जोड़ने और घटाने का हिसाब करना है, इससे कुछ हद तक जोड़ने और घटाने का हिसाब उनको समझ में आ जाता है। इसके साथ ही हमें भाषा को भी कक्षा में स्थान देना होगा। अगर बच्चा छत्तीसगढ़ी भाषा के सहारे अपने मन की बात कहना चाहता है तो वो कह सकता है। हम बच्चों को उनके अनुभवों से जोड़ने की कोशिश करते हैं और उनकी कल्पना एवं तर्कशक्ति पर भी हम ज़ोर देते हैं, साथ ही वातावरण से सम्बन्ध बनाकर देखते हैं।

गणित में मूर्त से अमूर्त की तरफ़ चलने पर ज़ोर देना चाहिए न कि अमूर्त से मूर्त की ओर। उदाहरणतः, अगर बच्चे को गणित का ज्ञान कराना है तो पहले उनको संख्या के बारे में नहीं बताते, ठोस वस्तुओं का अनुभव कराते हैं। जैसे, उनको पहाड़े रटाते नहीं हैं, हम पहाड़े बनाने पर ज़ोर देते हैं। यही प्रक्रिया हम पहले ठोस वस्तुओं के साथ करेंगे फिर अंकों के साथ।

हृदयकान्त दीवान : योगेश्वरीजी, आपने कल्पना और तर्कशक्ति के मौक़े देने की बात की, उसके कुछ उदाहरण दें।

योगेश्वरी : जैसे कोई बच्चा पहली कक्षा में आया और उसमें हिचकिचाहट है तो उससे दोस्ती करने के लिए हम पहले उससे घर की बात करेंगे। जैसे, आपकी मम्मी और पापा क्या करते हैं? इस तरह, धीरे-धीरे बच्चे को उस टॉपिक की ओर ले जाने का प्रयास करेंगे जिसपर चर्चा करनी है। उदाहरण के लिए, उनसे पूछा जा सकता है कि अगर तुम्हें चाँद पर भेज दिया जाए तो तुम क्या करोगे? इस प्रक्रिया में अपनी कल्पना-शक्ति का प्रयोग करते हुए वो बता सकता है कि चाँद सफ़ेद-सा दिखता है या बहुत बड़ा-सा है। इस तरह वो चाँद के बारे में बताना शुरू करेगा। जैसा कि पहले मैंने कहा, बच्चों की बातें निरर्थक नहीं होती हैं। यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम उनको, उनकी भाषा को किस तरह से समझ रहे हैं, चाहे वह उनके लिखने की भाषा हो या पढ़ने की। प्राथमिक स्तर के बच्चे एकदम से लिखना नहीं जानते हैं, लेकिन उन्हें रंगों की और बहुत सारी चीज़ों की पहचान होती है। इन बच्चों में थोड़ी हिचकिचाहट होती है क्योंकि वो आँगनवाड़ी या केजी या नर्सरी से आते हैं। स्कूल का वातावरण उनके लिए नया होता है। सारे बच्चों को एक साथ जोड़ना पड़ता है और उनको एक साथ मौक़ा देना पड़ता है कि वो सामने आएँ और अपनी बातों को रखें।

हृदयकान्त दीवान : पहली महत्त्वपूर्ण बात यह है कि बच्चे सार्थक बात करते हैं और उस सार्थक बात को समझने की ज़िम्मेदारी हमारी है। एक बात संगीताजी ने भी कही थी कि बच्चे की भाषा को जगह देनी चाहिए और उसे समझने की कोशिश करनी चाहिए। दूसरी

बात आपने यह कही कि बच्चे के अनुभव जो वो अभिव्यक्त करते हैं उनको लिखने से हम बच्चों को यह महसूस करवा पाते हैं कि उनकी बात महत्त्वपूर्ण है और उनमें आत्मविश्वास भी आता है और उनकी ये अभिव्यक्तियाँ पढ़ना शुरू करने के लिए टेक्स्ट बन सकती हैं। यहाँ एक बात और मैं जोड़ रहा हूँ जो संगीताजी ने कही कि प्रिंट रिच वातावरण होना चाहिए, तो प्रिंट रिच वातावरण सिर्फ़ किताबों से नहीं, बल्कि उस सामग्री से भी बनता है जो बच्चों ने बातचीत में रखी, बोर्ड पर लिखकर रखा और फिर उसको लिखने का प्रयास किया। तीसरी बात आपने यह कही कि कोई भी चीज़ बच्चे को सिखानी हो, चाहे वह गणित ही हो क्योंकि गणित में अभ्यास बहुत ज़रूरी होता है, भाषा का अभ्यास स्वाभाविक रूप से मिल जाता है। लेकिन गणित में अभ्यास बनाने की ज़रूरत होती है तो हम छोटे-छोटे खेल और ऐसे सन्दर्भ विकसित कर सकते हैं, जैसे– बाज़ार जमाना, घर का अभिनय करना जिसमें बच्चों को गणित का अभ्यास करने का मौक़ा मिले। कुल मिलाकर अभ्यास इस प्रकार के हों जिनमें बच्चे की रुचि हो, जो बातचीत करें वो भी उस बारे में करें जिसमें बच्चे की रुचि हो और सवाल भी ऐसे हों जिनमें एक प्रकार का खुलापन हो जिसमें बच्चे को कल्पना करने का मौक़ा हो। वो कल्पना किस आधार पर करता है उसपर बाद में बातचीत करेंगे, लेकिन एक कल्पना का उसको मौक़ा होना चाहिए और उस कल्पना में आप ये पूछ भी सकते हैं कि ये आपने किस आधार पर कहा। आप कह रही हैं कि कक्षा में कल्पना और तर्क दोनों के लिए जगह होनी चाहिए क्योंकि उसी से फिर भाषा और समझ का विकास होता है।


चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

संतोष : हम सामान्यत: बच्चों को ख़ाली स्लेट या माटी का लौंदा के रूप में चिह्नित करते हैं। बच्चा एक साफ़-सुथरी भाषा और हज़ारों शब्द लेकर हमारे विद्यालय में आता है। वह न केवल उन शब्दों को जानता है, बल्कि सन्दर्भों के साथ उनका प्रयोग भी करना जानता है। मैंने अपनी शाला में बच्चों से बात की और परिवार में जाकर उनसे मिला तो कुछ बातें मेरे सामने आईं जो मैं आप लोगों के सामने रखूँगा। एक बच्चा जब परिवार, मित्र या शिक्षक से संवाद करता है तो वह संवाद एक तरह से उसकी बुनियादी साक्षरता को प्रदर्शित करता है। इस क्रम में वह व्याकरण व तर्क के साथ भी बात करता है। वो अपने स्वयं के अनुभव को भी साझा करता है। जैसे वह कह सकता है कि मेरे परिवार में मेरी माँ मेरा सबसे ज़्यादा ख़्याल रखती हैं या स्कूल में मेरे ये शिक्षक मुझे बहुत पसन्द करते हैं। वह बातों को सुनते हैं और ग़ुस्सा नहीं करते हैं। वह साक्ष्य के साथ अपना तर्क भी देता है। इस तरह से यह जानकारी होती है कि बच्चा सीखने की ओर अग्रसर हो रहा है। हमें अपनी कक्षा में उनकी बातों को महत्त्व और उचित स्थान देना चाहिए।

हम लोग कहते हैं कि विषय से सम्बन्धित जो बातें हैं यदि उनको हम मानक भाषा में करें तो बच्चा ज़्यादा सीखेगा, और बच्चों की भाषा को हम उपेक्षित दृष्टि से देखते हैं। इस वजह से बच्चे को एक झिझक महसूस होती है और डर लगता है कि मैं जिस भाषा में उत्तर दूँगा वह शायद ग़लत होगा। यदि बच्चों को मातृभाषा में बोलने के लिए प्रोत्साहन मिले तो यह डर हट जाता है और बच्चों की झिझक ख़त्म होने लगती है।

शुरुआती कक्षाओं में सहसंज्ञानात्मक व नैतिक विकास के बारे में सोचना चाहिए। जब क्लासरूम में बच्चों से कोई प्रश्न पूछा जाता है तो बच्चे 'मैं बताऊँगा', 'मैं बताऊँगा' करके हाथ खड़ा करते हैं। लेकिन जैसे हम बोलते हैं कि 'बच्चे आपकी बारी है आप बताओ' तो वह अपनी बारी आने पर बात करना सीखते हैं। इसी तरह एक बार मैदान में हम लोग कुछ बीज बो रहे थे, वृक्षों को पाल रहे थे तो एक बच्चा बोला कि इस वृक्ष की मम्मी नहीं हैं क्या? इस तरह से प्रश्न में एक सहानुभूति की भावना जागृत होती है। इससे यह पता चलता है कि भय, क्रोध और ममता जैसी भावनाओं पर भी बात होती रहनी चाहिए क्योंकि बच्चों में सहसंज्ञानात्मक क्षेत्र में भी विकास होता रहता है।

उनको स्थानीय खेलों के कुछ नियम बनाकर और लिखकर हमें दिखाने को कहना चाहिए। पहली और दूसरी कक्षा में बच्चों ने अपने मन से कुछ खेलों के नियम बनाए थे। खेल किस प्रकार से खेला जाता है, इसमें कितने बच्चे खेलते हैं और उसमें जो शब्दावली थी वो भी उन्होंने तय की थी। दूसरी कक्षा के बच्चों ने उसको लिखित स्वरूप में दिखाया था और पहली कक्षा के साथ उन्होंने यह खेल खेला था। इस तरह से उनके परिवेश में जो भाषा रहती है, केवल हमारे पाठ्यक्रम की ही भाषा नहीं रहती है। खेल सम्बन्धी ज्ञान के नियम बनाने और खेलने से उनमें केवल अनुशासन ही नहीं बढ़ता, बल्कि एक तरह से नैतिकता भी आती है और सहयोग की भावना का भी विकास होता है।

> शुरुआती कक्षाओं में सहसंज्ञानात्मक व नैतिक विकास के बारे में सोचना चाहिए। जब क्लासरूम में बच्चों से कोई प्रश्न पूछा जाता है तो बच्चे 'मैं बताऊँगा', 'मैं बताऊँगा' करके हाथ खड़ा करते हैं। लेकिन जैसे हम बोलते हैं कि 'बच्चे आपकी बारी है आप बताओ' तो वह अपनी बारी आने पर बात करना सीखते हैं।

बच्चों को तरह-तरह का ज्ञान पहले से ही होता है, वे बहुत जिज्ञासु होते हैं। बार-बार प्रश्न करना उनकी जिज्ञासा को ही प्रदर्शित करता है। जैसे बच्चों का एक प्रश्न था कि जानवर घर क्यों नहीं बनाते और दुर्घटना होने पर गाड़ी को आदमी की तरह चोट क्यों नहीं लगती? ऐसे असंख्य प्रश्न वो पूछते रहते हैं। यह सब हमें उनके साथ वार्तालाप का मौक़ा देते हैं व उनकी समझ, अवधारणाओं से परिचय और तर्क समझने व करने की क्षमता सभी को प्रोत्साहन दे सकते हैं। बच्चों के ज्ञान का एक छोटा-सा उदाहरण यह है : मैंने अपनी कक्षा में 'कुरकुरे', बिस्कुट, चॉकलेट आदि के रैपर्स बच्चों को दिखाए। बच्चे उन रैपर्स पर बनी आकृति को देखकर बता पा रहे थे कि कौन-सा 'मंच' चॉकलेट का रैपर है और कौन-सा 'कुरकुरे' का। इससे यह ज्ञात होता है कि उनको एक तरह से आकृति, बनावट, अक्षरों की पहचान हमारी कक्षा में आने से पहले ही हो जाती है। छोटा, बड़ा का गणितीय ज्ञान उनको पहले से ही रहता है। वे इन सबके बारे में बहुत कुछ समझते हैं एवं बहुत कुछ और समझना भी चाहते हैं।

मैंने यह भी देखा कि बच्चे नई चीज़ें करना चाहते हैं, खोजबीन कर परखना चाहते हैं। मेरे यहाँ पुस्तकालय में बहुत सारी पुस्तकें रखी हुई हैं। पुस्तकालय में पहली और दूसरी कक्षा के बच्चे आते हैं। पहली कक्षा के बच्चे बार-बार इन किताबों को उलट-पलट कर देखते हैं और कुछ बच्चे इन्हें देखते हुए अपने मन से कुछ गुनगुनाते रहते हैं, कुछ बोलते हैं। भले ही अक्षर कुछ भी लिखा हो लेकिन चित्रों के साथ उसको मिलाने की कोशिश करते रहते हैं, जो भी लिखा रहता है उसको जानने की कोशिश करते हैं। मैंने अपनी कक्षा में इस प्रकार से बहुत सारी गतिविधियाँ करवाईं और देखा कि बच्चे चित्रों पर बहुत अच्छे-से काम करने लगे।

इसी तरह बच्चों की गणितीय अवधारणाओं को भी मज़बूत करने पर काम किया जा सकता

है। उदाहरणतः, अपनी अँगुली का प्रयोग कर बच्चे अपने परिवार सहित रिश्तेदारों की संख्या भी बताते हैं यानी गणितीय अवधारणाएँ परिवेश में कहीं-न-कहीं रहती हैं और बच्चे उस गणितीय एवं संख्यात्मक ज्ञान से परिचित रहते हैं। यह संख्यात्मक और मात्रात्मक ज्ञान बच्चे हमको बताते भी हैं, लेकिन हम समझते हैं कि गणित अलग विषय है और इसको हम चित्र तथा संकेत के माध्यम से दर्शाने की कोशिश करते हैं। इस वजह से बच्चों का सीखना बाधित हो जाता है।

बुनियादी गणितीय समझ के लिए मैं बच्चों को बहुत-से खेल खिलाता हूँ, जैसे– बोलो भाई बोलो कितने, तो मैंने अगर 25 बोला तो 25 लिखते हैं, मैंने अगर 24 बोला तो 24 लिखते हैं। बच्चों को समझ होती है। सामान्यतः बच्चे 5 और 10 का जोड़ बना लेते हैं लेकिन जब हम उसी चीज़ को सवाल में देते हैं कि आपकी कक्षा में 10 लड़के हैं और 5 लड़कियाँ हैं तो बताओ कितने लड़के और लड़कियाँ हो गईं। वहाँ पर बच्चों को प्रश्न समझ में नहीं आता है और जोड़ना कठिन हो जाता है। इसलिए इस प्रकार की गतिविधियाँ करवाई जानी आवश्यक हैं जिनसे बच्चे संख्यात्मक ज्ञान सीख लेते हैं।

इसी प्रक्रिया में कुछ और खेलों का उदाहरण भी दिया जा सकता है जिससे बच्चों में तर्कशक्ति का विकास होता है जैसे– चिड़िया उड़, मैना उड़, शेर उड़। इससे बच्चे ध्यान से सुनना सीखते हैं। बच्चों में भाषा सीखने की पहली शर्त सुनने की दक्षता हासिल करना है, क्योंकि अगर बच्चे सुनेंगे नहीं तो समझेंगे नहीं। इस खेल में बच्चे समझ जाते हैं कि अगर शेर उड़ कहेंगे तो शेर नहीं उड़ पाएगा, बच्चे वहाँ अपनी गतिविधि रोक देते हैं और अपनी प्रतिक्रिया देते हैं। 'हरा समन्दर गोपी चन्दर', 'बोल मेरी मछली कितना पानी', इसमें लम्बाई का पता चलता है, बच्चे पानी दिखाते हैं कि इतना पानी है। पहले बच्चे पैर के पास दिखाते हैं, फिर कमर के पास दिखाते हैं एवं फिर और ज़्यादा पानी दिखाकर डूबने का जो भाव उनमें पैदा होता है तो कहीं-न-कहीं उनको लम्बाई का या अनुपात का पता चलता है। ऐसी ही कई कविताएँ हैं और कविता एवं ये खेल बच्चों के सुनने, समझने के साथ-साथ उनको गाने, उनमें आए शब्दों को पहचानने और नए शब्दों को अपने शब्द भण्डार में शामिल करने के अवसर प्रदान करते हैं। और यह बुनियादी साक्षरता के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है।

> खेल–खेल में बच्चों को बुनियादी साक्षरता देना मुझे बहुत ही सरल एवं सहज लगा और इसके साथ ही लिखने पर भी मैंने काम करना जारी रखा। मैंने बच्चों के लिए एक कोना रखा, गोदा–गादी का। वहाँ बच्चे अपने मन से जाकर कुछ भी कर सकते हैं, जैसे— चित्र बनाएँ, रेखा खींचें, आदि। इसमें पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों को मज़ा आता है क्योंकि हम ज़्यादातर उन्हें रनिंग श्यामपट्ट ही देते हैं।

खेल-खेल में बच्चों को बुनियादी साक्षरता देना मुझे बहुत ही सरल एवं सहज लगा और इसके साथ ही लिखने पर भी मैंने काम करना जारी रखा। मैंने बच्चों के लिए एक कोना रखा, गोदा-गादी का। वहाँ बच्चे अपने मन से जाकर कुछ भी कर सकते हैं, जैसे– चित्र बनाएँ, रेखा खींचें, आदि। इसमें पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों को मज़ा आता है क्योंकि हम ज़्यादातर उन्हें रनिंग श्यामपट्ट ही देते हैं। हालाँकि, वहाँ बच्चों को एकदम साफ़-सुथरे, ख़ाली ब्लैकबोर्ड पर नहीं लिखना है, उनको इसकी आज़ादी नहीं रहती है। इसलिए मैंने बच्चों को एक कोना दे दिया और उन्हें बोला कि 'आपकी जगह इतनी ही है, आपका ख़ाना इतना ही है'। बच्चों को वहाँ गोदा-गादी करने के अवसर प्रदान करने की वजह से एक तरह से उनको लिखने की स्वतंत्रता मिल जाती है। बच्चे जब स्कूल आते हैं तब हम उनको कहते हैं कि अ से अः लिखो। इस वजह से उनको परेशानी हो जाती है कि किस तरह से हमारे शिक्षक हमें आन्तरिक प्रक्रिया में धकेल रहे हैं। मैंने जब उनको लिखने

की आज़ादी दी और इस प्रक्रिया की शुरुआत की तो लिखने के प्रति कुछ बच्चों की जिज्ञासा बढ़ गई और बाद में उन्हें लिखना अच्छा लगने लगा। इसी प्रकार, हमने स्कूल में कुछ बालू रखी जिसपर बच्चे हाथों से लकीर खींचते हैं। अपने मन से कुछ लिखने की कोशिश करते हैं। वहाँ पर पैर रखकर छोटे-छोटे घरौंदे और आकृतियाँ बनाते हैं। पंजे को बालू में रखकर बताते हैं कि देखो मेरा पंजा बड़ा है या मेरा पंजा छोटा है। यह हुई बुनियादी साक्षरता और खेल-खेल में शिक्षा की बात। हमारी सरकार भी यही चाह रही है कि खेल-खेल में बच्चा किस प्रकार सीखे। खिलौनों से किस प्रकार पढ़ाई कराई जाए। मैंने इस प्रकार से काम किया।

इसी प्रकार मैंने काग़ज़ों से काम किया, जैसे— काग़ज़ों से नाव बनाना, जहाज़, कपड़े बनाना आदि। जब बच्चों ने इसे देखा तो उन्होंने भी काग़ज़ मोड़कर कुछ बनाने की कोशिश की।

किस प्रकार से आधा होगा, फिर चौथाई होगा तो बच्चों को भी अच्छा लगा और साथ ही इसमें गणितीय ज्ञान भी हुआ। एक चीज़ और बताना चाहूँगा। मैं दूसरी और तीसरी कक्षा के बच्चों से काम करवा रहा था और मैंने सबको कविता लिखने के लिए प्रेरित किया। एक बच्चे ने आसपास की चीज़ों को देखकर लिखा :

'मैंने देखा आज, आसमान में उड़ता बाज़,

मस्ती में वह उड़ रहा था, पर उसके बाद बोला कुछ ढूँढ़ रहा था'।

यहाँ पर हमने देखा कि हम समझते हैं कि एक छोटा-सा बच्चा क्या कर सकता है। कविता की दो लाइन अगर बोलने के लिए बोल दें तो वह मुश्किल हो जाता है लेकिन उसने जो लिखा और अपने आसपास देखा तो महसूस नहीं हुआ कि ये बच्चा इतना लिख सकता है। उसने देखा कि बाज़ मस्ती में उड़ रहा है लेकिन फिर बोला, कि नहीं वो कुछ ढूँढ़ रहा है। ये मुझे बहुत अच्छा लगा।

हृदयकान्त दीवान : तीन-चार चीज़ें जो आपने बहुत ही महत्त्वपूर्ण कही हैं, मैं उन्हें रेखांकित कर देता हूँ। पहली बात, बच्चों के बारे में बहुत सारी धारणाएँ हैं। वो धारणाएँ पहले तो बहुत व्यापक और स्पष्ट तौर पर थीं, जैसे— बच्चे माटी का लौंदा होते हैं, ख़ाली स्लेट होते हैं। ये धारणाएँ अभी उस तरह की तो नहीं हैं लेकिन फिर भी कहीं-न-कहीं हमारे मन में बच्चों के प्रति जो भावना है उसमें उनके ज्ञान की, समझ की, जिज्ञासा की उतनी इज़्ज़त नहीं है जितनी होनी चाहिए। आपने ये भी बात कही कि बच्चे को अगर पहल करने का मौक़ा मिले तो वे बहुत सारी ऐसी चीज़ें करते हैं जो हम लोगों को लगता है कि वो नहीं कर सकते हैं, चाहे कविता बनाना हो या अपने से छोटे बच्चों के लिए खेल बनाना। कक्षा में भी अगर कोई ऐसी जगह हो जहाँ बच्चे आकर अपने विचार गोदा-गोदी के रूप में शुरू कर सकें तो उससे उनका लिखने के प्रति आत्मविश्वास और क्षमता बढ़ती है। आपने बहुत सारे उदाहरण दिए जो शिक्षक कक्षा में बच्चों के साथ कर सकते हैं, उसमें गणित के भी उदाहरण थे और भाषा के भी।

- संवाद का यह पहला भाग है और इसमें बहुत-सी महत्त्वपूर्ण बातें रखी गई हैं।
- पाठकों से आग्रह है कि आप इस विषय पर हमें छोटी-छोटी टिप्पणी या अतिरिक्त बिन्दु हमें भेजें। इनमें से प्रासंगिक व सार्थक बिन्दुओं को हम अगले अंक में शामिल करेंगे।



पाठकों के विचार

बहुत ही सुचिन्तित और व्यवस्थित पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। हिन्दी भाषा में इस तरह की शोध-आधारित पत्रिकाओं का अभाव है। इस पत्रिका की सबसे अच्छी बात यह लगी कि शोध करने वालों में सिर्फ़ विश्वविद्यालय की दीवारों में बन्द लोग न होकर स्कूलों के शिक्षक और बच्चे भी शामिल हैं। इससे चिन्तन और शोध का दायरा बढ़ा है। सन्दर्भों में एकरूपता का अभाव है और कई लेखों में और बेहतर सम्पादन की भी ज़रूरत है। बाक़ी एक अच्छी पत्रिका के लिए बधाई।

– संदीप, शिक्षक, जयपुर

अंक 7, मार्च 2021



पत्रिका में लेखकों ने शिक्षकों को करके सीखने और बच्चों को खोजी प्रवृत्ति की ओर अग्रसर किया है। इससे विद्यालय में उपलब्ध वस्तुओं की सहज सुलभता एवं व्यवस्थाओं का आगाज़ हुआ है, साथ ही भाषाई खेलों के विविध माध्यम से विभिन्न वाक्यों का प्रयोग करते हुए बच्चों में एक्सपेक्टेंसी तथा सुधारों पर ज़ोर दिया गया है। इसमें साथी बच्चों द्वारा एक दूसरे से सीखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला है एवं बच्चों को पर्यावरण के नज़दीक लाया गया है। ऑनलाइन टीचिंग के विभिन्न पहलुओं पर बात की गई है और जेंडर सेंसिटिविटी के लिए भी पर्याप्त विवरण पत्रिका में उपलब्ध है जिससे बच्चों में सहजता के भाव को विकसित किया जा सकता है। विद्यालय परिसर में बच्चों को किसी भी प्रकार के शोषण से भयमुक्त रखे जाने पर ज़ोर दिया गया है एवं विद्यालय को एक घर जैसा स्वरूप दिया गया है। शिक्षकों को भी अपनी ज़िम्मेदारी के प्रति पर्याप्त रूप से जागरूक होने की आवश्यकता पर बल देते हुए कर्तव्यारूढ़ रहने को ज़िम्मेदारी बताया गया है और मूल्यांकन के विभिन्न पक्षों पर ज़ोर देकर समझाया गया है, साथ ही भारतीय संविधान के परिप्रेक्ष्य और मूल्य को जीवन्त किया गया है।

– धरम पाल 'ज्योतिष' अध्यापक, राजकीय माध्यमिक विद्यालय, अरावडी जमवा, रामगढ़ जयपुर

एक शिक्षक होने के नाते इस अंक को पढ़कर मुझे बहुत सारी चीज़ें जानने, समझने और सीखने को मिलीं। इस अंक में सभी लेखकों ने बहुत अच्छा लिखा और अपने अनुभव साझा किए, चाहे वह शिक्षणशास्त्र पर हो, कक्षा के अनुभव हों, विमर्श हो या संवाद। सभी लेख ज्ञानवर्धक हैं।

कुसुमलताजी ने 'भाषा शिक्षण और भाषाई खेल' में खेल गतिविधियों के माध्यम से बड़े ही रोचक ढंग से बच्चों को भाषा सिखाई। बहुत प्रभावशाली लेख।

हुमा नाज़ सिद्दीकी का शिक्षणशास्त्र पर लिखा लेख 'विज्ञान शिक्षण करके सीखना और शिक्षक की भूमिका' ने मुझे बहुत प्रभावित किया। इस लेख में विज्ञान दिवस पर शिक्षकों का बच्चों के साथ उनकी पाठ्यपुस्तकों के टॉपिक को लेकर शोध प्रस्तुत किया गया है। शोध के लिए बच्चों

ने आसपास का अवलोकन किया। लोगों से चर्चा की, नमूने इकट्ठे, किए आँकड़ों का विश्लेषण किया, इसके लिए वे मार्केट, अस्पताल, आँगनवाड़ी, खेतों, नर्सरी, आदि में गए और समुदाय से मिले। सभी जगह गए ख़ुद ऑब्ज़रवेशन किया जिससे उनका आत्मविश्वास बढ़ा। समुदाय के लोगों को भी बच्चों की सक्रियता देखकर अच्छा लगा। बच्चों ने कार्य किया और शिक्षिका ने मार्गदर्शक की भूमिका निभाई। इस लेख को पढ़कर मुझे भी प्रेरणा मिली कि मैं भी अपने विद्यालय में इस तरह के कार्य करवाऊँ।

रंजनाजी ने समाज में जेंडर भेद के कारण बालिकाओं के साथ हो रहे भेदभाव को अच्छे-से उकेरा।

शिशिर चंद्र नायक के लेख से जाना कि बच्चों के साथ कैसे कार्य करें। कक्षा अनुभव, शिक्षणशास्त्र, पुस्तक चर्चा, साक्षात्कार, संवाद आदि सभी बहुत ही अच्छे ढंग से प्रस्तुत किए गए लेख हैं।

– सुमन चौधरी, शिक्षक, टीबा श्योपुर सांगानेर शहर, जयपुर

शैक्षिक जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर लिखे हुए अनुभवशील लेख को पढ़ने का अवसर देने के लिए *पाठशाला भीतर और बाहर* की पूरी टीम का आभार। शिक्षणशास्त्र के अन्तर्गत प्रकाशित और शिक्षिका कुसुमलता द्वारा लिखित 'भाषा शिक्षण और भाषाई खेल' यह समझने में मददगार है कि कैसे खेल भाषा शिक्षण का अभिन्न अंग हैं।

बलवंत सिंह कालाकोटी द्वारा लिखित और कक्षा अनुभव के अन्तर्गत प्रकाशित लेख 'शिक्षण-अधिगम सामग्री की समझ एवं उसका उपयोग' शिक्षण प्रक्रिया में इस्तेमाल किए जाने वाले संसाधनों की समझ को बयाँ करता है। आपने जिस टीएलएम की चर्चा की है वह हमारे परिवेश में आसानी से उपलब्ध हो जाता है और बच्चों को व्यवहारिक जीवन से जोड़ता है। यह लेख गणित को कठिन विषय के रूप में समझे जाने की पारम्परिक धारणा का खण्डन करता है।

बाल साहित्य में अपार क्षमताएँ और ढेरों सम्भावनाएँ निहित हैं– केवल भाषिक कौशलों की दृष्टि से नहीं बल्कि नज़रिए को विस्तार देने की दृष्टि से भी, केवल उत्साही पाठक बनाने के लिए नहीं अपितु भाषा के सटीक इस्तेमाल, सही भाव, सम्पूर्ण व्यक्तित्व को निखारने, गढ़ने और सम्प्रेषण की दृष्टि से भी।

'बाल साहित्य के बिना अधूरी है बच्चों की शिक्षा' यह संवाद विभिन्न नज़रियों से बाल साहित्य और उसके विविध इस्तेमाल को समझने में मदद करता है। विशेषकर लॉकडाउन से उपजी परिस्थिति में पढ़ने-लिखने की शुरुआत करने में यह उपयोगी व बहुत ही महत्त्वपूर्ण संसाधन के रूप में दिखाई देता है।

– अवनीश कुमार मिश्र, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, टिहरी गढ़वाल

अंक 6, दिसम्बर 2020



खेल हमें गीतों में भी देखने को मिलते हैं। इसके साथ ही भाषाई पृष्ठभूमि का पुट भी देखने को मिलता है जिसमें अकसर बच्चों को सीखे गए गीतों को बार-बार केवल आनन्द के लिए दोहराते देखा जाता है। ये बात तो जगज़ाहिर है कि बच्चों को गीत बहुत पसन्द होते हैं और ये हम अपने बचपन में भी महसूस कर चुके हैं। खेल गीत बाल साहित्य का हिस्सा भी हैं। लेकिन हम देखते हैं कि ये खेल गीत बच्चों के खेल के स्थान और खेलने तक ही सीमित

होते हैं जिन्हें बच्चे सहज रूप से सीख लेते हैं लेकिन कक्षा में ऐसे गीतों को शायद ही स्थान दिया जाता है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि इन गीतों में प्रयोग हुए शब्द शिक्षकों को भाषा शिक्षण के लिए अनुपयुक्त या अशिष्ट लगते हैं, लेकिन बच्चों को शब्दों से खेल और तुकबन्दी मज़ेदार लगती है।

शारदा कुमारी ने इस लेख में बताया है कि इन खेल गीतों को सिर्फ़ संस्कृति और सामूहिकता का प्रतीक ही नहीं, अपितु बच्चों के सामाजिक, संवेगात्मक और भाषिक विकास के लिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण माना गया है। सुर, लय व ताल के साथ गाई जाने वाली इन तुकबन्दियों में बच्चों ने कभी अर्थ ढूँढ़ने की कोशिश की हो ऐसा किसी भी समाज के इतिहास में नहीं हुआ होगा, फिर भी बिना प्रयास के कण्ठस्थ कर लेना और पूरे जोश व आनन्द के साथ गाना, यह हर जगह देखने को मिल जाएगा।

मुझे इस लेख का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग यही लगा कि किस प्रकार शारदा कुमारी ने खेल गीतों को भाषा विकास में महत्त्वपूर्ण समझते हुए पढ़ने-लिखने की प्रक्रिया के साथ जोड़ा। खेल गीतों को लेकर जो आम धारणा रही है कि इन्हें कक्षा में स्थान नहीं दिया जाता है। ऐसा ही कुछ अनुभव इस लेख में देखा जा सकता है जब शिक्षिका ने बच्चों को उनके खेल गीत आमलेट... को लिखने की बात कही तो बच्चों में सन्नाटा छा गया और फिर किसी एक बच्चे ने कहा कि ये भी कोई लिखने की बात है! इन बातों से समझ आता है कि बच्चों को सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में शामिल करने से पहले एक शिक्षक द्वारा उन्हें यह विश्वास दिलाना ज़रूरी है कि उनकी किसी भी प्रकार की बात, सवाल और उनके विचार महत्त्वपूर्ण हैं जिसके लिए शिक्षक को उन्हें सुनना चाहिए और प्रतिक्रिया देनी चाहिए। साथ ही बच्चे भी आकलन करते हैं कि सिखाने वाला उन्हें वास्तव में महत्त्व दे रहा है या नहीं।

जब भी पढ़ना सिखाने की बात होती है तो एक सवाल जो हमारे मन में आता है कि पढ़ने की शुरुआत कैसे हो, क्या सामग्री प्रयोग करें और पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया कैसी हो? इन सभी प्रश्नों का जवाब यह लेख सुझाता है।

– सपना, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, नैनीताल

मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट के लिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, प्लॉट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, E-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039 की ओर से प्रकाशित एवं गणेश ग्राफ़िक्स, 26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन-1 भोपाल द्वारा मुद्रित।

सम्पादक : गुरबचन सिंह

लेखकों से आग्रह

पाठकों से प्राप्त सुझाव के आधार पर **पाठशाला भीतर और बाहर** में छपने वाले लेखों की प्रकृति, स्वरूप और प्रस्तुति में कुछ परिवर्तन किए गए हैं, जिसकी झलक आपको इस आठवें अंक में भी दिखाई देगी।

प्रयास है कि पत्रिका ज़मीनी स्तर पर काम कर रहे साथियों के लिए अपने अनुभवों को दर्ज करने, उनको विस्तार देने और गहराई देने के लिए एक उपयुक्त मंच बने और साथ ही इन अनुभवों को साझा करने का भी। इसी तरह यह ज़मीनी स्तर पर होने वाले कार्य की दृष्टि से अर्थपूर्ण व कार्य में मददगार भी बन पाएगी। और व्यापक पाठक वर्ग सहित आप व हमारे शिक्षक साथी इसे पढ़ेंगे और इसका अधिकाधिक उपयोग कर पाएँगे।

आपसे आग्रह है कि आप अनुभवों को दर्ज कर पत्रिका में छपने के लिए भेजें। आप स्कूल में, कक्षा में, और अलग–अलग मंचों पर शिक्षकों के साथ किए गए काम के अनुभवों को भेज सकते हैं। आपके साथी शिक्षक भी उनके द्वारा किए गए काम के अनुभवों को भेज सकते हैं। आपके द्वारा भेजे गए लेख बच्चों के सीखने–सिखाने से सम्बन्धित हो सकते हैं, जैसे– विभिन्न विषयों या प्रकरणों को सीखने–सिखाने के अनुभव या फिर शिक्षकों के साथ अन्तःक्रिया के नए तौर–तरीक़ों पर केन्द्रित या फिर किसी महत्त्वपूर्ण या उल्लेखनीय संवाद के बारे में, जो औरों के लिए भी उपयोगी हो। इनके और बहुत–से उदाहरण हो सकते हैं। जैसे– बच्चों के साथ काम के सन्दर्भ में गणित, विज्ञान, भाषा, सामाजिक अध्ययन, आदि किसी भी विषय की किसी भी कक्षा के अनुभव। ये अनुभव किसी अवधारणा को बच्चों को सिखाने, उन्हें गतिविधियाँ कराने के या उनके साथ खेल खेलने आदि के हो सकते हैं।

आप, स्कूल और शिक्षकों के साथ (इसमें एंगेज्ड शिक्षक भी शामिल हैं) जो काम कर रहे हैं, उससे सम्बन्धित लेख भी साझा कर सकते हैं। इसमें, आपने जो किया उसके साथ–साथ आप अपने काम में किस ख़ास तरह से आगे बढ़े और वह आपने क्या सोचकर किया, इस विचार को शामिल कर सकते हैं। इस दौरान आप अपने काम के सकारात्मक नतीजे व उसमें दिखने वाले गैप भी बताएँ, जैसे– बाल सभा या बाल शोध मेलों में कुछ परिवर्तन किया, तो वह क्या सोचकर किया, उसका क्या नतीजा निकला, और बेहतर करने के लिए उसमें और क्या–क्या किया जा सकता है, आदि? इसी तरह कक्षा में बच्चों को चित्रकला करवाने, कहानी सुनाने या किसी नाटक में भाग लिया, तो उसके बारे में क्या अनुभव रहे। गणित का एक उदाहरण, शिक्षण सामग्री जैसे– गिनमाला का प्रयोग करके गिनती सिखाने का हो सकता है। इसी तरह वालंटरी टीचर फ़ोरम, टीचर लर्निंग सेंटर, समर–विंटर कैम्प के शैक्षिक प्रयासों आदि के बारे में भी मननशील लेख हो सकते हैं। ये लेख पाठक को यह समझने में मदद करें कि उनमें क्या प्रयास था, किस परिस्थिति में उसे सोचा गया, कैसे किया गया, क्या हो पाया, क्या कमी रही, क्या सीखा और आगे के लिए आपके समूह के लिए और पाठकों के लिए उसके क्या निहितार्थ हैं?

इसी तरह, शिक्षकों के साथ प्रशिक्षण के दौरान, वालंटरी टीचर फ़ोरम में कार्य के दौरान, टीचर लर्निंग सेंटर पर हो रहे प्रयासों में, या उनके साथ सहकारी शिक्षण के दौरान हुए अनुभवों को मननशील व समालोचनात्मक दृष्टिकोण से लिखकर भेजें तो अच्छा रहेगा। इसी तरह बच्चों अथवा शिक्षकों के साथ कक्षा के बाहर हुए सार्थक अनुभव भी आप मननशील ढंग से लिख सकते हैं।

लेखों के विषय और विषयवस्तु ऐसी हो जिससे फ़ील्ड में कार्य करने वाले साथियों और शिक्षकों को वैचारिक मदद मिलती हो और उनका दक्षता संवर्धन होता हो। लेख ऐसे हों जो स्कूल व कक्षा में पढ़ने–पढ़ाने के तरीक़ों व अन्य गतिविधियों में शिक्षकों व फ़ाउण्डेशन के साथियों द्वारा इस्तेमाल किए जा सकें। साथ ही ऐसे लेख भी हों जिनसे विविध विषयों और उनमें बुनी अवधारणाओं को पढ़ाने में मदद मिले। लेखों की भाषा और विषय सामग्री अधिक–से–अधिक सदस्यों को आसानी से समझ में आने वाली हो।

यदि लेख में दिए गए किसी विवरण, चर्चा अथवा व्याख्या से सम्बन्धित किसी तर्क अथवा प्रमाण के लिए किसी पुस्तक, जरनल या वेब स्रोत से कोई सामग्री ली गई हो तो उसका उल्लेख ज़रूर करें। आप जो भी सन्दर्भ सामग्री लें उससे लेख को अर्थपूर्ण, तार्किक और गुणवत्तापूर्ण बनाने में मदद मिले।

इसके अलावा आप शिक्षा से सम्बन्धित किसी पुस्तक, फ़िल्म अथवा अन्य शिक्षण सामग्री के बारे में भी लिख सकते हैं, मसलन उनका परिचय, समीक्षा अथवा विश्लेषण।

आशा करते हैं कि आपके यह लेखकीय अनुभव ठोस एवं यथार्थपरक होंगे। उसमें कुछ ऐसा ज़रूर हो जो पाठक को रुचिपूर्ण व सार्थक लगे।

लेखकों को अपने लेखन के सन्दर्भ में किसी भी तरह के सहयोग की आवश्यकता महसूस होती है तो वे इसके लिए सम्पर्क कर सकते हैं। उन्हें सम्पादक मण्डल के सदस्यों द्वारा आवश्यक सहयोग और सुझाव दिए जाएँगे। उम्मीद है कि **पाठशाला भीतर और बाहर** का यह आठवाँ अंक आपको अच्छा लगेगा और आप इसके अगले अंकों के लिए ज़रूर लिखेंगे। पत्रिका के इस अंक पर आपकी टिप्पणियों व सुझावों का हमें हमेशा की तरह इन्तज़ार रहेगा।

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की अन्य पत्रिकाएँ

